साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित

अमृता

श्रीमती कमलदास के बंगला उपन्यास का हिन्दी अनुवाद

अनुवादक : गोपाल झा



मूल्य : पैंतीस रुपये (35.00)

प्रथम संस्करण 1989

AMRITA (Novel) By KAMAL DAS

एक

"चंचल चित। स्पंदित। अर्थात् कलकत्ता को देखकर मुझे कवि की एक पंक्ति याद आती है'''प्राण जागृत हो उठा है।"

"रहने दो, रहने दो! काफी हो चुका रिण, तुम जिस हिसाब से कलकत्ता के प्रेम-पाश में बंध चुकी हो उसके सामने किसी भी मानवीय प्रेमी की ओर तुम्हारी नज़र नहीं जाएगी।"

"तुमने ठीक नहीं कहा सू! मैं कलकत्ता के हर मनुष्य से प्रेम करती हूं, केवल यह बात नहीं। यहां की हर चीज,यहां का आकाश,यहां की हवा, यहां की चिड़ियों के गीत, यहां तक कि इसकी हर वस्तु, चाहे वे अच्छी हों या बुरी, सबसे प्रेम करती हूं।"

आंखें तरेरते हुए अपनी सहेली की ओर घूमकर संगीता बोली, "यह तो अच्छी बात नहीं है, रिण! आखिरकार तुम्हें जेल में ही सड़कर मरना पड़ेगा।"

"मतलब ?"

"मतलब तो साफ है। भारतीय दंड विधान के अनुसार हृदय किसी एक को ही दान दिया जा सकता है। हां, एक के बाद दूसरे को देने में कोई गुनाह नहीं है।"

"अच्छा, यह बात है! तुमने तो मुझे चिंता में डाल दिया था।"

इसके साथ ही दोनों सहेलियां ठठाकर हंस पड़ीं।

रेड रोड होकर, गाड़ी दौड़ रही थी। संगीता ह्वील सम्भाले थी। बगल में रिण थी।

दोनों के बॉब-कट शैंपू किए रेशमी बाल मधुर सुवास फैलाते हुए हवा में उड़ रहे थे।

पीछे यदि कोई और रहता तो उसका चित्त अवश्य ही चंचल हो

उठता, अथवा आवेश में आकर वह मन्त्र-मुग्ध हो जाता।

पर वैसी दुर्भावना नहीं थी, क्योंकि पीछे बैठा हुआ व्यक्ति इन सबों से परे था। साक्षात् साधु पुरुष। इसीलिए साधु कहा। पुरुष तो वह था ही। अगर साधु न कहूं तो क्या कहूं? इतना सब होते हुए भी उसमें थोड़ी भी चंचलता नहीं थी।

अपनी छोटी-छोटी आंखों से वह स्पेनियल कुत्ता सूची चारा ओर देखने में व्यस्त था। इन बच्चों की बातों पर ध्यान देने,की फुरसत उसे नहीं थी।

गाड़ी अचानक रुक गई। एक जोरदार ब्रेक लगाकर गाड़ी रोकनी पड़ी।

"क्या हुआ, सू ?"

"सामने की ओर अपने प्यारे प्राणवन्त कलकत्ते को देखो। ट्रैफिक की रोशनी खराब हो गई है। चूंकि सभी जल्दी में हैं, इसलिए कोई रुक नहीं पाता। हर व्यक्ति आगे बढ रहा है। एक के बाद दूसरी गाड़ियों की भीड़ लग गई है। अब सम्भालो इस धक्के को।"

"तुम इतना घबड़ाती क्यों हो? मुझे तो काफी अच्छा लग रहा है। सभी हॉर्न बजा रहे हैं, यद्यपि इसकी जरूरत नहीं है। तरह-तरह की आवाज के हॉर्न। क्या तुम्हें आर्केस्ट्रा-सा अनुभव नहीं हो रहा है।

"छोड़ो, रिण! मुझे यह सब अच्छा नहीं लगता। तुम्हें हर चीज में बचपन सूझता है। हम लोग सिनेमा जा रही हैं। अब क्या होगा? मालूम नहीं, कब पहुंच पाएंगी।"

"जानती हो सू, पांच वर्षों तक पेरिस में रहकर देखते-देखते मन बोझिल हो चुका है। अरे? तुम तो गुस्से से लाल हो गई हो। घबड़ाओ नहीं, मैं कोई इंतजाम करती हूं।"

यह कहते हुए गाड़ी का दरवाजा खोलकर रिण राव एक ही छलांग में गाड़ी से बाहर कूद पड़ी। वह स्लैक्स और एक चुस्त बुश-शर्ट पहने थी।

"अरे, तुम कहां चली?"

"ट्रैफिक कंट्रोल करने।" संगीता कुछ कहे इसके पहले ही उसने देखा कि उसकी सहेली उस भीड़ में खड़ी होकर नियमित ट्रैफिक पुलिस की

तरह हाथ पैर नचाते हुए लोगो को आदेश दे रही है।

यहां के लडके यदा-कदा ऐसी अवस्था में ट्रैफिक पुलिस का काम सम्भालते हैं। मगर लडकियां ?

इसीलिए कोई-कोई उसकी बात सुन भी लेते और कोई नही भी सुनते। कोई यह तमाशा देखने के ख्याल से भीड बढाने की कोशिश करते।

संगीता चक्कर में पड़ गई। वह क्या करे। रिण को वह अच्छी तरह पहचानती है। वह वही करेगी जो एक बार ठान लेती है। उसे वहां से हटाया नही जा सकता।

आस-पास पुलिस का कही पता नही था। मूजी गला फाड़कर भूंकने लगा। गाडी से कूदने की कोशिश में है। हठात् एक ओर उसकी नजर गई। भीड़ को ठेलते हुए एक लडका दृढ़ कदमों से रिण की ओर बढ़ रहा है। उसका कोमल चेहरा बंगाली-सा था, लेकिन चाल-ढाल अबगाली की तरह था, यह साफ जाहिर होता था।

वह साफ बंगला बोल रहा था, "आप लोग उनकी बात सुन नही रहे हैं। पता है, वे कौन है ? वे पुलिस अधिकारी हैं। वे अभी ड्यूटी पर नही हैं, इसीलिए साधारण पोशाक में है। अगर वे आपकी गाड़ी का नम्बर नोट कर ले तो आप सकट में पड जाएंगे। जाने दें, आप जहा जा रही हैं जाएं। जब तक पुलिस नही आ जाती तब तक मैं यही रहता हूं।"

वह लडका ट्रैफिक कंट्रोल करने लगा। रिण धीरे-धीरे चलकर अपनी गाड़ी मे आ बैठी।

"जान बची। तुमने तो मुझे चिंता में डाल दिया था। तुम भूल जाती हो यह पेरिस नही, कलकत्ता है।"

रिण ने कोई जवाब नही दिया। गाड़ी सिनेमा घर की ओर दौड़ने लगी।

"क्यों जी, क्या हुआ ? तुमने तो एकदम चुप्पी ही साध ली, रिण ! वह लडका कौन था ?"

"मुझे मालूम नही।"

"उसका नाम नही पूछा ?"

"नही।"

"आखिर क्यों ? अच्छा लड़का था। फिर कैसे मुलाकात होगी ?"

"अगर लिखा होगा तो जरूर मुलाकात होगी।"

मूल चित्र आरम्भ ही हुआ था। उस अंधकार के बीच चोर-बत्ती की सहायता लेकर तथा बैठे हुए लोगों की बद्दुआ लेकर वे अपनी-अपनी जगह पर बैठ गईं।

"कुछ भी हो, आखिर हम लोग पहुंच ही गए। मुझे तो ऐसा लग रहा था कि आज हम लोग मंजिल तक पहुंच नहीं पाएंगी। दोनों ही टिकटें नष्ट हो जाएंगी। साथ ही साथ नष्ट होगी आज की सुनहली शाम।"

"सू, एक बात कहूं ? तुम ऐसा कह सकती हो। समझने की कोशिश करो ? कहा हो और मामला क्या है, यह न सोचकर बकती ही जा रही हो। अपने भाग्य में जुटाई हो भोलानाथ—बोधिसत्व, वरना न मालूम क्या होता ?"

"मुझे क्या गरज पड़ी थी जुटाने की, वह तो चार जनों ने मिलकर जुटा दिया। नहीं, दो जनों ने मिलकर जुटाया है।"

उसी समय सामने से एक लड़के ने कहा, "प्लीज !"

"सॉरी," कहकर तत्काल दोनों चुप हो गईं और सिनेमा की ओर ध्यान लगाया।

सिनेमा हास्य-रस का था। नई शादी के बाद जीवन में नवीनता लाने के लिए लॉग-लॉग ट्रेलर पर हनीमून मनाने जा रहे हैं। उसी में खाना-पीना, रसोई बनाना, सोना सभी शामिल है। इसी बहाने देश-दर्शन भी होगा। अनूठी उनकी कार्य-सूची थी।

हर अनूठी वस्तु अनूठी होती है। नमक लाने तक बासी भात खत्म वाली बात चरितार्थ होती है। दो-दो अनाड़ियों का घर-संसार जो है।

"नमक तो आया ही नहीं, डीम-पोच कैसे खाया जाए ?"

ट्रेलर के नीचे लेटकर वॉब न मालूम क्या कर रहा था। सिर निकालकर बोला, "ठीक है, डार्लिंग, मक्खन-रोटी के साथ खाकर ही काम चला लेंगे।"

ठक-ठक-ठक-ठक।

"ओह काफी भूख लगी है। पहले खा ही लूं।" कहते हुए बॉब उठा और आकर देखा कि लूसिल फूट-फूटकर रो रही है।

"क्या हुआ ? हाथ में छाले पड़ गए क्या ?"

"उसी समय तुमसे कहा था कि राव बन्द टिन लेते चलो। काटेंगे और खाएंगे। मगर तुमने हठ ठान लिया। नहीं, रसोई की आदत डालनी पड़ेगी। घर तो बसाना ही है।"

लूसिल से कोई उत्तर न पाकर बॉब चिंता में पड़ गया। क्या करे ? वह तो केवल रोए ही जा रही है।

"हो क्या गया, बताओगी तो ? भूख के मारे पेट में चूहे कूद रहे हैं।"

"रोटी नहीं है, केवल मक्खन है।"

"अब क्या होगा ? सौदा तो तुम्हीं ले आई थी।"

"वाह जी ! अब तक तो मैं मां-बाप के नजदीक अथवा किसी होस्टल में रहती थी।"

"इसीलिए तो कहा था कि इन झमेलों की कोई जरूरत नहीं, किसी होटल में रह लेंगे। मुसीबत की जड़ तुम्हीं हो। प्रैक्टिस करोगी। लो, अब रोओ, प्रैक्टिस के नाम पर।"

"एँ ? दो दिन गुजरते न गुजरते तुमने मुझे डाटना शुरू कर दिया ? तुम तो बोले थे कि जीवन-भर मुझे बात न कहोगे। इसीलिए तो शादी के लिए हामी भरी थी। और अब क्या होगा, दो ही दिन में…।"

लूसिल जोर-जोर से आंखें पोंछने लगी।

बॉब इसके लिए अप्रस्तुत था। इसलिए हकलाते हुए बोला, "बात मैंने तुमसे नहीं कही थी, खुद अपने से कहा था। मुझे ही बाजार से सब कुछ खरीदकर लाना चाहिए था। मगर बोझ तुम्हारे सिर पर सौंप कर मैं ट्रेलर में मशगूल रहा। डार्लिंग, अपराध तो मेरा है।" आखिरकार बिस्कुट में मक्खन मिलाकर और नमकहीन अंडा खाकर उस समय के लिए उन्होंने अपनी भूख शांत की।

नायक-नायिका की मुसीबत देखकर पूरा हॉल हंसी के ठहाके से गूज उठा। इसी का नाम दुनिया है। किसी के लिए पौष मास तो किसी के लिए सर्वनाश, कहीं धूप, तो कहीं छांव। इधर लूसिल और बॉब आधे-पेट

खाकर हसते हैं और उधर सभी हसते-हसते लोट-पोट हो रहे हैं। सौभाग्य से वे परदे पर हैं, वरना क्या होता मालूम नही।

इधर हसते-हसते सगीता और रिण की आतें फूल रही हैं।

"म्, हसते-हसते मेरे पेट मे बल पड गया।"

"मेरे पेट मे भी"···सगीता बोली।

"किसे मालूम था कि इतनी मुसीबत होगी, वरना साथ मे सेरीडॉन ले आती।" ऐसी परिस्थिति आएगी इसका आभास सिनेमा वालों को पहले से ही था, इसलिए रस्सी खीची गई। पूरा हॉल रोशनी से जगमगा उठा। विश्राम का समय था।

दोनो सहेली सूज़ी की खोज-खबर लेने हॉल से बाहर निकली। कुछ अरसे से ऐसा ही नियम चला आ रहा है। सगीता जहा कही जाती। सूज़ी साथ रहता। उसे थोडा बहुत-घुमा-फिराकर, कुछ खिलाकर और खुद कुछ खाकर वे अपनी-अपनी जगह पर आ बैठी।

सूज़ो अपनी जगह पर, अर्थात् गाडी मे। सू और रिण सिनेमा घर मे।

सिनेमा खत्म होने पर जब सभी बाहर निकले तो सबो के चेहरो पर हसी थी। अल्प समय के लिए ही सही, उन्हे ऐसा लगा मानो दुनिया दुख-हीन है।

"ऐसा ही चलचित्र देखने मे अच्छा लगता है। है न ?"

"तुमने ठीक ही कहा। मैं तो चुन-चुनकर ऐसा ही चलचित्र देखने की कोशिश करती हूं। अशाति हमेशा थी, है और रहेगी। इस हालत मे क्यो न उसे थोडी देर के लिए भुलाया जाए।" गाडी पर चढ़ते-चढते रिण बोली, "तुम्हे किस चीज का दुःख है ?"

"कुछ नही ?"

"गोली मारो इन बातो को। हंसी आ रही है। सभी सीन याद आ रहे है। ही-ही-ही।"

"ठहरो ! शायद मुझे हसी नही आती ? तुम ह्वील पर हो, कोई दुर्घटना हो सकती है।"

"अच्छी बात है, मैं मौन साध लेती हू।"

सूज़ी इनकी हरकतें देखकर दाएं-बाएं गरदन हिला रहा था। अब वह शांत होकर उदास नजरों से बाहर देखने लगा।

दो

रामकृष्ण आश्रम के महाराज प्रातः भ्रमण के लिए निकले हैं।

इसे वास्तव में प्रातःभ्रमण नहीं कहा जा सकता। यह तो वह मोहक समय है जब रुपहली रजनी अपनी नजरों के सामने से पूरे तौर पर घूंघट भी नहीं हटाती है। यह अन्धकार और प्रकाश की मिलन घड़ी होती है। इधर घूंघट की ओट में वह सलज्ज दृष्टिपात करती है और उधर इसी बीच दिन की रोशनी अपनी दुहिता के चेहरे से आवरण हटाने के लिए अधीर है।

प्रकाश और अंधकार के मिलन का यह मधुर क्षण स्वामी जी का अपना प्रिय क्षण है। इसी समय वे ध्यान लगाते हैं अथवा गहरी स्निग्ध और नीरवता के बीच अपने आपको विलीन कर देने के लिए बाहर निकल पड़ते हैं।

यही उनका अपना निजी समय है।

दिन भर तरह-तरह की झंझटों का अंत नहीं। इतना बड़ा इन्स्टीट्यूशन चलाना कोई हंसी खेल नहीं है। तरह-तरह की समस्याएं हैं। अच्छी-खराब, सुन्दर-असुन्दर सभी। इसके अलावा भक्तों की जमघट लगी ही रहती है। नर-नारायण।

श्रीरामकृष्ण ने भी यही कहा है। स्वामी विवेकानन्द भी इसी बात का उच्चारण करते—'जीवे दया करे जेई जन, सेई जन सेवीछे ईश्वर' अर्थात् जो जीवों पर दया करता है, वही ईश्वर की सेवा करता है।

इसीलिए किसी को विमुख नहीं कर पाते हैं। उन्हें भी तो खुद का पाथेय चाहिए। इसीलिए महाराज ने यही समय अपने लिए चुन लिया है। रास्ता सुनसान है। गेही नींद में विभोर है।

इस सुनसान मे भी वे एक निर्जन रास्ते के किनारे से चले जा रहे है। यह रास्ता उनका बड़ा प्रिय है।

अगर कहा जाय तो वे रोज ही प्रकाश और अंधकार की इस संधि बेला मे इसी रास्ते पर टहलने निकलते हैं।

मन आनन्द विभोर है। सभी चीजें निजी मालूम होती हैं। अपने आप को इन सबों के बीच विलीन कर देने की इच्छा होती है। सबो के बीच, विश्व चराचर के बीच।

अचानक पैर से कुछ छू गया। रुक गए। देखा सड़क के किनारे एक शिशु पड़ा है। कपड़े मे अच्छी तरह लपेट कर उसे कोई वहां फेंक गया है। उन्होंने गौर से देखा। इधर-उधर नज़र दौड़ाई। मगर आस-पास कोई नहीं था।

उन्होंने महसूस किया, इसे जो भी रख गया है, काफी यत्न और स्नेह के साथ रख गया है। सुलाकर, कपड़े से ढंककर। बगल में एक छोटी-सी पोटली है। उसमें कुछ कपड़े, एक कटोरी, एक सीपी और एक छोटा-सा दूध का टीन रखा है।

बच्चा कितने दिनों का है वे अन्दाज नहीं लगा सके। पन्द्रह दिन का भी हो सकता है, एक महीने का भी हो सकता है।

उन्होंने मन मे सोचा, शायद मेरे हवाले करने के ख्याल से ही इस समय यहां रख गया है। यह साफ ज़ाहिर था कि उपायहीन होकर ही यहां फेंक गया है। काफी यत्न के साथ। जहा तक सम्भव हो सका है, हर वस्तु संभाल कर।

किसी को देख पाने की आशा से उन्होंने फिर चारों ओर देखा। नही। किसी का नामोनिशान नही है। इधर दिन की रोशनी धीरे-धीरे रात को पीछे धकेल कर आगे बढ़ रही है। कुछ करना ही होगा। आश्रम से जाकर इसे अनाथालय भेजने का इंतजाम करना होगा। पर उस देव शिशु के मुह की ओर देखकर उन्हे यह व्यवस्था जची नही।

फिर क्या किया जाय? साधारण नियमानुसार पुलिस को खबर देनी चाहिए। मगर ऐसा करने पर जो अभागिन मा इसे यहा फेंक गई है, उसका पता लगने पर उसे जीवन भर बदनामी उठानी पड़ेगी। मगर खोज नहीं

मिली तो इस निष्पाप शिशु को जीवन भर अवैध अनाथ शिशु का कलंक माथे पर रखकर जिंदा रहना पड़ेगा। हे प्रभु, मुझे बुद्धि दो, मुझे पथ दिखाओ।

उनकी प्रार्थना मानो उनके गुरु के कानों तक पहुंची। हठात् एक नाम उन्हें याद आया। मिसेज सारथी का नाम। उनकी ही शिष्या हैं। सच्चे अर्थों में उनकी शिष्या। एक छोटे-से मकान के एक फ्लैट में रहती हैं, शहर के बाहर। हर रोज़ उनके पास आती हैं। पति-पत्नी दोनों ही धर्म-भीरु हैं। दोनों ही उनके शिष्य हैं।

पति कुछ दिन पहले गुज़र चुके हैं।

आगे नाथ न पीछे पगहा, अर्थात् सचमुच अपना कहने वाला दोनों कुल में उनका कोई नहीं था। समय-असमय आश्रम से ही उनकी देख-भाल होती है। महाराज की बड़ी अनुगता हैं। अधेड़ उम्र की निःसंतान।

पति के जीवन-बीमा के रुपयों से जो आमदनी होती है, उसी से गुजारा हो जाता है। सीधा-सादा जीवन। इसके अलावा दिन-भर आश्रम में ही पड़ी रहती है। केवल रात को अपने आस्थान में लौट जाती हैं।

अचानक श्रीमती सारथी की बात उन्हें याद आई। पुत्र-पुत्री हीना। इसके अलावा उनकी भक्तिन। वे जो कुछ कहेंगे वही करेंगी।

बच्चे को उन्होंने गोद में उठाया। गाढ़ी नींद में है वह। बेचारी अपने भाग्य परिवर्तन की बात कुछ भी नही जान सकी। कितना बेसहारा है।

स्वामी जी मन-ही-मन सोचने लगे। ठीक इस देव शिशु की तरह अगर हम भी इसी प्रकार निर्भरशील हो सकते; तो वे भी ठीक इसी भांति हम लोगों की सबों से रक्षा करते।

हम साधारण मनुष्य ऐसा नही कर पाते, इसीलिए दुर्दिन और दुर्दशा भोगनी पड़ती है।

भोर को टैक्सी नही मिल सकती थी। जब वे ऐसा सोच ही रहे थे कि दूर से एक टैक्सी आती हुई उन्हें दिखी। तब तक स्वामी जी ने अपने मन में सब कुछ निश्चय कर लिया था। गाड़ी में बैठते ही चालक को श्रीमती सारथी का पता बताया।

कुछ देर बाद ही श्रीमती सारथी के घर की घंटी घनघनाने लगी। उसी समय शारदा देवी की नीद खुली थी। उठने की इच्छा रहते हुए भी अब तक बिछावन छोडा नही था। अकेली हैं। घर का सब काम अपने आप करती हैं।

सवेरे खाना बनाकर दिन-भर के लिए आश्रम चली जाती हैं। वहीं प्रसाद लेती हैं। थोडा बहुत काम भी करती हैं। प्रवचन सुनती हैं। महाराज जो कुछ फरमाते हैं, वही करती है। रात्र को अपने घर लौट आती हैं।

पति के मरने के बाद उनका यह रोजनामचा-सा हो गया था। बीमार पड़ने पर आश्रम के स्वामी जी ही उनकी देखभाल करते हैं।

"इतने सवेरे कौन घंटी बजाने लगा," अनायास उनके मुह से यह बात निकली।

दरवाजा खुलते ही दग रह गईं। खुद महाराज उसके दरवाजे पर हाजिर थे। खुशी से उनका मन थिरक उठा। वह उनके पैरों पर लुढक पड़ी। उनके हाथ मे क्या है, उस ओर ध्यान भी नही गया।

"शारदा, दरवाजा बंद कर लो। तुम्हारे साथ बहुत बातें करनी हैं।"

दरवाजा बद कर लौट आने के बाद शारदा देवी की नजर लड़की पर पडी।

"महाराज यह कौन है ? किसकी लड़की है ? कहा मिली ?"

"अगर यह सब मालूम ही रहता तो तुम्हारे पास दौड़ा क्यों आता ? मैं जो कुछ कहूं उसे तुम मानोगी ? कभी कोई इसे जान न पाए।"

"महाराज, मैं आपको अपना इष्ट मानती हू और मानूगी। मरते दम तक आपकी हर बात मुझे शिरोधार्य होगी।"

"अच्छी बात है ! फिर सुनो ! सवेरे टहलते वक्त मुझे रास्ते मे यह मिली है। आश्रम से जाने पर इसे अनाथालय भेजने की व्यवस्था होती। वहा ठीक ही रहती। फिर भी मन माया से भर गया। मन में सोचा, अगर इस निष्पाप शिशु को इसकी मा की गोद में दे पाता और वह इस शिशु को लेकर यदि सम्मान से जीवन-यापन कर पाती तो कितना अच्छा होता ? जानती हो शारदा, हमारे धर्म के अनुसार जो जन्म देती है, मा

कहलाती है, ठीक उसी तरह जो पालती है, वह भी मां कहलाती है।"

स्वामी जी कुछ देर चुप रहे। तब तक बच्चे के मुख की ओर देखने का मौका शारदा को मिला। निःसंतान मातृ हृदय में एक आलोडन हुआ। धीरे-धीरे उसने अपने दोनों हाथ महाराज की ओर बढ़ा दिए।

शिशु को उसकी गोद में सुलाकर स्वामी जी ने उसकी आंखों की ओर देखा—वे अश्रु-पूर्ण थीं। पूरे चेहरे पर मातृ-स्नेह की रेखा फैली हुई थी। उन्होंने धीरे-धीरे कहना शुरू किया, "शारदा, मैंने यही सोचा था। तुम्हारे लिए ही भगवान ने इसे मेरे हाथ भेजा है। मन लगाकर मेरी बात सुनो! इसे कभी यह नहीं बताया जाएगा कि यह परित्यक्ता और परिचयहीन है। केवल यही नहीं। हम दोनों के सिवा इस सत्य को कोई नहीं जान पाएगा। क्या तुम ऐसी व्यवस्था कर सकती हो, जिससे समाज की कोई हानि न होगी, कानूनी असुविधा न होगी, फिर भी यह निष्पाप शिशु स्वाभाविक रूप से स्वस्थ जीवन-यापन कर पाएगा?"

शारदा सोचने लगी।

स्वामीजी ने फिर कहा, "तुम्हारा मातृ-हृदय ही तुम्हें बताएगा कि ऐसी अवस्था में दुनिया में क्या करने से यह सम्भव हो सकता है।"

"इसे साथ लेकर मैं रेल से काफी दूर एक छोटी-सी जगह में चली जाऊंगी,जहां मुझे कोई पहचानता नहीं है। उसके दो दिन बाद वापस आकर सबों से कहूंगी कि मेरी दूर की एक विधवा सम्बन्धी काफी बीमार थी। तार देकर मुझे बुलाया था। इसीलिए मैं अचानक चली गई थी। मेरे जाने के बाद वह यह लड़की छोड़कर चल बसी।

"अगर किसी दिन इस बच्ची की मा पूरा सबूत देकर इसे ले जाना चाहेगी तो वह रास्ता भी खुला रहेगा। तब तक मेरी पदवी ही इसकी पदवी होगी और मैं आजीवन इस बात के लिए आपका कृतज्ञ रहूंगी कि आपकी कृपा से यह नि.संतानी आज से संतानवती हुई।"

"भगवान तुम्हारा मंगल करें। मैं हल्का अनुभव कर रहा हूं।" इतनी देर के बाद महाराज एक कुर्सी पर बैठे।

"तुम्हारे पास रुपया है?"

"मेरे पास जितना है, उसी से काम चल जाएगा।"

"फिर देर करने की जरूरत नहीं। नीचे टैक्सी खड़ा कर आया हूं। सबों के उठने के पहले ही निकल पड़ो।"

दरवाजे पर ताला लगाकर वे बाहर निकल आए।

भगवान की असीम अनुकम्पा है। उस समय भी शिशु गाढी नींद में था। टैक्सी स्टेशन की ओर चल पड़ी।

महाराज धीरे-धीरे आश्रम की ओर लौट पड़े।

तीन

संगीता बड़े घर की बेटी है।

जीवन में तकलीफ का सामना नहीं करना पड़ा है।

नामी बैरिस्टर की इकलौती बेटी है वह। दो भाई हैं—एक बड़ा और एक छोटा। शुरू से ही कलकत्ता निवासी। हां, छुट्टियों में मां-बाप के साथ पूरे भारत को देखने का मौका मिला है। भारत के बाहर भी हो आए हैं। पाश्चात्य देश भी उनके लिए अनजान नहीं हैं।

पाश्चात्य और भारतीय सभ्यता के मेल से उसका जीवन पूर्ण है। जब तक दादा-दादी जिन्दा रहे तब तक घर में होली और दुर्गापूजा मनाई गई। घर में एक ओर देवता भी रहते और दूसरी ओर बेयरा-बावर्ची से भी घर रौनक रहता। रोस्ट के साथ-साथ भाजी और चड़चड़ी का मेल गजब ढाता।

दो नावों पर पैर रखे मिस्टर और मिसेज चौधरी की जीवन-धारा आराम से गुजरती। इधर लड़के-लड़कियां भी एक ओर पूजा घर के सामने सिर झुकाते तो दूसरी ओर बेधड़क अंग्रेजी में बातचीत करते। इसी का नाम पूर्व और पश्चिम का समन्वय है।

दोनों ओर की खास-खास चीजें चुन लेने की चेष्टा चलती।

इस घर में बंगला भाषा की काफी आलोचना होती। जिस प्रकार कानून की किताबों का एक बड़ा-सा पुस्तकालय था, उसी प्रकार उससे

बड़ा न सही, पर छोटा भी नही, बंगला किताबों का भी एक पुस्तकालय था। अतएव कलकत्ते के अभिजात्य सभ्य और शिक्षित लोगो के बीच इस परिवार का भी एक विशेष स्थान था।

इतनी स्वच्छन्दता के बावजूद इनके मन में जरा भी अहंकार नही था। सबों के लिए इनका दरवाजा सदा खुला रहता। सबको मिलता है आदर और आतिथ्य। केवल व्यक्तिविशेष के लिए ही यह सुरक्षित नही है। इसीलिए लड़के-लड़की भी काबिल हैं। मिस्टर चौधरी के मा-बाप गुजर चुके है। मगर उनके उपदेशो को वे एक दिन के लिए भी नहीं भूल सके हैं।

"भगवान ने दोनों हाथ खोलकर सब कुछ दिया है—इसे हमेशा याद रखना। उसकी दया की अवहेलना न करना। किसी के दिल को न दुखाना। किसी को निराश न लौटने देना।"

इन बातों को मानकर ही दोनों जनें चलते।

अपनी अंतिम घड़ी मे मां कह गई थी, "मेरे पोते को पढ़ने के लिए विलायत भेजना, मगर समय पर ही संगीता को ब्याह देना। पेट भरने के लिए इस घर की लड़की को नौकरी करने की जरूरत नहीं पड़ेगी। अतः शादी के बाद अगर वह पति के साथ विलायत जाए अथवा कुछ पढ़े तो इसमे कोई हर्ज नही।"

बैरिस्टरी पढाने के लिए लड़के को विलायत भेजा। लड़की को भी भेजने की इच्छा थी, परन्तु मां की अंतिम इच्छा को नजरअन्दाज नही कर सके। फलस्वरूप संगीता ने सीनियर कैम्ब्रिज की परीक्षा पास कर ली। ग्रेजुएट हो लेने के बाद अब एम० ए० पढ रही है।

अपने मित्र-पुत्र बोधिसत्व सिन्हा के साथ चौधरी साहब ने संगीता की शादी तय कर दी है। कुछ माह बाद शादी की रस्म पूरी होगी। तब तक बड़ा लड़का भी विलायत से लौट आएगा।

मां-बाप ने ही पहले तय किया था। बाद में लड़के-लड़की ने एक-दूसरे को देखा, पहचाना। दोनो ने एक दूसरे को पसन्द किया, प्रेम किया।

यही इस शादी की खासियत है। अगर कहा जाए तो चारों ने मिलकर तय किया, फिर केवल दो ही लिए जा सकते हैं।

रिण का पूरा नाम रिणरिण है। पर सभी उसे रिण कहकर पुकारते हैं। रिण और संगीता सहपाठिनी रह चुकी हैं। स्कूल के सभी साल न सही, पर कई साल दोनो एक ही साथ पढी हैं। उसके बाद कई वर्षों तक अलग रही। रिणरिण आर्ट स्कूल मे दाखिल हो गई थी। उसकी चित्रकला की प्रतिभा देखकर, कनवेंट की मदर सुपीरियर ने ही कोशिश करके उसे दाखिल कराया था। उन्ही की चेष्टा से उसने अच्छा रिजल्ट किया और विदेशी छात्र-वृत्ति भी जुटायी। पेरिस जाकर चित्रकला सीखने के लिए छात्रवृत्ति मिली थी।

हालांकि संगीता अपने ही मुल्क म रही, फिर भी उनकी दोस्ती अटूट बनी रही। हर सप्ताह एक-दूसरे की खबर लिए बिना उन्हें चैन नही मिलती।

इसी को मद्देनज़र रखते हुए बोधिसत्व बीच-बीच में मज़ाक किया करता, "अगर तुम्हारी दोस्त रिणरिण न होकर रणवीर होता तो निश्चय ही मुझे कोई मौका नही मिलता।"

सिर हिलाकर संगीता उत्तर देती, "यह भी कहने की बात है!" यद्यपि संगीता रिणरिण से प्रेम करती है, फिर भी कभी-कभी उसे ऐसा महसूस होता है मानो रिणरिण के जीवन मे एक ऐसी खाई है, जो वह सबों से छिपाए हुए है।

कभी-कभी उसे ऐसा भी लगता मानो वह उसे पूर्ण रूप से जानती भी नहीं है। काफी अनजान है। उसके अपने दो अस्तित्व है—एक खुला, दूसरा अनजान।

कभी ऐसा भी लगता, वह तो फूहड लड़की है और कहा जाए तो उसकी प्राणप्रिया सहेली है। यह उसकी मनघढत धारणा थी।

रिणरिण की मा अमृताराव काफी दिनो से कनवेंट मे शिक्षिका हैं। रिणरिण जब छोटी ही थी तभी वह विधवा हो गई थी। मद्रासी महिला मद्रास ही मे रहती।

पति के मरने के बाद कलकत्ते चली आई और यही काम शुरू कर दिया। मिस्टर और मिसेज चौधरी के साथ मिसेज राव का काफी हेल-मेल हैं। अपने ही घर के लोगो की तरह। औरतो से ही यह सूचना मिली थी।

पति की चर्चा होते ही मिसेज राव खिन्न हो जाती। इसीलिए उस बारे में उनसे कोई कुछ नही पूछता। अमृता के दिल को दुखाना कोई नही चाहता। ऐसी शांत और धर्मभीरु महिला मिलना मुश्किल है। गला फाड़कर बोलने की आदत नही है। बहुत कम बोलती है। मधुर भाषिणी।

अधेड़ उम्र की होने पर भी सुन्दरता उनमें समाती नही थी। रिणरिण की बड़ी बहन जैसी लगती। कम उम्र की खूबसूरत विधवा है। बहुतों के दिल को जला चुकी हैं। फिर भी जब बड़ी-बड़ी शात आंखों से लड़कों की ओर देखती तो उनकी बातें उनके मुह में ही रह जाती।

वे सोचते यह मानवी नही, देवी है। दूर से ही इनकी आराधना की जा सकती है, मगर नजदीक नही खीचा जा सकता है।

रिणरिण ठीक इससे उल्टी है—शरीर और चचल। मां की तरह खूबसूरत तो नही, फिर भी चार्मिंग अवश्य है।

उसका स्वभाव लोगो को अपनी ओर आकर्षित करता है। दिल खोल कर हंसती है। बेहद बातचीत करती है। निमिष मात्र में लोगो को अपनी ओर खीच लेती है। दूसरी तरफ वह एक रहस्य है। लोगो को अपनी ओर खींच भी सकती है और अपने से अलग करने में भी समय नही लगाती।

पेरिस में अनेक लड़के उसके प्रेम में डुबकी लगा चुके हैं। इसके अलावा वह शिल्पियों के साथ काम करती—कल्पना की दुनिया में भावुकों का मेला लगा रहता। इतना होते हुए भी रिणरिण के मन पर कोई अपनी छाप नही डाल सका। पहल करते ही वह हल्के तौर पर अंगूठा दिखा देती, "यहा नही, यहा नही, कही और ! कही और खोजो ?"

चार

आज कई वर्षों से मद्रास के रामकृष्ण आश्रम के महाराज इस आश्रम के अधिकर्ता है।

केवल धर्मभीरु होने मात्र से ही लोगो का प्रेम और उनकी श्रद्धा उनको इतनी नही मिलती। वे बडे दयालु भी है। किसी के मन के

दु:ख की बात जान पाते ही वे स्वयं दौड़ते हुए वहां हाजिर हो जाते हैं। वे केवल दुखियों की ही सेवा करते हों, खाने-पीने और इलाज के अभाव को दूर करते हों, अर्थात् केवल पार्थिव अभावों की पूर्ति करते हों, ऐसी बात नहीं, इससे भी सर्वोपरि अभाव होता है मन की शान्ति का। वे उसकी पूर्ति की भी कोशिश करते हैं। शास्त्रगत दो-चार नीरस उपदेश देकर अथवा कर्तव्य-अकर्तव्य की बातें सुनाकर ही उनका फर्ज पूरा नहीं होता।

वे हर व्यक्ति के अन्तस्तल तक पहुंचने की कोशिश करते हैं। खोलकर नहीं कहने से भी वे न जाने कैसे अपनी तृतीय शक्ति की सहायता से उसे जानकर उसी के अनुरूप उसे समझा-बुझाकर शान्ति देने की कोशिश करते हैं।

उनके लिए पाप-पुण्य बड़ी बात नहीं है जीवों को सुख-शांति पहुंचाना ही उनके लिए बड़ा और सच्चा धर्म है। इसीलिए बड़ी सुगमता से उन्होंने इस बच्चे के कल्याणार्थ निर्दोष कपट का आश्रय लेने में द्विधा का अनुभव नहीं किया।

सबों की रक्षा करना ही उनके लिए सबसे बड़ी सेवा थी।

महाराज, दो दिनों से आपको बहुत क्लांत और चिंतित देखता हूं। आपकी तबीयत तो ठीक है न ?" एक ब्रह्मचारी ने उनसे पूछा।

दो दिनों से सभी यह अनुभव कर रहे थे कि महाराज किसी चिन्ता में पड़े हैं, कुछ चंचल भी दिखाई पड़ते थे।

"नहीं, नहीं। ऐसी कोई बात नहीं ? मैं ठीक ही हूं।"

महाराज ने अपने काम की ओर ध्यान लगाया। उनका मन संशय में डोल रहा है। श्रीमती सारथी से असत्य का आश्रय लेने के लिए उन्होंने खुद ही कहा था। उनकी यह शिष्या उनके स्नेह की पात्री है। इतने वर्षों से वे कहते आ रहे हैं कि हमेशा सत्य-पथ पर चलो, और उसी को उन्होंने असत्य पथ पर चलना सिखाया ! यह हुआ कैसे ?

वे ध्यान पर बैठे। 'हे प्रभु, हे देव, तुम मुझे बताओ, मुझे समझाओ, मैंने जिस पथ को अपनाया है, वह सही है या नहीं ?"

मन के भीतर से मानो किसी ने कहा, "जीवों की सेवा का अर्थ केवल शुश्रूषा नहीं, उसे सही पथ पर खड़ा कर देना है। जरूरत पड़ने पर मनुष्य

की बनाई बेड़ी को काटकर उसे खड़े होने की शक्ति दी जाय। तुमने बहुत अच्छा काम किया है।"

धीरे-धीरे उन्होंने आंखें खोली। मन मे शांति आई। अपने गुरु की तरह उन्होंने जान लिया—निष्पाप शिशु को सबकी आंखों के सामने पाप की निशानी के रूप में चिह्नित करना ही पाप होता। उससे उन्होंने उसे बचाया।

श्रीमती सारथी के मातृ-हृदय को उन्होंने पूर्णता प्रदान की। इस तरह शिशु का पालन श्रीमती सारथी करेंगी, उसे पूर्ण स्नेह और मर्यादा भी दे पाएंगी। अगर ऐसा नही होता तो हमेशा मनुष्यों की घृणा के स्पर्श से बचाने के लिए उनकी अपनी शांति भी नष्ट हो जाती।

जन्म से बढ़कर कर्म होता है। उसकी उत्पत्ति चाहे जहा कहीं से भी क्यों न हो, अब यह शिशु इस धर्मप्राण मां के हाथो आ लगा है, इसका अर्थ है, यह उसके पूर्व जन्म के अनेक सत्कर्मों का फल है।

असली मां-बाप शायद अति साधारण स्तर के रहे होंगे। अतएव विवाहित दम्पति की जायज सन्तान के रूप में जन्म लेने पर भी अन्य अति साधारण लड़कियों की तरह बड़ी होती। हो सकता है बुरे पथ पर भी चली जाती। ऐसा तो हमेशा ही हुआ करता है। अब वह एक दूसरे परिवेश मे बड़ी होगी।

वे प्रार्थना-गृह से बाहर निकले। इस बार उसी शान्त, सौम्य, सदा हंसमुख स्वामी जी को सबों ने देखा। दो दिन गुजर गए। इस बार शारदा के आने का समय हो चुका है। भगवान उसका मंगल करें।

आश्रम मे सबो ने देखा कि महाराज फिर से पहले की तरह दैनिक कार्यों में लग गये हैं। शान्त ललाट पर चिन्ता की जो एक रेखा खिच गई थी, वह मिट गई है।

और भी दो दिन के बाद शारदा देवी आश्रम में हाजिर हुईं। वे रोज आती हैं। एक दिन न आने पर एक ब्रह्मचारी उनकी खोज खबर लेने गया था। शारदा देवी के विधवा हो जाने के बाद से यही नियम चला आ रहा था।

"महाराज, शारदा देवी की खोज करने पर मैंने आश्चर्य से देखा कि

दरवाजे पर एक ताला लटक रहा है। अगल-बगल बहुतों से पूछा, कोई भी सही नहीं बता पाया। किसी को यह मालूम नहीं कि कहां गई हैं, क्या हुआ है ? अब क्या किया जाय, महाराज ?"

"शारदा देवी वयस्क महिला हैं। वैसे अवस्था सम्पन्न भी नहीं हैं कि कुछ अघटन घट सके। दो दिनों तक प्रतीक्षा कर ली जाय। भगवान की कृपा से खुश खबरी मिलेगी। ईश्वर मंगलमय जो हैं।"

शारदा देवी को देखकर आश्रम के सभी लोग खुश हुए।

"क्या बात है ? अचानक कहां चली गई थी ? हम लोग चिन्तित हो उठे थे। किसी को कुछ मालूम नहीं था।"

"यह बात अचानक हो गई। मेरी काफी दूर की एक सम्बन्धी कुछ दिन पहले विधवा हुई थी, उसी का एक अर्जेन्ट तार मिला।

मरणासन्न हूं, जल्दी आओ। इसीलिए किसी को सूचना देने का मौका नहीं मिला।"

काफी दुखी होते हुए उन्होंने बताया, "मैं उसी के नजदीक दौड़ी गई थी। उस अभागिन का भी मेरी ही तरह तीनों कुल में कोई नहीं है।"

"यह आप क्या कह रही हैं, शारदा देवी ! आपके लिए तो हम लोग हैं ही। आप हमारी गुरु-बहन हैं। एक ही गुरु के शिष्य हैं हम लोग।"

"सचमुच। मेरा ऐसा कहना उचित नहीं हुआ। खैर, मेरे पहुंचने के कुछ घण्टे बाद ही वह चल बसी। पर अपने पीछे महीने भर की एक दुधमुंही बच्ची छोड़ गई है।"

"उसे ले आयी हैं तो ? अब तो आप ही उसकी मां-जननी हैं," सभी कहने लगे।

"हां, ऐसा ही है। नदी का एक कगार टूटता है तो दूसरा बनता है। मानव-जीवन में भी ऐसा ही होता है। उधर मां मरी और इधर एक सन्तानहीना बनी सन्तानवती।"

"बच्ची की मां का भाग्य अच्छा था जो आप जैसी मां के हाथों उसे सौंप सकी। भाई, अब बातचीत बन्द हो ! चलकर स्वामी जी को इसकी सूचना दें।"

"वे तो अभी मन्दिर में हैं, दरवाजा बन्द है।"

"आप लोग अपने-अपने काम पर जाएं, मैं ही उनसे कहूंगी सब।"

"बच्ची को कहां छोड़ आई?"

"बगल वाली महिला के घर। खिला-पिला और सुला कर आई हूं।"

"आज तो आप दिन भर यहां नहीं रह सकेंगी।"

"नहीं, आज ठहर नहीं सकूंगी।"

ठीक उसी समय महाराज बाहर निकले।

"खैर, तुम आ गई, शारदा! तुम्हारे लिए हम सभी चिन्तित हो उठे थे।"

प्रणाम कर शारदा देवी ने कहा, "आशीर्वाद दें, महाराज! इस समय आपके आशीर्वाद की बड़ी जरूरत है।"

"मेरा आशीर्वाद हमेशा तुम लोगों के साथ है," कहते हुए महाराज अपने कमरे की ओर मुड़े।

शारदा देवी ने भी उनका पीछा किया। बाकी सभी अपने-अपने नियमित काम पर चले गए।

कमरे में जाकर महाराज ने भीतर से दरवाजा बन्द कर लिया।

"महाराज, आपके आदेशानुसार ही मैंने सब कुछ किया। आपके आशीर्वाद से रास्ते में कुछ तकलीफ नहीं हुई। जिस होटल में ठहरी थी यद्यपि वह छोटे शहर का एक छोटा-सा होटल है, फिर भी काफी सुविधा मिली। मुझे ऐसा लगा मानो हर घड़ी आपका हाथ मेरे सिर पर रखा हुआ है। आपने जैसे कह दिया था, मैंने यहां आकर सबों से यही बताया, प्रभु!"

"भगवान तुम्हारा मंगल करें। बच्ची को कहां रख आई हो?"

"बगल वाली महिला के पास।"

"तब तो अधिक देर तक तुम्हारा यहां ठहरना ठीक न होगा।"

"मगर महाराज, लड़की को पाकर एक ओर तो मेरा धर्म पूर्ण हुआ, किन्तु आपके सान्निध्य से मेरा वंचित होना, इस आश्रम से वंचित होना मेरे लिए बहुत कठिन हो जाएगा। मैं दो राहों के बीच आ पड़ी हूं, मेरे लिए कुछ व्यवस्था करें।"

"अच्छी बात है, शारदा! मैं व्यवस्था बताए दे रहा हूं। पहले, कुछ,

दिनों तक बच्ची को हिल-मिल लेने दो। तुम रोज थोड़ी देर के लिए यहां आ जाया करना।"

"उसके बाद ?"

"हां, उसके बाद बच्ची को साथ ही लाना। उसकी देखभाल करना और जहां तक संभव हो सके, जो सब काम तुम यहां करती थीं, वह करने की कोशिश करना।"

"मुझे बचाया आपने महाराज ! मैं समझ पा रही हूं यह आश्रम और आप ही मेरे प्राण हैं। काफी दुश्चिन्ता में थी। सोचा, इधर का छोड़ना पड़ेगा।"

"यह क्या संभव है, शारदा ? यह शिशु तुम्हें बन्धन में नहीं जकड़ेगा, वरन् मुक्ति-पथ की ओर ले जाएगा।"

"आशीर्वाद दें, महाराज !"

"इसका नाम मैंने अमृता रखा है। इसकी देखभाल करो, शारदा ! हां, इस बारे में, हम और तुम जो कुछ जानते हैं, उसे कोई तीसरा व्यक्ति नहीं जान पाए। अमृता भी नहीं।"

"महाराज, आपका आदेश पालन करूंगी।"

"तुम्हारी ही बात सोच रहा था। बच्ची ठीक है तो ?"

"हां, प्रभु ! वह ठीक है। कोई तकलीफ नहीं देती है। बहुत शान्त है। सिर्फ सोई रहती है। केवल खिलाकर ही छुट्टी। रात को भी नहीं उठती है। वहां सभी दुःख प्रकट करते हैं कि कैसी लड़की को जन्म दिया, मां जान भी नहीं सकी। बहन, तुम्हारी तकदीर अच्छी है। लड़की का भाग्य भी अच्छा है जिसे तुम जैसी मां मिली।"

"वे सभी ठीक ही कहते हैं, शारदा ! तुम जैसी मां को पाना पूर्व जन्म के अर्जित फल के सिवा क्या संभव हो सकता था ?"

महाराज के कमरे से प्रणाम कर शारदा बाहर आई। आश्रम का थोड़ा-बहुत काम कर वह अपने घर की ओर रवाना हो गई।

मन आश्रम में ही पड़ा रहा। पर कर्तव्य भी तो कोई चीज होती है। आश्रम में न रहते हुए भी शारदा देवी, मन-प्राण से आश्रमवासिनी ही थीं। इसीलिए इतनी जल्दी घर जाने की इच्छा नहीं हो रही थी।

इसी तरह कुछ दिन बीत जाने के बाद महाराज ने आश्रमवासियों को वे सभी बातें बता दी जो कुछ उन्होंने शारदा देवी से कहा था।

"आपने उचित आदेश दिया है। शारदा देवी तो आश्रम का एक अंग हो चुकी हैं। उनके न रहने से आश्रम के किसी भी काम में विश्रृंखलता आ सकती है।"

"मैंने बच्ची को ले आने के लिए कहा है। फिर शाम को बच्ची को लेकर वापस चली जाएगी। तुम लोगों में से कोई दूर तक उसे छोड़ आना।"

"कोई न कोई त जरूर ही जाएगा।"

"आते समय खूब तड़के ही आने के लिए कह दिया है। अतएव कोई असुविधा न होगी।" महाराज बोले—"लड़की का नाम अमृता रखा है।"

"काफी अच्छा नाम दिया है आपने महाराज! आपके आशीर्वाद से वह सबों के बीच अमृत-वर्षा करेगी।"

महाराज केवल मुस्कराए, पर कुछ बोले नहीं।

पांच

कुछ दिनों के बाद शारदा देवी की जीवन-यात्रा दो नावों पर पैर रखते हुए भली-भांति चलने लगी। सवेरे अमृता को लेकर आश्रम चली आती और उसे सुलाकर सभी काम करतीं।

महाराज का कमरा जब तक खुद अपने हाथों से नहीं सजा लेती, तब तक उन्हें शान्ति नहीं मिलती। इसी तरह और भी छोटे-मोटे कई काम थे। समाज-कल्याण के अनेक कामों में उनका कल्याणकारी हाथ रहता। पहले आश्रम के काम से आश्रम के बाहर भी जाना पड़ता अथवा जातीं। इस बार उसमें बाधा पड़ी।

शान्त और सुशील बच्ची इसी तरह धीरे-धीरे बढ़ने लगी। यदा-कदा बच्ची की अस्वस्थता के चलते अथवा किसी अन्य कारणवश यद्यपि आश्रम आने में बाधा पड़ती, पर वह अधिक दिनों के लिए नहीं।

महाराज के आशीर्वाद से अमृता बढ़ती रही, पर अन्य बच्चों की अपेक्षा, बहुत कम ही उसे सांसारिक दुःख भोगना पड़ता।

जो लोग यहां है, वे संसार से परे हैं शायद इसीलिए उनकी नज़र इधर नहीं पड़ती—लड़की का धीरे-धीरे अग्रसर होना अर्थात् बढ़ना।

अचानक सबों ने देखा, अमृता थोड़ा बहुत चल सकती है, टूटी-फूटी वाणी में महाराज को 'महाराज' कहती है। केवल यही नहीं, धरती पर बैठकर अपने छोटे-छोटे हाथों से मां की देखा-देखी उन्हें प्रणाम भी करती है।

"अरे, यह तो बड़ी हो गई।"

महाराज ने हसते हुए सबो से कहा, "तुम लोगों ने क्या सोच रखा था कि यह हमेशा बच्ची ही रहेगी, और तुम लोग गोद में लेकर इसे प्यार करोगे?" शारदा देवी अपनी मातृभाषा जानेंगी ऐसा स्वाभाविक ही है, पर पति-पत्नी दोनों ने इतनी अच्छी बंगला सीख ली थी कि केवल साधारण उच्चारण दोष के अलावा कोई यह नहीं कह सकता था कि बंगला भाषा-भाषी नहीं हैं। श्री रामकृष्ण-कथामृत उन्हीं की अपनी भाषा में पढ़ने के लिए ही पति-पत्नी दोनों ने यत्नपूर्वक बंगला भाषा सीखी थी।

इसके अलावा अपने गुरुदेव के साथ उन्हीं की मातृभाषा में बातचीत करने के सौभाग्य से वे वंचित न रहें, बंगला-भाषा सीखने के पीछे यह भी एक कारण था।

अमृता भी अपनी मां से तमिल और बंगला दोनों एक साथ सीखने लगी। अन्य लड़कियों की अपेक्षा इसका स्वभाव भी भिन्न होने लगा। गुड़िया लेकर खेलने की अपेक्षा मां के साथ अपने छोटे-छोटे हाथों से मंदिर का काम करना उसे अच्छा लगता।

इसी प्रकार अमृता का जीवन आरम्भ हुआ।

शारदा देवी के मातृ-स्नेह और महाराज के आशीर्वाद तथा उपदेश की छत्रछाया में वह बढ़ती रही। सबसे अधिक उसका शरीर और स्वभाव लोगों को अलकापुरी से अचानक गिरे हुए किसी तारे की याद दिला देते।

महाराज ने ही एक दिन कहा, "शारदा, तुम्हारी बेटी तो बड़ी हो गई।"

"आपकी दया है, महाराज !"

"अब तो उसे स्कूल भेजना चाहिए।"

"आप जैसा कहेंगे, वही होगा।"

महाराज के परामर्शानुसार ही शारदा देवी ने उसे आश्रम के निकट ही एक मिशनरी स्कूल में दाखिल करा दिया। समय किसी के लिए प्रतीक्षा नहीं करता। अमृता धीरे-धीरे बढ़ने लगी।

जिस प्रकार एक-एक दरजे को पार कर वह आगे बढ़ती रही, उसी प्रकार यौवन का प्रकार भी उसके तन पर पड़ता गया। वास्तव मे आंखो में चकाचौंध पैदा कर देने वाली एक सुन्दरी में वह बदल गई। शारदा देवी से मजाक करते हुए महाराज ने कहा, "तुम्हारी लड़की तो गजब की निकली शारदा ! रूप मे लक्ष्मी और गुण में सरस्वती।"

शारदा की दोनों आंखें भर आई,"सभी आपकी दया है, महाराज !" एकान्त में गुरु-शिष्या के बीच जब बातचीत होती तब काफी अंशों में अमृता ही उनके लिए विषयवस्तु बन जाती।

इधर शारदा देवी का स्वास्थ्य गिरने लगा। जीवन का धर्म कोई रोक नहीं सकता। परिवार का काम-काज अब अमृता ही स्कूल जाने के पहले करती है। लेकिन लड़की के हजार मना करने पर भी वे आश्रम का काम करती रहीं।

"मां, तुम इतना परिश्रम क्यों करती हो ? मैं भोर में ही उठकर सभी काम कर लिया करूंगी। तुम केवल आश्रम में बैठी रहना। मा, तुम्हारे सिवा मेरा इस संसार मे और कोई नही है।" कहते-कहते उसकी दोनो बड़ी-बड़ी आखें आंसुओं से भर जाती।

"छि., ऐसी बात मुह पर कभी मत लाना। सिर के ऊपर ईश्वर है और नजरो के सामने है महाराज। हम लोग तो केवल निमित्त मात्र है। उनकी कृपा तुम्हे मिली है ! तुम्हे चिन्ता किस बात की ?"

कभी-कभी मां को सीने से चिपकाकर कहती, "तुम्हे छोड़कर मैं रह नही सकती।"

महाराज से जाकर अमृता कहती, "महाराज, तुम मां को ठीक से रखो।"

"ईश्वर ही तुम्हारा मां का और हम सबों का मंगल करेंगे। वे मंगलमय हैं। लेकिन हमेशा एक बात की उपलब्धि करने की कोशिश करना। वह यह कि दुनिया में जन्म लेने से सासार के सभी नियमों से गुजरना पड़ेगा। सुख-दुख, मिलन-बिछुड़न, शांति-अशांति सबको शान्त मन से ग्रहण करना पडेगा! सब उसी की लीला है।"

इसी तरह महाराज के विभिन्न उपदेशों के जरिए अमृता के मन में स्थिरता आती। फिर भी कभी-कभी उसे ऐसा लगता मानो और दस व्यक्तियों की तरह उसकी अवस्था नही है। उसके साथ जो लड़कियां पढ़ती हैं उनके केवल मां-बाप ही हों ऐसी बात नही, भाई-बहन तथा इधर-उधर और भी अनेक हैं। बडी होने पर उसने मां से सुना कि उसके जन्म होने से पहले ही उसके पिता ससार छोड़ चुके हैं। उसकी जन्मदात्री मां भी उसे अति छोटी उम्र में ही छोड़कर संसार की माया त्याग चुकी है।

ये सभी बातें उसके लिए कहानी मात्र हैं। उसके मन पर इनका कोई प्रभाव नही पड़ता। इसी मा को वह मां जानती है। उसकी यही मां उसके लिए दुनिया है।

इसीलिए बीच-बीच में अमृता के मन मे डर पैदा होता है। वह जरूर अपने साथ दुर्भाग्य लेकर पैदा हुई है। हो सकता है उसकी बदकिस्मती इस मां को भी छीन ले जाय।

नींद में वह शारदा मां को अपनी सारी शक्ति से जकड़ लेती।

"क्यों? क्या हुआ? कुछ बुरा स्वप्न देखा क्या?"

"नहीं, कुछ नही। तुम अच्छी रहो मा।"

"पगली कहीं की।"

मन ही मन शारदा देवी अनुभव करने लगी थीं कि उनका स्वास्थ्य गिर पड़ा है। आश्रम की ओर से इलाज मे कोई कमी नहीं थी। शारदा देवी का मन आनंदविभोर हो उठता। वे अपने प्राण-प्रिय पति के निकट जाएंगी। दूसरी ओर अमृता का खिंचाव भी था।

उसे छोड़कर जाना पड़ेगा। यह विचार मन मे आते ही उनका मन विचलित हो जाता।

एक दिन महाराज से शारदा देवी ने अपने मन की बात बताई,

"महाराज, अगर मुझे कुछ हो जाय तो आप अमृता की देखभाल करेंगे।"

हंसते हुए महाराज ने कहा था, "जो देखने वाले हैं, वे ही देखेंगे। शारदा, क्या वह घटना याद है? उस दिन अन्धकार और प्रकाश के सान्निध्य के बीच इसे राह से उठाकर तुम्हारे हाथों सौंप दिया था। उस दिन किसने देखा था? मैंने? अथवा तुमने? हम लोग तो केवल माध्यम हैं। जिनका काम है, वही देखेंगे। चित्त स्थिर और शान्त रखो।"

"आपने ठीक कहा, महाराज! हम लोग गेही है, इसलिए बीच-बीच में गलती हो जाती है। यही कारण है कि मन के उद्वेगों और द्विधाओं को आपके सामने रखती हूं।"

शारदा देवी शान्त चित्त होकर महाराज के कमरे से बाहर निकल आतीं। इसी तरह दिन गुजर रहे थे। अमृता ने सीनियर कैम्ब्रिज की परीक्षा दी और अच्छे अंकों से सफलता प्राप्त कर एक दिन मां और स्वामी जी को आकर प्रणाम किया। उस दिन सभी आश्रमवासी बड़े खुश थे।

अमृता सचमुच आश्रम दुहिता-सी लगती। सभी के स्नेह और ममता के बीच पलकर बड़ी हुई थी। ठीक कण्वमुनि के आश्रम की शकुन्तला की भांति। पर स्वभाव में काफी पार्थक्य था। अन्य लड़कियों के मन में यौवनावस्था में जो एक परिवर्तन अथवा आकांक्षा पैदा होती है, अमृता के मन में उसका बिलकुल अभाव था।

संन्यासियों के साथ रहते-रहते वह भी मानो एक छोटी-सी सन्यासिनी बन गई थी। उसकी मां भी गेह मे रहते हुए गेही नही थी। उसके मन के अन्दर गेरुए रंग का छाप था।

शारदा देवी का मन रखने के लिए घर से बाहर जाते समय अमृता अवश्य ही सज-धज कर निकलती।

अमृता काफी खूबसूरत निकली। साधारण सजधज में भी वह राज-रानी सी दीखती। रास्ते मे लड़के मोहित होकर उसकी ओर देखते। लेकिन उसके शान्त स्निग्ध नयनों को देखकर उसके नजदीक फटकने का साहस कोई नही करता। किन्तु एक दिन अचानक बिन बादल बिजली कौंध गई।

अमृता अभी बी० ए० में पढ़ती है। एक दिन मन्दिर में प्रार्थना करते समय शारदा देवी चल बसी। कालेज से अमृता को लिवा लाने के लिए आश्रम से एक ब्रह्मचारी दौड़ा गया। मां को सोई अवस्था में देखते ही उसने जोर से मां को जकड़ लिया और एक आर्तनाद के साथ बेहोश हो गई। उसके बाद क्या हुआ उसे कुछ मालूम नहीं। होश आने पर उसने देखा कि महाराज उसके सिर पर हाथ रखे बैठे हैं। महाराज के मुंह की ओर नजर पड़ते ही अमृता के चेहरे पर शांति छा गई।

"बेटी ! तुम्हारे सामने अभी बहुत काम बाकी है। तुम्हें ही उनका अन्तिम सस्कार करना है। बाकी सब काम दूसरों ने कर लिया है। इस समय तुम भी अपना काम करो। तुम्हारे प्रति शारदा ने अपने कर्तव्य में जरा भी कमी नहीं की थी। तुम भी नहीं करोगी, मुझे ऐसा विश्वास है। तुम्हारी मां पुण्यात्मा थी, इसीलिए भगवान का नाम लेते-लेते उन्हीं के नजदीक चली गईं। ऐसा भाग्य कितने व्यक्तियों को मिलता है? जो शारदा को देखते थे, वही तुम्हें भी देखेंगे।"

अमृता धीरे-धीरे उठी और उसके लिए जितने भी करने के काम थे, सब एक-एक कर पूरा किया। स्थिर और शान्त चित्त से।

कई दिन के बाद महाराज बोले, "अमृता, उस फ्लैट में तुम्हारा अकेली रहना अब ठीक नहीं होगा। इसलिए कॉलेज के छात्रावास में ही तुम्हारे रहने की व्यवस्था किए दे रहा हूं। तुम्हें कोई आर्थिक कष्ट नहीं होगा। शारदा तुम्हारे लिए सब कुछ लिख गई है। लड़कियों का छात्रावास है, इसलिए तुम्हें कोई असुविधा नहीं होगी।"

"किन्तु महाराज, सवेरे उठते ही स्कूल अथवा कॉलेज जाने के पहले आश्रम का जो सब काम मैं अपनी मां के साथ किया करती थी, अगर उससे वंचित हो गई तो मेरे लिए रहना असम्भव हो जाएगा। वही तो मेरा पाथेय है, महाराज !"

"मैं इसे जानता हूं, अमृता ! इसीलिए वही सब व्यवस्था मैं कर रहा हूं। तुम जानती हो मेरी बात सभी मानते हैं। पहले की नाईं ही तुम आश्रम आओगी और कॉलेज के वक्त कॉलेज चली जाओगी। छुट्टियों के अधिकतर दिन तुम यहीं बिताओगी।"

"ईश्वर को मैंने अपनी आंखों से कभी देखा नहीं, महाराज ! आप ही मा और मेरे ईश्वर हैं। इहलोक तथा परलोक भी हैं। अब मां मेरे मन मे है और आप मेरी नजरों के सामने है।" प्रणाम करते समय महाराज ने अपना स्नेहयुक्त हाथ उसके सिर पर रखते हुए कहा, "हजारों दु:ख-कष्ट के बीच भी हमेशा सतपथ पर चलना। यही बात मैं शारदा से भी कहता था। तुम्हें भी कह रहा हूं, अमृता !"

छह

सरसराती हुई एक मोटर कार बालीगंज सर्कुलर रोड स्थित एक मकान के फाटक के अन्दर घुसी।

"देखो, तुम्हारा बोधिसत्व हुजूरे हाजिर है।" रिणरिण चिल्ला उठी।

दूर से ही दिखाई पड़ा कि एक लड़का लान में टहल रहा है। आधुनिक फैशनयुक्त मोटे पतले फ्रेम का एक काला चश्मा उसकी आंखों पर विराजमान है। ऐसे फ्रेम वाले चश्मे का एक विशेष महत्त्व होता है। बुद्धिहीन भी बुद्धिमान दीखते हैं।

और बुद्धिमानों को तो पूछना ही क्या ! इससे व्यक्तित्व भी बढ़ता है। इसलिए आजकल के लड़के अधिकतर ऐसा ही चश्मा पहनते हैं। बोधिसत्व तो यों ही बुद्धिमान है, फिर भी चेहरे और चाल-ढाल से बुद्धिमानी टपकती है। विनयी, शान्त और स्थिरचित्त युवक। गाड़ी तब तक पोर्टिको में आकर रुकी।

"बोधिसत्व, तुम हमारे साथ गए क्यों नहीं ? आज ठगे गए, काफी सुन्दर सिनेमा था।" रिणरिण रुकी।

"देवी, तथास्तु। कहा नहीं गया, इसीलिए गया भी नहीं।"

"सचमुच, मैंने कहा ही नहीं। बोधिसत्व, तुमसे तो पहले ही कह दिया कि और कई एक महीने के बाद से जीवन भर उठते-बैठते मेरे लिए बोधिसत्व ही रहेगा। इससे बचने की कोई गुंजाइश नहीं। इसीलिए कुछ दिन हड्डियों में हवा लगा लेती हूं।" संगीता ने कहा।

"यह क्या ? बोधि, लेकिन मुझे कुछ मालूम नही था। सू तुम यह क्या कहती हो ? ठीक है इस मामले में मैं भी कुछ-कुछ सू की हां में हां मिलाती हूं।"

रिणरिण ्सते हुए कहा, "उठते किशोरी, बैठते किशोरी। किशोरी को ही जीवन का सार बना लिया है—यही बात है न, बोधि ?"

"जाने दो, मैं क्या कहूं ? जब दोनों सहेलियां एक ओर हैं, तो मैं लाचार हू। पहले पहल आशा की एक किरण दिखाई पड़ी थी। पर बाद में देखा कि अन्धकार मे वही अन्धकार ही है।

सद्यः मूछ की रेखा निकली हुई है,ऐसे एक चढ़ती जवानी के युवक को दरवाजे से प्रवेश करते हुए देखा गया।

"यह क्या ? तुम लोग बाहर ही भीड़ किये रखे हो ?घर मे कोई नहीं है ?" अनुज ने कहा।

अनुज संगीता का छोटा भाई है। हाल ही मे कॉलेज गया है। फस्टईयर नो फीयर' कहावत वाला युग चल रहा है।

"क्यो जी, कैसा देखा ? सभी बाहर क्यो हो ? घर मे कोई नहीं है क्या ?" अनुज रुका।

बोधि ने ही पहल किया, "सबो का बनकर मैं ही उत्तर देता हूं। पर एक-एक कर। सभी प्रश्नों के उत्तर एक साथ नही दिए जा सकते। घर के अन्दर तुम्हारे पिता जी अपने दो दोस्तो के साथ बैठकर गुलजार कर रहे हैं। मा अमृता मौसी को लिवाने गई है। दोनों देवियो का अभी तुरन्त आविर्भाव हुआ है। मैं लॉन में टहल रहा हू।"

"बोधि भैया, तुम गए क्यों नही ? तुम लोगों को कैसा लगा जी ?"

"पहले प्रश्न का उत्तर मैं देता हूं, क्योंकि इसका सम्बन्ध मेरे साथ है। तुम्हारी दीदी का आदेश नहीं मिला था,इसीलिए सिनेमा नहीं गया।" यह कह कर बोधि चुप हो गया।

"बोधि भाई, तुम भी लाजवाब हो। आदेश की ऐसी तैमी। तुम अपनी इच्छा से चले जाते। अगर मैं होता तो···।"

"तुम्हारे बोधि भाई नाम मात्र के बोधिसत्व हैं, काम के नही। मैं पहले ही देख आया हूं। फरमान तो पहले से ही जारी हो चुका है।"

"तुम तो रंगे सियार निकले। कुछ बताया भी नहीं। अच्छी बात है। इस बार अगर मैंने भी तुमसे कुछ बताया तो…।"

"तुमने तो कुछ पूछा ही नहीं। अगर पूछते तो जरूर बताता।"

रिणरिण ने बीच बचाव किया, "मैं कहती हूं, सू ठीक ही कहती है। जीवन भर तो तुमको ही सोचकर चलना पड़ेगा। इसलिए कुछ ही दिन तो उसके अपने हैं। इसके सिवा बोधि ने भी ठीक ही कहा। सू, तुमने तो उससे पूछा ही नहीं। अतएव अब चुप।"

शोरगुल मचाते हुए चारों जनें घर के अन्दर घुसे।

मिस्टर चौधरी बैठक खाने में बैठे मजलिस जमाए हुए थे। सबों को देखते ही बोले, "खैर, सभी पहुंच गए हो। अमृता मौसी के पहुंचते ही हम सभी खाने बैठेंगे।"

दूसरे कमरे में जाकर सबों ने अड्डा जमाया।

"जानते हैं, सिनेमा से भी बढ़कर आज की सबसे बड़ी खबर यह है कि रिणरिण ने कलकत्ते की सड़कों पर आज ट्रैफिक पुलिस का काम किया। एक खूबसूरत लड़के ने आकर रिण को मुक्ति दी। इसीलिए इतना बढ़िया सिनेमा देख पाए।"

"कौन लड़का? उसका नाम क्या था रिण?"

"मुझे मालूम नहीं।" रिण ने कहा, "क्यों बोधि, यह नाराज होने की बात नहीं है?" कम से कम एक बार पूछ तो लेती। माना वह शादी नहीं करेगी। इसका अर्थ यह नहीं कि अपना आग्रह भी न दिखाएं।"

"तुम्हारे प्रति जब आग्रह दिखाती है तब तो तुम एक ही बात में कन्नी नहीं काटा लेते हो। कुछ दूर अग्रसर होने के बाद ही मुंह मोड़ लेते हो।" इतना कहकर सू रुकी।

बोधि बोला, "सीधा-सा जवाब है। कोई आग्रह नहीं दिखाता।"

"इसी तरह अपना जीवन गुजारोगी, रिण?"

"क्यों? अपनी पूंछ कटी है इसीलिए सबों की पूछ कटने की ओर नजर क्यों?" कहते हुए रिण हंसी। उसके बाद बोली, "देखो सू, जीवन इतना छोटा नहीं! जीवन भर क्या होगा,कौन किस ओर धंस जाएगा, किसी को कुछ मालूम नहीं।" रिणरिण अचानक गंभीर हो गई। रिण के इस

रूप को देखकर संगीता डर जाती है। वह उसे बहुत प्यार करती है। उसके दु:ख की बातें सुनकर उसे व्यथा होती है। अतएव उसके हल्के, हंसमुख चेहरे को ही देखना वह पसन्द करती है। इसीलिए जल्दी ही विषयांतर किया। चलो हम सभी हाथ-मुह धोकर तरोताजा बन जाएं। मौसी और मा के आते ही खाने बैठ जाएंगे। कल रविवार है। काफी रात गए तक अड्डेबाजी चलेगी।

सबसे पहले सबसे छोटा हो बैठक छोड़कर चला गया।

अनुज अपनी बहन को दीदी और रिण को बहनजी कहकर पुकारता है। बचपन से ही रिण से अपनी बड़ी बहन की तरह प्यार करता है। बचपन मे उसे यह मालूम नही था कि वह उसकी बहन नहीं है।

वह एक ही घर मे क्यो नही रहती है यही उसके लिए बड़ी समस्या थी। घर के किसी व्यक्ति ने उसे अच्छी तरह समझाया नहीं था। बड़ा होने पर वह सब कुछ जान सका। मगर प्रेम पहले जैसा ही बना रहा। दोनों को समान दृष्टि से देखता है। लोगो के पूछने पर वह अभी भी यही कहता है कि उसकी दो बहनें हैं।

ऐसा ही होता है प्रेम के सामने सभी एकाकार हो जाते हैं। उसी समय मिसेज चौधरी के साथ अमृता देवी ने घर में प्रवेश किया।

"तुम काफी परिश्रम कर सकती हो, अमृता। दिन-भर स्कूल मे परिश्रम करने के अलावा और भी अनेक सामाजिक कार्यों का भार अपने ऊपर ले रखा है। ऐसा करने से शरीर टिकेगा? बेटी के विषय में भी थोड़ी चिन्ता करो। तुम्हीं उसकी दुनिया हो।"

"ऐसा क्यों? तुम लोग तो हो ही। इसके अलावा मेरा स्वास्थ्य तो ठीक ही है। सौ वर्ष के पहले मुझे कुछ नही होगा, ऐसा मेरा ख्याल है।"

वह मुस्कराई।

आज तक अमृता देवी को किसी ने जोर से हंसते हुए नहीं देखा। जब सभी हंसते-हंसते लोट-पोट हो जाते, उस समय भी वह केवल मुस्करातीं। न मालूम कौन-सा दबा हुआ दुख वह अपने अन्दर छिपाए हुए हैं। इस विषय में मिस्टर और मिसेज चौधरी अनेक बार चर्चा कर चुके हैं।

मिसेज चौधरी कहतीं, "कम उम्र मे विधवा हुई। मा-बाप भी सो

चुकी है। इसीलिए शायद इतना गंभीर और अल्पभाषिणी है।"

"पर ऐसा क्यों ? इस तरह तो और भी अनेक हैं, पर वे बडे मौज से घूमते-फिरते हैं।" मिस्टर चौधरी कहते।

"यह ठीक है। मगर बचपन से ही आश्रम में रहकर बड़ी हुई है। इसीलिए परिवार में रहकर भी दुनिया से अलग है।"

"यही असल कारण है।"

"तुमने ठीक कहा। रिण के चलते परिवार का मोह त्याग नहीं सकती। अगर ऐसा नही होता तो न मालूम क्या करती। खाने-पीने के बाद ये सभी दो कमरों में बट गए। मिस्टर और मिसेज चौधरी अमृता को लेकर जमे। दूसरे कमरे में बाकी चार आदमी हैं। मिसेज राव चौधरी परिवार की एक सदस्या बन गई हैं। लड़की के सिवा उनका अपना कोई नहीं है।

कलकत्ते आने पर भी पहले की नाईं वे रामकृष्ण आश्रम के साथ ओत-प्रोत रूप से जुडी हुई है। जिस प्रकार कलचर जाती हैं, उसी प्रकार बेलूर भी जाती है। उनका जीवन जीवों की सेवा के बीच ही गुजरता है। इस घर को छोड़कर वे ही उनकी दुनिया हैं।

अपनी लडकी के साथ अनेक वर्षों तक वे पेरिस में थी। यद्यपि नौकरी करती थी, फिर भी नाना तरह की जन-सेवाओं के साथ जुडी हुई थी। यह सब काम वे मौन-मूक और अज्ञात रूप से करती। इसीलिए अधिकतर लोगों को उनकी बात मालूम भी नही होती। कभी-कभी मिसेज चौधरी कहतीं कि स्वभाव की दृष्टि से मा और बेटी मे काफी अन्तर है। मा प्रशात महासागर की तरह शान्त है तो लड़की बगाल की खाड़ी है।

"सचमुच," मि० चौधरी कहते, "गौर से देखो। गभीरता से देखा जाय तो दोनो एक जैसी है। क्या तुमने कभी यह गौर किया है कि रिण कभी-कभी दूसरी तरह की बन जाती है। ठीक मा की तरह शात और धीर।"

"वास्तव में मैंने ऐसा सुना है कि उसके पिता हसमुख और काफी दिलेर थे। उसी का कुछ अंश लड़की को मिला है। उन्हे देखते ही मन चचल हो जाता है। अमृता मेरी छोटी बहन जैसी लगती है, इसीलिए

उसकी ओर नजर जाते ही कभी-कभी दिल दर्द से भर जाता है। उम्र ही क्या है ? क्या देखा अथवा क्या पाया ? अगर रिण की शादी हो ?"

"क्यों, तुम तो हो ही। तुम्हारी तो बहन ही है। हम केवल दो ही नहीं तीन प्राणी हैं। ऐसा है न ?"

"तुम ठीक कहती हो।" पत्नी के कंधे पर हाथ रखते हुए उन्होंने कहा।

"रात काफी हो चुकी है। मेरे ख्याल से अब मजलिस उठा लेनी चाहिए ?" चौधरी साहब बोले।

"अच्छी बात है। कल का प्रोग्राम ठीक कर लिया जाय। वीकडेज में रिण का मिलना मुश्किल है। और उससे भी अधिक कठिन है अमृता मौसी को पाना," संगीता बोली।

"सबों से छिपाकर मैंने एक प्रोग्राम निर्धारित किया है। काफी तड़के, यही करीब तीन-चार बजे हम बैरकपुर चलेंगे। गंगा के किनारे मेरे मित्र का एक सुन्दर मकान है। पिकनिक जैसा साथ में भोजन भी रहेगा। नदी के किनारे-किनारे टहला जाएगा और इच्छा होने पर नौका बिहार भी।" यह कहकर चौधरी साहब रुके।

"पिता जी, तुमने यह सब ठीक कर लिया है ? रिण, बहुत अच्छा रहेगा न ?" संगीता बोली।

"सचमुच मौसा की बुद्धि की बलिहारी है। अगर ऐसा न होता तो इतने बड़े बैरिस्टर कैसे हो सकते," रिण ने कहा ? "मुझे कोई असुविधा नहीं होगी। सबेर जल्दी बिछावन से उठकर सभी छात्र-छात्राओं की कापियां जांच लूंगी। लेकिन सबेरे दस बजे एक छात्र चित्रकारी सीखने आएगा। खैर, शाम को कोई समस्या नहीं है।"

"लेकिन मुझे" अमृतादेवी के मुंह से पूरी बात निकली भी न थी कि रिणरिण ने मा के मुह पर अपना हाथ दबाया।

"लेकिन मा, तुमने तो मुझसे वायदा किया है कि सप्ताह मे एक दिन हम दोनो साथ रहेंगे। तुम्हारा कही भी जाना बद रहेगा। सू आदि की बातें अलग हैं। हमारे और उनके बीच कोई फर्क नहीं है।"

अनुज बोला,"मौसी, तुम हार गई हो। बहन जी ने ठीक ही कहा है।"

है।"

"तो फिर यही तय रहा, अमृता! हम सभी तुम्हारे यहां हाजिर हो जाएंगे। वहां से दो गाड़ियों मे अलग-अलग जाया जाएगा।"

पत्नी की हां में हां मिलाते हुए चौधरी साहब ने कहा, "जाड़े के कुछ महीने ही तो कलकत्ते में घूमने के होते हैं।"

घड़ी की सुई प्रायः बारह पर पहुँच चुकी थी, इसीलिए किसी ने बात को आगे नहीं बढ़ाया।

मां और बेटी को उनके ठिकाने पर पहुंचाकर बोधिसत्व भी अपने घर जा लगा। अगर कहा जाय तो रिण के साथ दिन में मां की मुलाकात प्रायः नहीं हो पाती है।

दोनों मां बेटी पश्चिमी आदत को ही मानकर चलती हैं। दो कमरे के छोटे से उस फ्लैट मे उन दोनों के सिवा तीसरा कोई नहीं है।

सवेरे उठ कर रिण घर द्वार साफ कर लेती है। अमृता नाश्ता तैयार करती है। मां और बेटी दोनों नाश्ता करके अपने-अपने काम से बाहर निकल जाती है।

रिण आर्ट कालेज में लेक्चरर है। इसके अलावा एक-दो ट्यूशन भी कर लेती है। छात्र-छात्राएं उसके घर पर ही आते हैं। बाहर जाकर समय नष्ट करने की फुर्सत उसे नहीं है।

मां को वह अब बंधा-बंधाया काम करने नहीं देती। इसकी जरूरत भी नहीं। अमृता देवी जो कुछ करना चाहती हैं, वही करती हैं। रिण उसमे बाधा नहीं डालती। बड़ी होने पर उसके जीवन का लक्ष्य ही यह बन गया है कि मां को जिस काम से खुशी हो, जिस काम से आनन्द मिले, वही काम वह करें।

मिशनरी स्कूल और मिशन दोनों जगह वे पार्ट टाइम पढ़ाती है। इसके अलावा बहुत-सी जन-सेवाओ और लोक-कल्याण के कामो में जुड़ी हुई हैं।

रिण के विदेश से वापस लौट आने के समय तक वे पूरे दम से काम करती थी। उन्हें ही सब चलाना पड़ता था। अब वह भार वास्तव में लड़की ने अपने सिर पर उठा लिया है।

शारदा देवी की बात याद आने पर अमृता देवी कभी-कभी बहुत दुखी

हो जाती हैं। मां के लिए कुछ कर पाने का सुयोग उन्हें नहीं मिला। छात्रा-वस्था में ही वे मां को खो बैठी। अगर वे इस धरती पर और कुछ दिनों के लिए रहती तो शायद कुछ और बात होती।

कभी-कभी उनकी अन्तर्रात्मा दहल उठती है। पूर्व जन्म में उनसे ऐसा कौन-सा पाप हुआ कि जो भी उनके सम्पर्क में आता है, वही चला जाता है।

मां!

देवतुल्य पति।

कितनी ही रात उनकी नींद टूट जाती है। बगल में सोई अपनी बेटी के सिर पर हाथ फेरती हुई वे उसकी मंगल कामनाएं करती हैं। उसके बाद चुपके कदमों से मां शारदा देवी की तस्वीर के निकट खड़ी होकर रिण के लिए प्रार्थना करती हैं।

उसी तरह अपने गुरुदेव से भी, जिनकी दया से उन्होंने इस दुनिया में मानव की तरह जिन्दा रहने का अधिकार पाया है। उसके बाद अपने उन पतिदेव की तस्वीर के निकट आकर सिर झुकाती हैं, जिन्हें आशातीत रूप से पाकर भी खो चुकी हैं।

सबों से एक ही प्रार्थना करती हैं, "रिण की रक्षा करो और मुझे राह दिखाओ।"

ये तीनों तस्वीरें उनके शयनकक्ष में टंगी हैं। रिण ने अनेक रात ऐसा दृश्य देखा है।

जब वह छोटी थी तब मां को बुलाकर कहती, "रात में उठकर इन तीनों तस्वीरों को प्रणाम क्यों करती हो? दिन में तो कर सकती हो?"

"पगली, प्रार्थना और प्रणाम करने का कोई खास समय होता है? जब मन होता है कर लेती हूं। दिन में भी कर लेती हूं। रात में भी कर लेती हूं।"

अब रिण बड़ी हो गई है। मां के लिए उसका मन रोता है। उसकी इच्छा होती है कि मां को कलेजे से लगाकर उनके सब दुःख दूर कर दे।

लेकिन कुछ भी नहीं करती। जब मां प्रणाम खतम कर उसके सिर पर

हाथ फिराते हुए बड़बड़ा कर प्रार्थना करती हैं, उस समय भी वह नींद का बहाना बनाकर लेटी रहती है और मन ही मन मां के लिए प्रार्थना करती है।

घर लौटकर दोनों जने जल्दी सो गईं। सवेरे बहुत-सा काम करना है। घर का पूरा काम कर, नाश्ता करके रिण अपने छात्रों के साथ बैठेगी। अमृता देवी बाहर निकल जाएंगी। शायद आश्रम में कोई काम है।

इसीलिए रिण दोपहर का भी खाना बना डालेगी। अधिकतर रविवार को प्रायः ऐसा ही होता है। बाकी रात तो संगीता के घर बंधा हुआ था।

अन्य दिन, मां-बेटी बाहर से लौट कर अपने हाथों रसोई बनाकर खाती हैं अथवा यदा-कदा बाहर हो खा आती हैं। इस समय किसी तीसरे व्यक्ति का साथ उन्हें अच्छा नहीं लगता। दोनों एक दूसरे के दिली दोस्त बन जाते हैं।

बातचीत के दौरान रिण ही अधिकतर वक्ता बनती है और अमृता श्रोता। *रिण की ओर देखते हुए अमृता मानों कृष्णराव का सान्निध्य* पाती है। वह भी ठीक इसी तरह का था। अभी जिस प्रकार वह रिण की बात सुनती है, ठीक उसी तरह वह अन्तहीन बातें बोलता और वह सुनती। रिण के अन्दर वह मानों जीवित हो उठता है।

कभी-कभी ऐसा भी होता जब अमृता यह भूल जाती कि वह काफी उम्र की हो चुकी है। उसका कृष्ण बहुत काल से जिन्दा नहीं है।

वह शादी के बाद की अमृता बन जाती है, जब रिण का जन्म भी नहीं हुआ था, उस समय जब रिणी नन्ही-सी थी।

"मां, तुम बहुत दुष्ट हो, केवल मैं बोलती रहती हूं। लेकिन तुम मेरी कोई भी बात नहीं सुनती। तुम अपनी कल्पना जगत में विचरती हो। ठीक है, अब से अगर कुछ बोली तो।"

"अच्छी बात है, मुझसे अपराध हो गया। इस बार के लिए मुझे माफ कर दो।"

रिण का क्रोध दूर होने में मिनट भर लगता है। फिर से उसकी अनर्गल बातें आरम्भ हो जाती हैं। मा का सान्निध्य अथवा बन्धुत्व

जितना आनन्द देता है, उतना और किसी का नहीं।

रिण की सहेलियों का अन्त नही। सभी उसकी दोस्त हैं। मगर वास्तव मे कहा जाय तो वह मां को ही अपनी एकमात्र सहेली मानती है।

हां, उसके बाद ही संगीता है। मां से वह जिस प्रकार की सब बातें कह लेती है, संगीता से शायद वैसा नही कह पाती।

सात

उस दिन छुट्टी थी। सूर्य बादलों की ओट मे मुह छिपाए था। अमृता अपने फ्लैट के छोटे से बरामदे मे बेंत की कुर्सी पर हाथ-पैर फैलाए आकाश-पाताल की बातें सोच रही थी।

उस दिन भी इसी तरह बादल छाए थे। मानव की तरह सूर्य देवता को भी आराम करने की इच्छा होती है। इसीलिए हम लोग शायद उनकी उपस्थिति से वंचित रहते है। शारदा देवी कुछ दिन हुए गुजर चुकी हैं। अमृता एम० ए० की छात्रा है। आश्रम के आश्रय में उसके दिन शांत और स्थिर रूप से गुजर रहे थे। महाराज अपने स्नेह और ममता के द्वारा उसकी मां की कमी को बहुत अंशो में पूरा करने की कोशिश करते हैं। मौका पाते ही अमृता भी उनके नजदीक दौड़ी आती है।

हमेशा से वह नि:संग है। बन्धु-बान्धव, शोर-गुल उसे अच्छे नही लगते। अनेक उसके नजदीक आने की कोशिश करते हैं— लड़के-लड़कियां, सहपाठिनी अथवा सहपाठक। लेकिन उसके मन की थाह कोई नही पा सका। जिस प्रकार उसका रूप और स्वभाव दोनों ही लोगों को उसके नजदीक खींच लाते, उसी तरह उसकी निस्पृहता उन्हे धीरे-धीरे उससे दूर कर देती।

कुछ दिन हुए एक व्यक्ति ने अमृता के मन मे अपनी छोटी-सी छाप रख छोड़ी है। वे डॉ० कृष्णराव हैं।

एम० ए० मे पढ़ाने आए हैं। पहली नौकरी है। पांडित्य के कारण काफी नाम कमा लिया है।

हारवर्ड यूनीवर्सिटी के डाक्टरेट हैं। उसी देश में बस सकते थे, लेकिन देश के खिंचाव के कारण वापस लौट आए।

दुबले-पतले स्मार्ट व्यक्ति हैं, मधुरभाषी। अगर कहा जाय तो अधिक बोलने की आदत है। हंसते भी काफी हैं। छात्र-छात्राओं से हंसी-मजाक भी कर लेते हैं।

दोस्तों का-सा व्यवहार है उनका। विदेशों में रहकर ऐसी ही आदत बन गई है। प्रोफेसर होने से ही उन्हें हमेशा गम्भीर रहना पड़ेगा, इसे वे जरूरी नहीं समझते। थोड़े दिनों में ही सब का नाम कण्ठस्थ कर लिया है। सब को नाम लेकर पुकारते हैं। लड़कियां डॉ० राव के नाम पर ही पागल थीं। वे किसके साथ अधिक बातें करते हैं, किसकी ओर अधिक देर तक देखते हैं, इन्हीं विषयों की आलोचना से कामनरूम सरगर्म रहता।

केवल अमृता ही इस मामले में रुकावट थी।

"क्यों अमृता, तुम्हें कैसा लगता है ?" बहुतों ने एक दिन अमृता से पूछा।

अमृता ने हंसते हुए जवाब दिया—"अच्छा ही लगता है।"

"अजी, उसकी बात छोड़ो। उसमें रस-वस रहे तब तो,…" मीनाक्षी ने कहा।

उस समय किसी को यह पता नहीं था कि उस नीरस मरुभूमि में भी शायद एक हरी रेखा दिखाई पड़ी है।

बादल भरे सुबह में अमृता अकेली टहलने निकली थी। छुट्टी के दिन थे। धूप भी तेज नहीं थी। पैदल चलकर ही आश्रम जाने की इच्छा थी। कंधे पर लटके झोले में कुछ किताबें थीं। महाराज के कमरे में बैठकर दिन भर कुछ पढ़ेंगी। शाम को आरती शेष होने पर होस्टल लौट आएगी।

"कौन, अमृता हो न ?"

जिनकी बातें मन के भीतर ताक-झांक कर रही थी, उन्हीं की आवाज़ सुनकर अमृता पहले-पहल चौंक पड़ी।

उसके मन की बात को ही नया जीवन मिला है।

अमृता ने आगे की ओर देखा। डॉ० कृष्णराव एकदम सामने खड़े

थे। वह सचमुच चौंक पड़ी।

"सिर झुकाए हुए शायद तुम कुछ सोचती जा रही थी, इसीलिए मुझे देख नहीं सकी। काफी चौंका दिया है न?"

"हां, थोड़ा चौंक तो गई हू।" अमृता बोली।

"मैं काफी दिनों से तुम्हें गौर कर रहा हूं। वास्तव में तुम्हें मालूम नहीं है। अगर ऐसा न हो तो सभी तुम्हारे जीवन का अनिष्ट कर देंगे। तो फिर समझ ही रही हो कि मैं कितनी बुद्धि रखता हूं। जिसे अधिकतर देखता हूं, वही समझ नहीं पाता है।"

अमृता का सफेद चेहरा लाल हो गया। उसका दिल धड़कने लगा। बिना कुछ जवाब दिए वह मौन रही।

ऐसा क्यों हुआ? क्या इसे ही प्रेम कहते हैं? पर अमृता ने तो तय कर लिया है कि वह किसी भी तरह गृहस्थी नहीं बसाएगी।

उसकी मां परिवार में रहकर भी संन्यासिनी थी। अगर कहा जाए तो वह भी आश्रम में महाराज के स्नेह में पलकर बड़ी हुई है। अगर वह पूरी तरह सन्यासिनी न भी बन सकी, तो भी जीवन यों ही बिता देगी। अब तक उसका मन एक जंजीर से ही बंधा था।

अचानक उसने दूसरा सुर क्यों पकड़ा?

नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। हां, उसे संयत होना ही पड़ेगा।

"क्या हुआ? चिन्तामग्न अमृता क्या फिर चिन्ता में लीन हो गई? इतना क्यों सोचती हो? दूसरों की अपेक्षा तुम बिल्कुल भिन्न हो। भिन्न सांचे में ढली हो। तुम अपने आप में ही लीन रहती हो।"

"आपने इतना गौर किया है?"

"ज़रूर। जिन्हें पढ़ाता हूं, उन्हें अपना ही मानता हूं। इसीलिए उन्हें समझने की कोशिश करता हूं। अगर ऐसा न हो तो उनकी इच्छानुसार कैसे पढ़ा सकूंगा? मैं चाहता हूं, वे सीखें, जानें। केवल हजम करें, ऐसी मेरी इच्छा नहीं।"

अमृता ने अनुभव किया कि क्लाम के हंसमुख और मिलनसार व्यक्ति के भीतर इतना हल्कापन नहीं है।

"अमृता, तुम्हें पता नहीं, मैंने तुम्हारी सभी खोज खबर ली है।"

"यह क्या ? इतना परिश्रम कर आपने मेरी खोज खबर क्यों ली ? मुझसे पूछने पर मैं ही सब बता देती।"

"तुम सोचती हो इसके लिए मुझे मेहनत करनी पड़ी है ? बिल्कुल नहीं।" वे हंसे।

"आप हंसे क्यों ?"

"यूनिवर्सिटी के सभी लोग तुम्हारे बारे में आकाश-पाताल एक कर रहे हैं। तुम नीरस अ र स्थिर हो, शायद इसीलिए ऐसा कह सकी। तुम्हारे बारे में सबों को सब कुछ मालूम है।"

अमृता हंसी, "आप तो सब कुछ जानते ही हैं।"

"आज छुट्टी के दिन तुम इतना सवेरे कहां जा रही हो ?"

"मैं ? आश्रम जा रही हूं।"

"मौका पाते ही वहां जाती हो न ?"

"हां। इतनी बड़ी दुनिया में मेरे अपने कहलाने वालों में हैं महाराज, और मेरा छोटा-सा परिवार है यह छोटा-सा आश्रम।"

"जीवन भर तुम इसी के साथ रहोगी अमृता ? इसके परे नजर उठा कर नहीं देखोगी ?"

एक दिव्य प्रकाश से अमृता का मुख अचानक उज्ज्वल हो गया।

"ऐसी ही मेरी आकांक्षा है। इतना बड़ा सौभाग्य मुझे प्राप्त होगा या नहीं, मुझे मालूम नहीं।"

डॉ० राव उसके मुंह की ओर देखते हुए चुप रह गए। सवेरे की स्निग्ध आबोहवा में उन्होंने दरार पैदा करना उचित नहीं समझा।

"मेरे साथ थोड़ी देर घूमने चलोगी, अमृता ? आश्रम पहुंचने में देर होगी। अर्थात् तुमने जिस समय वहां पहुंचने का निश्चय किया है, उससे थोड़ी देर अवश्य होगी।" कहकर डॉ० राव रुके।

"नहीं, ऐसी बात नहीं। मेरे जाने का बंधा-बंधाया कोई समय नहीं है। वह मेरी अपनी जगह है। अभी जा रही हूं, इसका पता किसी को भी नहीं है।"

"फिर तो कोई असुविधा न होगी। चलो, मेरे साथ कुछ देर घूम आओ। तुम घूमना पसंद करती हो। मैं भी।"

अमृता पहले हिचकिचाई। फिर अपने को स्थिर किया। अपने मन की दुर्बलता वह दूर करेगी। स्वाभाविक बनेगी। यही तो मौका है। इसी से मन संयत होगा।

"अच्छी बात है, चलिए।"

"मुझे आशा नहीं थी कि तुम आसानी से राजी हो जाओगी। अनेक दिनों से तुम्हारे साथ बातचीत करने की इच्छा थी। मौका नहीं मिल रहा था।"

प्रोफेसर रूम में आपका कमरा अलग है ही। क्लास में कहते। मैं वहीं चली आती।"

"नहीं, उस तरह नहीं। स्वाभाविक परिवेश में। आज जिस तरह मुलाकात हुई है।"

इसी बीच अमृता ने अपने मन में निश्चय कर लिया। इस तरह की बातों को वह प्रश्रय नहीं देगी। वह चुप रही।

"अमृता, तुम्हें समुद्र कैसा लगता है?"

"बहुत अच्छा।"

"तो फिर चलो, एक टैक्सी लेकर वहां कुछ देर के लिए बैठा जाए। उसके बाद तुम अपनी राह लगना और मैं अपनी।

अमृता को भी समुद्र काफी अच्छा लगता है, विभिन्न रूपों में, विभिन्न समय में और विभिन्न तरह से।

अभी मेघों की छाया में लहरों का कैसा रूप होगा, यह देखने की इच्छा अमृता के मन में अचानक जागृत हुई।

"तो फिर वहीं चलिए।"

प्रकृति के नाना रूपों और भावों को अमृता बहुत पसंद करती है। बचपन से ही वह उन्हें अपने मन की बातें बता चुकी है। अभी भी बारिश की बड़ी-बड़ी बूंदों के साथ, रिमझिम के साथ, चिड़ियों के कलरव अथवा फूलों के साथ उसका एकात्मबोध मौजूद है। पर मनुष्य के साथ उसे ऐसी उपलब्धि नहीं होती है। मां भी उसके लिए जीवित मानवी थी। इसके अलावा किसी ओर भी वह मन का खिंचाव अनुभव नहीं करती।

महाराज की बात अलग है। वे उसके गुरु हैं, उसके लिए स्वयं ब्रह्म।

उस दिन समुद्र ने अपने आपको मानो नये तौर से सजाया हो। प्रति-क्षण मेघ की घूंघट हटा कर वह किसी को देखने की कोशिश कर रहा है। मेघों से ढकी लहरों के बीच दरार पैदा होने लगती है। ऐसे ही मौके पर उसकी चकित चितवन नजर आती है।

अमृता को काफी अच्छा लग रहा था। विशेषकर कृष्णराव की बगल में चलते हुए।

यद्यपि अपने मन से उसने उसे बाहर निकाल दिया है, फिर भी उसकी तरंग अभी भी बाकी है। उसे सबसे अच्छी बात यह लग रही थी कि इतना बड़ा वाचाल आदमी कोई बात नही बोल रहा था। वह केवल चल रहा था, शायद किसी भावना में डूबा था।

कुछ देर के बाद वे बोले, "चलो अमृता, तुम्हे आश्रम के निकट पहुंचा दूं। और अधिक देर करना तुम्हारे लिए ठीक नही होगा। आज छुट्टी के दिन महाराज तुम्हारी प्रतीक्षा में होंगे।

"चलिए।"

आश्रम के निकट पहुंचकर कृष्णराव ने टैक्सी रुकवाई। "अमृता, तुम्हारे साथ तो कोई बातचीत ही नही हुई। आगामी रविवार को आज तुम्हें जहा और जिस समय देखा था, ठीक वही फिर देखने की आशा कर सकता हूं?"

लाख चेष्टा करने पर भी अमृता 'ना' नही कह सकी। मुह से आवाज नही निकली। केवल सिर हिलाकर अपनी सहमति बता दी। सामने से टैक्सी निकल गई। आश्रम में प्रवेश करते हुए अमृता यदि अपने काम का *समर्थन न कर सकी तो उसे गलत भी नही मान सकी।*

वह तो सबों के साथ बातचीत करती है, मिलती-जुलती है, फिर इनके साथ बातचीत क्यो नही करेगी? बातचीत न करना ही सबो की नजरों में विशेषकर खटकेगा। उसकी अपेक्षा अपने आपको सबों के बीच मिला देना ही अच्छा हुआ। सात-पाच सोचते-सोचते वह आश्रम के भीतर घुसी। किसी ने उससे कोई प्रश्न नही पूछा। यहीं की लडकी के रूप में वह आया-जाया करती है। वह सीधे महाराज के कमरे में गई।

इसी तरह कृष्णराव के साथ अमृता की मुलाकात बीच-बीच में होती

रही। सूर्योदय के समय समुद्र के किनारे पानी में पैर लटकाए दोनों प्रायः बैठे मिलते। अधिकतर दोनों मौन रहते।

तो अधिकतर एक वक्ता और एक श्रोता बना रहता है।

डॉ० कृष्णराय लगातार अनेक बातें बोलते रहते। कभी-कभी विदेश का अपना अनुभव सुनाते। पहले पहल हारवर्ड विश्वविद्यालय में जाकर उनकी आँखें खोल दी गई थीं। वहां के लोग अपने देश को कहां से कहां ले गए थे, इधर उनकी नजर पड़ती और वे सोचते रहते। भगवान की सृष्टि में अपना भी बहुत कुछ करने को बाकी है। यह बात वहां के लोगों ने समझ ली है अतएव समझने के लिए कमर कसकर लगे हुए हैं।

"ऐसा क्यों? जरा नजर उठाकर तो देखिए, किसी समय हमारे देशवासी भी इसी तरह पर चलते थे। चारों ओर मंदिरों की चित्रकारी देखते हुए क्या ऐसा प्रतीत नहीं होता?"

"तुमने ठीक ही कहा अमृता! कुछ दिनों के बाद अर्थात् प्रथम लगाव का दौर जब खत्म हुआ तब मैंने मन ही मन आगे सोचकर अपने देश को देखना सीखा। तुमने यहीं रहकर जो कुछ समझा उसकी उपलब्धि सात समुद्र पार आकर मुझे हुई।"

"आप ऐसी बातें क्यों करते हैं?"

"सचमुच ! आखिर ऐसा हुआ क्यों ? शायद आघात दर आघात सहकर हम निस्तब्ध हो चुके हैं। इसलिए कविगुरु की तरह यह बात समझने और समझाने की कोशिश बहुत कम लोगो ने की है कि दु.ख के बीच प्रेरणा-शांति दोनो ही है।"

"आप शायद रवि ठाकुर के बहुत बड़े भक्त हैं।"

"हां, वे मेरे गुरु हैं। उनकी रचना पढ़ने के लिए, उन्हें अन्तःकरण से समझने के लिए ही मैंने ब ला सीखी है।"

"क्या ? आप भी बंगला जानते हैं ?"

"हां, जानता तो हूं।"

"मैं भी जानती हूं।"

"सच, तुम क्यो ?"

"मेरे विषय में तो आप सब कुछ जानते ही है। मेरी मां रामकृष्ण की भक्तिन थी। इसीलिए उनका कथामृत पढने के लिए उन्होंने बंगला सीखी थी। इसके अलावा उनके गुरुदेव तो बंगाली हैं।"

"इसीलिए तुमने भी बचपन से ही बंगला सीख ली है ?

"हां।"

"देखो, हम दोनो के बीच दूसरी ओर से बेमेल रहने पर भी इस ओर से काफी मेल है। सच है न ?"

डॉ० राव दिल खोलकर हंसे। अमृता के चेहरे पर भी उसकी स्वाभाविक हंसी फूट पड़ी।

इसी तरह जहा-तहा दोनों की मुलाकात प्राय. होती। कभी-कभी पायनियर रोड स्थिति नेशनल आर्ट गैलरी मे जाकर वे दोनो काफी देर तक अपना समय गुज़ारते। इसी प्रकार बीच-बीच मे उन दोनों की मुलाकात एकांत और घर के बाहर होने लगी।

क्लास मे इस बात की बू किसी को न लग सकी।

अमृता को कृष्णराव के साथ घूमना काफी अच्छा लगता। इस प्रकार उनके परिवार की बहुत-सी बाते वह जान गई। कट्टर सनातन पंथी ब्राह्मण परिवार का वह लडका है। बचपन में ही मा छोड़कर चल बसी। पिता ने दूसरी शादी कर ली। सहोदर भाई-बहन कोई नहीं है। सौतेले भाई हैं।

अकेले वही पढ़ने-लिखने में तेज थे। छात्रवृत्ति के सहारे ही आगे बढ़े। जब बाहर जाने का मौका मिला तो मां-बाप ने अड़चनें डालीं। म्लेच्छों के देश जाने की ज़रूरत नहीं। गांव में जगह जमीन है, उसी से खोट-खाटकर चल जाएगा। लेकिन उन्होंने जाने का निश्चय कर लिया।

बाहर जाकर वे रुपये भेजेंगे,जिससे गांव में और अधिक जमीन खरीदी जा सकेगी। इसी आश्वासन पर उन्हें अपना काम हासिल करना पड़ा। सौतेली मां ने उनके पिता को समझाया,"तुम्हारे तो और भी दो लड़के हैं। वे ही हमारी लज्जा रखेंगे। अच्छा है, नालायक लड़का बाहर ही चला जाय। वहीं से रुपया भेजता रहेगा।"

पिता ने भी सोचा, यह बात बुरी नहीं। हमारे देश में एक कहावत प्रचलित है, 'मां के मरने पर बाप बैरी।' हर समय ऐसा नहीं होता। पर इस मामले में यही हुआ। वे राजी हो गए। कृष्णराव भी प्रणाम कर चल पड़े।

"वापस आने पर क्या हुआ?" अमृता अपनी दोनों आंखें फाड़कर सब सुन रही है।

"उसके बाद और क्या होता? यहां के प्रति तो कोई विशेष खिंचाव नहीं था और जो कुछ भी था, वह भी नहीं रहा।"

"वहीं क्यों नहीं रह गए? बहुत-से लोग तो रहते ही हैं।

"मैंने भी यही सोचा था। एक लड़की के साथ थोड़ी बहुत मुहब्बत भी चल रही थी। अचानक एक दिन मैंने देखा कि एक निग्रो की ओर नजर पड़ते ही उस लड़की की दोनों आंखों में घृणा की छाया फैल गई।"

"क्यों?"

"कालों के प्रति अवहेलना। तभी नजर खुल गई। आज कालों के प्रति है, कल भूरों के प्रति! ऐसा होने में कितना समय लगेगा? आज पूरा पश्चिम इसी रोग से ग्रसित है। अपना खुद का देश रहने के बावजूद किस बला से वहां द्वितीय श्रेणी के नागरिक के रूप में रहूं? मैंने मन में तय कर लिया और आज मैं यहां हूं।"

इसी तरह एक दिन जब वह उनके साथ घूम रही थी तो उसने सुना कि अभी भी डॉ॰ राय को उनके पिता घर में घुसने नहीं देते, क्योंकि ये

गोबर खाकर प्रायश्चित्त करने के लिए राजी नहीं हुए। पर इनके रुपयों से घर में किसी को आपत्ति नहीं है। अमेरिका से भी रुपया भेजते। इसीलिए आज उनकी अवस्था बहुत अच्छी हो गई है। कॉफी का बगीचा भी खरीद चुके हैं। दोनों लड़कों की शादी हो चुकी है। भरा-पूरा परिवार है। जगह पाना यों ही मुश्किल है। इन सब बातों से मुझे दुःख नहीं होता। बचपन से ही मैंने घर के बाहर बिताया है। देश से मुझे प्रेम है, इसीलिए दोनों हाथ बढ़ाकर देश ने मुझे अपना लिया है। इसके अलावा हैं मेरी किताबें।

अमृता चुपचाप सब कुछ सुनती। उसका हृदय डॉ० राव के लिए व्यथित हो उठता। अनजाने ही वह उनकी ओर धीरे-धीरे खिंचने लगी। वह इस तथ्य से अनजान नहीं रही कि कृष्णराव के मन में भी उसके प्रति कमजोरी है। सीधे तौर पर न कहने के बावजूद भाव-भंगिमा से वह साफ समझ लेती।

आठ

स्वामीजी ने एक दिन खिड़की से बाहर की ओर देखा। कृष्णराव अमृता को पहुंचाकर बाहर से ही चले गए। यद्यपि डॉ० राव से आमने-सामने उनकी बातचीत नहीं हुई थी, फिर भी वे चेहरे से उन्हें पहचानते थे। अमृता के मुख की ओर देखकर उन्होंने मानो कुछ अनुभव किया।

"महाराज, मैं आ गई।" कहते हुए अमृता ने महाराज के पैर की धूल ली और उनके पैरों के निकट बैठ गई। बचपन से ही कुछ देर तक उनके निकट बैठना अमृता की आदत थी।

"कुछ कहोगी ?"

"नहीं, वैसी कुछ बात नहीं।" कहते हुए अमृता ने महाराज के मुख की ओर देखा। यद्यपि वे मौन थे, फिर भी उनकी आंखों में मानो एक प्रश्न-चिह्न था। बचपन से ही अमृता अपनी सभी बातें उनसे कहती आई है, परन्तु जिस नई अनुभूति का अनुभव उसने किया है, वह बात कह नहीं सकी। अमृता अभी भी संदेह के बीच भटक रही थी। पर अभी भी उसका मन

उसके वश में है। इच्छा होते ही वह अपने को मोड़ ले सकती है, यद्यपि इससे उसके मन को एक धक्का-सा लगेगा।

उसने मन-ही-मन सोचा कि वास्तव में यही वह समय है जब उसके लिए दोनों दिशाएं खुली हुई हैं। वह निकल भी सकती है, अग्रसर भी हो सकती है। इसके बाद कुछ भी कहना अर्थहीन होगा। कथनीय-अकथनीय के बाहर गुरुजनों को बताना अकथनीय में शामिल है।

"महाराज, आपने ठीक ही कहा। आपसे अनेक बातें कहने को हैं।"

"बताओ, क्या कहना चाहती हो ?"

"अब तक मेरा फैसला यही था कि किसी भी रूप से मैं अपने को 'परिवार' के साथ किसी भी दिन नहीं जोड़ूंगी। इसी प्रकार सेवा करते हुए आपकी शरण मे दिन बिता दूंगी।"

"उसमें कुछ रुकावट आई है ?"

"नहीं, ऐसी कोई विशेष रुकावट नहीं है जहां से निकला न जा सके।"

"अपना संशय साफ-साफ बताओ !"

"आपने हमारे प्रोफेसर डॉ० राव की बात शायद सुनी है।"

"सुनी तो है। काफी विद्वान् व्यक्ति हैं। प्रवचन देने के लिए उन्हें एक दिन बुलाने की बात सोच रहा हूं।"

अमृता को मौन देखकर महाराज ने कहा, "कहो, अमृता ! तुम शायद कुछ कहने जा रही थी ?

"मुझे ऐसा लगता है कि डॉ०कृष्णराव मुझसे शादी करना चाहते हैं।"

"इसका तात्पर्य ?"

"यद्यपि उन्होंने मुझसे सीधे तौर पर कुछ नहीं कहा, फिर भी तरह-तरह से मुझे समझा जरूर दिया है। किसी भी दिन कह सकते हैं।"

"तुम क्या कहती हो ?"

"मैंने पहले ही बता दिया है कि मैं 'परिवार' बसाना नहीं चाहती। उसके बाद मैंने और कुछ नहीं कहा।"

"तुम्हारी क्या इच्छा है ?"

सिर झुकाये अमृता ने धीरे-धीरे कहा, "आपकी आज्ञा के बिना मैं कुछ

नहीं करूंगी। मुझे वे पसन्द हैं फिर भी उनकी ओर से अपने को मोड़ लेने की शक्ति मुझमें है, यदि आप कहें तो…।"

महाराज काफी देर तक चुपचाप बैठे रहे। उनके मुख को देखते हुए ऐसा लगा, मानो उनके हृदय में हलचल पैदा हो गई है। डॉ०राव हर दृष्टि-से उपयुक्त हैं। उनकी प्रशंसा उन्होंने भी सुनी है।

"किन्तु…?"

मगर इसके बीच बहुत बड़ा 'किन्तु' लगा हुआ है। शारदा देवी जिस बात को कहे बिना ही मर गईं, क्या वह बात अनजान ही रह जाएगी ? जिसकी वह बात है, वह जानेगी भी नहीं ?

इस धरती पर अबी वे ही अकेले व्यक्ति हैं जो सच्चाई को जानते हैं। उनके मर जाने पर वह भी खत्म हो जाएगी। अब तक अमृता जिसे जान नहीं सकी, बिना जाने ही इतनी मंजिल निर्विघ्न तय कर आई है तो बाकी मंजिल भी तय कर सकेगी।

फिर ऐसा ही हो।

सरोवर से कीचड़ निकालने की ज़रूरत ही क्या है ? कीचड़ पर जो कमल खिला है सभी उसे ही देखें और कमल फूल भी खुशी से अपनी सुन्दरता चारों ओर सबके बीच फैलाता रहे। उसकी कीचड़ नीचे ही दबी रहे।

मगर तुरन्त स्वामीजी ने सिक्के के दूसरे पहलू की ओर भी गौर किया। अमृता ने पथ ही कितना तय किया है ? अभी भी उसके सामने अशेष-पथ पड़ा है।

उनके देहावसान के बाद किसी भी दिन और किसी भी तरह अगर सच्चाई खुल गई तो क्या अमृता अकेली उसे सह सकेगी अच्छा है, सत्य की ही विजय हो।

वह घर-गृहस्थी में प्रवेश करने की बात सोच रही है। यही वह समय है जब उससे सब कुछ साफ-साफ कहा जा सके। उसकी जो उम्र हुई है, उसने जो शिक्षा पाई है, उसके अनुसार अपने पैरों पर खड़ा होने की शक्ति उसमें जरूर होनी चाहिए।

इसके अलावा वे तो उसके नजदीक हैं ही।

इन सब बातों को जान लेने के बाद अगर कृष्णराव उसे अपनाने के लिए राजी हो, तभी वह सचमुच का अपनाना होगा।

बालू की भीत का घर बनाने की चेष्टा सबसे भारी भूल होगी। उसके ढह जाने पर मनुष्य खड़ा होने की शक्ति खो बैठता है। इसीलिए अगर मकान बनाना हो तो उसकी नींव मजबूत होनी चाहिए, अन्यथा राह के लोगों के लिए राह पर ही रहना अच्छा है।

"आप इतना क्या सोच रहे हैं, महाराज ? डॉ० राव आपको पसन्द नहीं है ?"

थोड़ी देर बाद अमृता ने फिर से कहा, "अच्छी बात है मैं उनकी राह से धीरे-धीरे हट जाऊंगी। पहले-पहल थोड़ा कष्ट होगा, पर बाद में सब ठीक हो जाएगा। समय किसी के लिए बैठा नहीं रहता।"

"नहीं अमृता, मैं ऐसा नहीं सोचता। डा० राव के बारे में मैंने लोगों से जो कुछ भी सुना है, उससे मुझे ऐसा लगता है कि वह तुम्हारे लिए उपयुक्त हैं। लेकिन इसके पीछे 'किन्तु' लगा है।"

"आप कहना क्या चाहते हैं, महाराज ! मैं समझ नहीं सकी।"

"तुम्हें तो मालूम है अमृता कि राजा जनक को सीता देवी धरती माता के सीने पर पड़ी हुई मिली थी। सीता साधारण कन्या नहीं थी। वे इस धरती की बेटी थी। धरती मां की बेटी थी। राजा जनक ने अपनी कन्याओं की शादी के लिए वही व्यवस्था की थी जो अन्य लड़कियों के लिए की जाती है। लेकिन सीता देवी से शादी करने के इच्छुक वर के लिए उन्होंने एक अजेय धनुष भंग का प्रण रखा था, जिसे केवल रामचन्द्रजी ही झुका सके थे।"

"महाराज, मैं आपकी बात समझ नहीं पा रही हूं।"

"मैंने तुम्हारा नाम अमृता क्यों रखा इस विषय पर तुमने कभी गौर किया है ?"

"हां, महाराज ! बचपन से सुनती आ रही हूं। आश्रम के स्वामीजी कहते, तुम चारों ओर अमृत वर्षा करोगी, इसीलिए तुम्हारा नाम महाराज ने अमृता रखा है।"

"कुछ अंशों में सत्र होते हुए भी यह पूरा सच नहीं है।"

महाराज की भूमिका भरी ये बातें अमृता समझ नहीं रही थी। वह चुपचाप सोच रही थी—आज से पहले महाराज इस तरह घुमा-फिरा कर बातें नहीं कहते थे।

अमृता का मन चंचल हो उठा। वह कुछ बोल नहीं सकी। महाराज की ओर देखते हुए वह चुपचाप बैठी रही।

"तो फिर सुनो! तुम्हारे जान लेने का समय आ गया है। तुम अमृत-पुत्री हो, इसीलिए तुम्हारा नाम अमृता रखा है।"

"महाराज, अमृत-पुत्र तो सभी है—हम सभी परमब्रह्म की सन्तान हैं।"

"तुम्हारा कहना सच है, अमृता! फिर भी एक फर्क है। सीता देवी पृथ्वी-पुत्री थी। जिस प्रकार राजा जनक ने उन्हे मिट्टी से उठाया था, उसी प्रकार मैंने भी तुम्हें मा धरती की क्रोड़ से उठाया है।"

कुछ देर चुप रहकर उन्होंने कहना जारी रखा, "वह सुबह अन्य सुबह की अपेक्षा बिलकुल भिन्न थी। मधुर हवा चल रही थी। आधे अंधकार और आधे प्रकाश के बीच मैं टहल रहा था। वह प्रकाश और अंधकार की संधि-बेला थी। अचानक मेरी नजर स्वर्ग के एक पारिजात फूल पर पड़ी जो न मालूम किस तरह इस मर्त्यलोक के सीने पर गिर पड़ा था। उठाकर सीने से लगा लिया। स्वर्ग का वह फूल धरती की आबोहवा मे जिन्दा नही रह सकता, इसीलिए उसे शारदा के हाथों सौंप दिया। वह मानवीय रूप मे देवी थी। वही तुम्हारी उपयुक्त मा होगी।" इतना कहकर महाराज चुप हो गए।

"यह क्या महाराज? आज तक जो कुछ भी सुना है, वह सब झूठ है? मैं अपनी मा की कोई नहीं हूं? मेरा वास्तविक परिचय कुछ नही है?"

"तुम्हारा सबसे बड़ा परिचय यही है कि तुम ईश्वर की सन्तान हो। एक बात और, तुम यह जानती हो फिर भी कहता हूं, जो पालन करती है वह जन्मदात्री से भी बड़ी होती है। जो जन्म देती है वह एक बार ही कष्ट सहती है, लेकिन जो पालन करती है उसे प्रति-पल, प्रति-दिन, प्रति-माह और प्रति-वर्ष यह कष्ट सहना पड़ता है। हमारे शास्त्र मे ...

दोनों ही मां हैं। बहुत-से लोग एक के अन्दर ही दोनों को पा लेते हैं।

अमृता बहुत देर तक सिर झुकाए बैठी रही। यद्यपि वह आश्रम में पली है। शारदा देवी जैसी मां के निकट बड़ी हुई है, महाराज के स्नेह की भागिनी बनी है, फिर भी उसके मन के भीतर एक हलचल सी मच गई। उसे अचानक ऐसा अनुभव हुआ मानो उसके पैरों के नीचे की धरती खिसक रही है। नजरों के सामने की ज्योति बुझ रही है। जिस पर वह खड़ी थी वह टूट-फूट कर चकनाचूर हो रहा है।

उसके मुंह की ओर देखकर महाराज उसके मन की अवस्था जान गए। धीरे-धीरे अपना हाथ उसके सिर पर रखा।

"तुम्हें अवश्य ही याद होगा, महाराज हमेशा से कहते आए हैं और कहते हैं, हमेशा सत्य पर डटी रहो। उससे कभी अडिग मत होना। अभी भी मैं वही कहता हूं। हम सभी ईश्वर की संतान हैं। उससे बढ़कर हम-लोगों का परिचय और कुछ नहीं। इस समाज में उस परिचय को भूल कर इस छोटे से परिचय को ही बड़ा माना गया है, इसीलिए आज दुनिया में इतना दुःख, इतना कष्ट, इतना पाप और इतना अनाचार फैला हुआ है। मनुष्य द्वारा गढ़ी हुई यह बेड़ी बड़ी नहीं है, अमृता! इतना होते हुए भी स्वर्ग के उस पारिजात को बचाने के लिए मैंने और तुम्हारी मां ने यह पथ अपना लिया था।" महाराज थोड़ी देर के लिए रुके, "मैंने निश्चय किया था कि समय आने पर तुम्हें सब कुछ बताऊंगा। आज तुम अपने पैरों पर खड़ी हो सकी हो। शारदा जैसी मां के निकट बड़ी हो। मेरा स्नेह तुम्हें मिला है। सबसे बड़ी बात यह है कि अपने पूर्व जन्म के पुण्य बल पर तुम्हें ऐसा अनाविल स्वभाव मिला है। तुम सीता जैसी हो। इसीलिए जो तुम्हारी याचना करेगा उसे राम जैसा बनना पड़ेगा। तभी वह तुम्हारे लिए उपयुक्त होगा।"

इतनी देर बाद अमृता ने महाराज की ओर सिर उठाकर देखा। उसे ऐसा लगा मानो उनके मुखमंडल से एक दिव्य रश्मि निकल रही है। वह बोली, "महाराज, यह सब सुनकर पहले तो मेरा मन चंचल हो उठा था। मैं परिचयहीन हूं। किस प्रकार मैं सबकी नजरों से ओझल होऊं, कहां छिपूं? किन्तु आपकी सभी बातें सुनने के बाद मेरे मन का अन्तर्द्वन्द्व मिट

चुका है। मैं 'अमृत-पुत्री' हूं। देवी तुल्य मां के निकट पली हूं। भगवान के प्रतिभू है आप, उन्हीं की स्नेह-छाया में बढ़ी हूं। मेरे जैसा भाग्यवान कौन है ? आपने ठीक ही कहा।"

"खैर, तुम सब कुछ समझ गई। मुझे यकीन था, तुम ऐसा कर सकोगी। अगर ऐसा नहीं होता तो स्वर्ग में भी शारदा अपनी व्यर्थता पर कष्ट पाती। अब तुम जैसा उचित समझो वही करो। मुझे कुछ कहना नहीं है।"

"मैंने फैसला कर लिया है। मैं पहली प्रतिज्ञा पर ही अडिग रहूंगी। अर्थात् शादी किए बगैर मैं सेवा-धर्म अपनाऊंगी।"

"गृहस्थाश्रम में रहकर भी भगवान को याद रखा जा सकता है और उसके बाहर भी। यह सब जानते हुए भी अगर डा० राव तुम्हें ससम्मान ग्रहण करें तो मुझे आपत्ति न होगी। तुम सोचकर देखो।"

अमृता धीरे-धीरे उठी।

"रात हो आई महाराज, मैं चलूं। मैं आपको सब कुछ बताऊंगी। हर बात।"

प्रणाम करते ही महाराज ने उसका सिर अपने सीने में छिपाकर कहा, "अमृता, तुम अमृत बर्षाओ, चारों ओर शान्ति फैलाओ, यही मेरी प्रार्थना है। खुद पा लेना तो साधारण सी बात है, दूसरों को देना ही सबसे बड़ा कर्म और धर्म है।"

नौ

निर्धारित समय एवं स्थान पर काफी देर तक प्रतीक्षा करने के बावजूद, जब अमृता नहीं आई तब डॉ० राव धीरे-धीरे लौट चले।

आज बहुत बड़ी आशा लेकर आए थे कि वे अपने मन की बातें अमृता से बताएंगे।

काफी देर तक उन्होंने सोच-विचार किया। किसी भी चीज के बारे में हठात् अपनी धारणा बना लेने वाले व्यक्ति वे नहीं हैं।

उनके अन्दर दो सत्ताएं निवास करती हैं। उनका बाहर जिस प्रकार हल्का और जिन्दादिल है, ठीक इसके विपरीत उनका भीतर धीर और स्थिर है। अपनी पढ़ाई-लिखाई में मशगूल रहेंगे और साथ रहेंगे उनके छात्र-छात्राएं तथा दोस्त। ऐसी ही जिन्दगी उन्होंने अपना ली थी।

अमृता को देखने के बाद उनके मन में एक नया परिवर्तन हुआ था। हां, अमृता ही उनकी उपयुक्त संगिनी हो सकती है। इतने दिनों तक वे शायद उसे ही ढूढ रहे थे। उसके मिल जाने पर वे अपनी साधना में सिद्धि लाभ करेंगे।

पहले पहल सोचा दोनों के स्वभाव में जमीन-आसमान का अंतर है। परन्तु धीरे-धीरे उन्हे ऐसा महसूस हुआ कि बाहरी आवरण में ही जो कुछ अंतर है, भीतर दोनों का एक ही है। चिन्ता-धारा और जीवन-धारा में कोई अंतर नही। अब तक किसी को ऐसा नही पाया था। आज उसे न देख पाने पर उनका मन चंचल हो उठा। कल भी उसे क्लास में देखा था। ठीक तो थी। तब ?

आई क्यों नही ?

उन्होंने ऐसी कौन सी बात कह दी, जिसने उसे अलग कर दिया ? अथवा उनके किस व्यवहार ने ? वे कुछ सोच नही पाए।

सोचा था कहेंगे। फिर ?

क्लास में उसे पकड़ा नही जा सकता। इसके अलावा क्लास के अंत में वह एक मिनट के लिए भी रुकती नही। फिर सबके सामने बातचीत करना उचित न होगा।

कई दिनों तक कोशिश करने के बावजूद जब डा० राव अमृता से मिल नही सके तो वे हताश हो गए। सौतेली मां के आने के बाद से ही वे परिवार से बिछुड़ गए थे। किताब ही उनकी संगिनी थी, वही उनका प्राण था। इस ओर से भगवान ने उन्हें दिल खोलकर दिया था। एक के बाद दूसरी परीक्षाओं में उन्होंने अच्छा से अच्छा किया था। उसके बाद अमेरिका जाने का निमंत्रण मिला। व्यक्तिगत जीवन में अप्राप्ति धीरे-धीरे छोटी से छोटी होती गई। अंत में सब कुछ घुल-मिल गया। बचा केवल एक सूत्र-कर्तव्य। उसे उन्होंने पूरे तौर पर निभाया। सप्ताह के अंत

में एक पत्र और महीनें के अंत में एक मोटी सी रकम जन्मदाता को मिलती रही।

अमृता को देखने के बाद उन्होंने महसूस किया कि इस दुनिया में कर्तव्य के अलावा और भी कुछ है—स्नेह, ममता, प्रेम। इन सबको बिल्कुल नजरअंदाज नहीं किया सकता।

छुट्टी के दिन की सुबह के लिए दिन गिना करते। निर्धारित स्थान पर वह आएगी। दोनों अगल-बगल टहलेंगे अथवा बैठेंगे।

कभी बातचीत करेंगे, कभी दोनों अपनी-अपनी चिंताओं में मशगूल रहेंगे। इतना होते हुए भी दोनों के हृदय में सान्निध्यावेश अवश्य मौजूद रहेगा। डा० राव अमृता के बारे में मन ही मन अनेक कल्पनाएं किया करते। जो व्यक्ति कथा सरित सागर था वह असल स्थान पर ही एक विचित्र बात का अनुभव करता।

इसीलिए कहने की बात सोचते हुए भी कुछ कह नही सके। कुछ ही दिनों में उन्होंने महसूस किया था कि अमृता के बिना उनका जीना कठिन हो जाएगा। वे इस बात को भी भली-भांति समझते थे कि अमृता जिस तरह बडी हुई है वह दुनिया के बीच रहकर भी दुनिया से बाहर रह सकेगी। वह अंतर्मुखी है। उसकी-सी मानसिक शक्ति क्या स्वयं उनमें है ?

यह उन्होंने क्या किया ?

जिससे वे कुछ भी नही कह पाए, उसी के बीच अपने आपको उजाड़ कर विलीन कर दिया है। अब वे क्या करें ?

चाहे जैसे भी हो अमृता को पकड़ना ही होगा। उसे समझाना होगा, क्योंकि अब उसके सिवा अपना कहलाने वाला कोई नहीं है।

यह चढती जवानी का पागलपन नही, वासना का आकर्षण नही, यह है मन का मेल। अमृता को समझाना ही होगा। वह जिस राह पर चलेगी, जैसे भी चलेगी उसमें दखल दहानी देने की जरूरत नही। अगर वह उन्हें महाराज का शिष्य बनने को कहेगी तो वे उस पर भी राजी होंगे। मगर उसे अकेले कैसे पाया जाए ? लड़कियों के छात्रावास में वे जा नही सकते। इससे अमृता की तौहीन होगी। वे ऐसा कभी नही कर सकते। प्रेमिका को

सबके सामने सबसे ऊपर देखने की इच्छा ही तो स्वाभाविक बात है। तरह-तरह की चिंताएं करते हुए वे बिना सोए ही रात बिताने लगे। अमृता की न कोई सहेली ही है और न हैं अपने स्वजन जिसके निकट वह जा सके, जिससे अपने मन की बातें खोलकर कह सके। सबको ऐसा अनुभव होता कि इतना हंसोड़ व्यक्ति मानो अचानक गंभीर हो गया है। सबसे पहले अमृता को ही ऐसा अनुभव हुआ।

खुद अपने तथा डा० राव के लिए अमृता का हृदय व्यथा से भर गया। मगर वह लाचार है। उसे जबर्दस्ती अपने संकल्प पर अटल रहना होगा।

एक दिन महाराज के निकट बैठते ही उन्होंने प्रश्न किया—"इतने दिन तो गुजर गए, फिर भी तुमने मुझे कुछ बताया नहीं, अमृता? बोली थी, बताओगी।"

"कहने लायक कुछ घटना ही नहीं घटी, इसीलिए बताया भी नहीं।"

"इसका अर्थ?"

"उसके बाद से मैंने डा० रावसे मुलाकात ही नहीं की।"

"उनमें कुछ परिवर्तन देख पाई हो?"

"दूर से मुझे मालूम पड़ता है, वे दुखी हैं।"

"सब कुछ कहने से कैसा रहता?"

"इसकी जरूरत ही क्या है, महाराज? सब कुछ सहन हो जाता है। समय पर वे रास्ता ढूंढ़ ही लेंगे।"

"यह तो ठीक है, पर तुम्हें बहुत क्लांत और क्लिष्ट पाता हूं, अमृता। तुम्हें देखने के बाद सोचता हूं क्या मैंने कोई गलती की? मैं भी तो मनुष्य हूं।"

"नहीं महाराज, आपने ठीक ही किया। यद्यपि मेरे मन को आघात लगा है, फिर भी, यह भी ठीक है कि आपकी शिक्षा ने मुझे पथ दिखा दिया है। मेरे लिए चिन्ता न करें।"

महाराज कुछ बोले नहीं।

इसका समाधान क्या है? कुछ सोच नहीं पा रहे थे। अब तक इस समाधान का पता लिया। बहुत सोच-विचार के बाद, बहुत दिनों प्रतीक्षा करने के बाद डॉ० राव को यह उपाय सूझा। महाराज के निकट जाने पर शंका के बारे में जाना जा सकता है। अगर कहा जाए तो वे ही उसके अधिकारी हैं।

यह साधारण सी बात अब तक उनके मन में क्यों नहीं आई। यह शायद दिया तले में अँधेरा रहता है ठीक उसी प्रकार दिमाग में ही होता है। इसीलिए आसान और छोटी सी बात भी मन में नहीं आती।

डॉ० राव मन ही मन हँसे। अब तक सभी उन्हें बुद्धिमान् मानते आए हैं, पर उन्होंने खुद अपनी बुद्धि की दौड़ परख ली। वास्तव में उनमें उप-स्थित बुद्धि का अभाव है।

अंग्रेजी की एक कहावत याद आई—'कॉमन सेंस'। अर्थात् साधारण बुद्धि को साधारण कहा जाता है, पर यह साधारण बिलकुल नहीं है। दुनिया में सबको इसी का अभाव रहता है! पता नहीं किसने मजाक के तौर पर इसका प्रचलन किया था। इसका अभाव ही दुनिया के सारे दुखों का मूल कारण है।

बहुत सोच-विचार के बाद डॉ० राव आश्रम में हाजिर हुए महाराज के दर्शनाभिलाषी के रूप में। सज्जन और पंडित की हैसियत से उनकी ख्याति पूरे मद्रास में फैली हुई थी। मुलाकात अथवा बातचीत न होने पर भी सभी, महाराज भी उनके नाम से परिचित थे।

इधर महाराज का मन भी कह रहा था कि एक न एक दिन डॉ० राव खुद उनके निकट आएँगे। आज तक उन्हें इस बात का सबूत मिल चुका था कि उनका मन जिस बात की गवाही देता है, वही होता है। यह दुर्लभ शक्ति शायद उनके आजीवन ब्रह्मचर्य पालन का फल है।

कृष्णराव के कमरे में घुसते ही महाराज ने "आइए डॉ० राव" कह कर सादर अपने निकट बिठाया। प्रणाम कर जब डॉ० राव बैठे तब महा-राज ने कहा, "कई दिनों से सोच रहा था कि प्रवचन देने के लिए आपको आमंत्रित करूं। अच्छा हुआ आप खुद आ गए। आप जैसे सुपंडित का प्रवचन सुनने के लिए सभी आग्रही हैं।"

"आप क्या कह रहे हैं, महाराज ! इतने कम समय मे मैंने जाना ही क्या ? यह तो पहली सीढी है। आजीवन साधना के उपरात भी यदि थोडा-सा ज्ञान पाऊं, ऐसा आशीर्वाद दें।"

"विद्या विनय देती है। आपकी बात ही इसका प्रमाण है। ईश्वर आपकी आकाक्षा पूरी करें।"

यद्यपि कृष्णराव के मन में अमृता की बात चक्कर काट रही थी, फिर भी बाहरी तौर पर अन्य विषयो पर आलोचना होती रही। असली बात किसी भी तरह वे कह नही पाते। गले तक आकर वह अटक जाती। कहां से और किस सूत्र को पकडकर वे आरम्भ करें सोच ही नही पाते। महाराज मन-ही-मन सब कुछ समझ रहे थे, मगर वे चाहते थे कि कृष्णराव खुद ही इस विषय मे बोलें।

अमृता की बात से वे समझ गए थे कि वह डॉ० राव से कन्नी काटती है। वे यह भी जानते थे कि दोनों को एक दूसरे से प्यार है। यह भी कोई गाठ नही। डॉ० राव को देखकर तथा उनसे बातचीत करके वे इस समझते थे कि इसमें विषय मे निश्चित हुए। उन्हे मन-ही-मन इस बात का दुख था कि अमृता सत्य का सामना क्यों नही कर पाती। क्या उनकी इतने दिनों की शिक्षा व्यर्थ जाएगी ? शारदा देवी के मन का जोर क्या लड़की को न मिला ?

दूसरी ओर मन मे यह भी सोचा कि वह सीधे तौर पर गृहस्थी जीवन मे प्रवेश करे या नही इस अन्तंद्वन्द्व की मीमासा शायद अभी तक नही कर पाई है। बाहर से दोनों तरह-तरह के गम्भीर विषयो पर आलोचना करते रहे, पर दोनो के मन की भावना बिल्कुल विपरीत थी।

डॉ० राव सोचते कब और किस तरह असल बात शुरू करें और महाराज सोचते डॉ० राव कब असल बात पर आते है।

डॉ० राव के मन में यह भी दुश्चिता थी कि अमृता अचानक आ न पड़े। घर की लड़की की तरह वह जब तब यहा आ जाती है। तब क्या होगा ? अगर ऐसा हुआ तो कहा भी नही जाएगा।

इतने दिनो तक अपने मन मे चिंता का भार लिए वे सम्भाल नही पा रहे थे। इसीलिए आज महाराज की शरण में आए हैं।

जीवन मे अनेक घात-प्रतिघात के बीच से उन्हे अग्रसर होना पड़ा है। उनकी बगल मे कोई खड़ा हो सके,ऐसा किसी को नही पाया। इन बाधाओं के बावजूद वे आगे बढ़े। इसीलिए ईश्वर में उन्हे विश्वास था। आज उसी साहस को पाथेय बनाकर वे महाराज के सामने खडे है।

उन्हें सब बात मालूम करनी होगी। अमृता क्यों उनसे दूर भागती है? अचानक ऐसा क्या हुआ? उनके अनजान मे ऐसा क्या हो सकता है?

महाराज ही एकमात्र ऐसे व्यक्ति हैं, जिनसे सभी बातें सटीक मालूम हो सकती हैं। इसीलिए डॉ० राव अपने को रोक नही पाए और दूसरी बातों के बीच ही बोले—"महाराज, अगर आप अनुमति दें तो आपसे कुछ प्रश्न करू। अगर इसे अनधिकार चर्चा मानें तो क्षमा करेंगे।"

"मुझे यह अच्छी तरह मालूम है कि आप जैसा व्यक्ति अनुचित प्रश्न नही करेंगे। कहे, आप का प्रश्न क्या है? किसी बात का सकोच न करें। मनुष्य की द्विधाओं की मीमांसा करने की चेष्टा करना,उनके मन को शाति पहुंचाना ही तो मेरा काम है। हमारे गुरुदेव ऐसा ही कह गए है। इसीलिए यही हम लोगों का मन्त्र और धर्म है। आपको कौन-सी बात कष्ट दे रही है, बताएं।"

"अमृता तो आश्रम की ही लड़की है न?"

बाधा देते हुए महाराज ने कहा—"शारदा देवी ने उसे लायक बनाया। अमृता हमारे स्नेह की पात्री है।"

"हा, महाराज! मैं यही कहना चाहता था। वह मेरी छात्रा है। मेरे विषय मे आपसे उसने कुछ बताया नही?"

"हा, बताया तो है। मुझसे वह सब कुछ बताती है। खासकर शारदा देवी की मृत्यु के बाद से वह मुझसे कुछ नही छिपाती।"

"तब तो मेरे लिए बात और भी सहज हो गई। उसी से मैंने भी सुना है कि मा के मरने के बाद आप ही उसके एकमात्र अपने है।"

बिना कोई उत्तर दिए महाराज मन लगाकर सब कुछ सुन रहे थे। साथ ही कृष्णराव के चेहरे पर दृष्टि गड़ाए उसे समझने की कोशिश कर रहे थे।

उन्हें विश्वास हो गया था कि अमृता के प्रति उन्हे प्रगाढ प्रेम है और,

यह भी समझ चुके थे कि वे अमृता के लिए उपयुक्त हैं। हर दृष्टि से, विशेषकर मनुष्यत्व के विचार से।

जीवन भर वे काफी व्यक्तियों के सम्पर्क में आए हैं, मगर बहुत कम व्यक्ति ही ऐसा देखने को मिला है।

डा० राव ने कहना जारी रखा—"कुछ दिनों से हम लोग काफी निकट आ गए हैं। एक दूसरे को देखने-सुनने के बाद ऐसा लगा कि हम दोनों में काफी मेल है। उस जैसी लड़की के लिए मैं वास्तव में उपयुक्त नहीं हूं। यह बात शायद वह समझ गई है। इसीलिए कुछ दिनों से वह मुझसे कतराती है। महाराज, विश्वास करें मैं अब तक उससे कुछ भी नहीं कह पाया। सोचा था जीवनसंगिनी के रूप में याचना करूंगा। मगर ऐसा मौका ही नहीं मिला। क्लास में दूर से देखता हूं। अगर उससे पहल किया जाय तो तरह-तरह की बातें उठेंगी। मैं ऐसा नहीं कर सकता। इसीलिए आपके निकट आया हूं।"

"आप वास्तव में क्या जानना चाहते हैं?"

"मुझसे क्यों कतराती है? मेरा कहना है कि अगर मैं उसके उपयुक्त नहीं हूं तो वैसा बनने की कोशिश करूंगा। कोशिश करने पर आगे बढ़ा जा सकता है। आपका क्या ख्याल है, महाराज!"

"यह तो है। आप क्या कहना चाहते हैं, यह तो अब तक बताया ही नहीं।"

आपने ठीक फरमाया, महाराज! आप मुझे "तुम" कहकर पुकारें। मैं आपका स्नेहाकांक्षी हूं।"

"ठीक है, यही होगा।" महाराज उत्सुक होकर उनकी ओर देखनेलगे।

"मैं अमृता से शादी करना चाहता हूं। अब तक सोचा था जीवन भर शादी नहीं करूंगा। मेरे पीछे की ओर कोई खिंचाव नहीं है। पढ़ते और पढ़ाते हुए जीवन बिता दूंगा। ज्ञान का भंडार अशेष है। उसी में यह जीवन गुजर जाएगा। परन्तु उसे देखने और जानने के बाद मैंने अपना इरादा बदल लिया है। अब मैं क्या करूं, महाराज!"

"उसकी सब बातें तुम्हें मालूम हैं ?"

"हां, उसी से सुनी हैं यद्यपि शारदा देवी ने उसका लालन-पालन किया है और उन्हीं को मा के रूप में वह जानती भी है, फिर भी वे उसकी असली मां नहीं है।"

"और कुछ नही सुना ?"

"सब सुना है। उसके जन्म के पहले ही उसके पिता अर्थात् शारदा देवी के दूर के देवर चल बसे। जब उसकी उम्र केवल महीने भर की थी, तभी उनकी देवरानी इसे छोड़कर स्वर्ग सिधारी।"

"शारदा देवी की सभी बातें तुमने निश्चय सुनी होंगी ?"

"हां, वे ससार में रहते हुए भी संन्यासिनी थी। इसीलिए सम्भवतः अमृता का मिट्टी से लगाव कुछ कम है।"

"तुमने उसे ठीक ही समझा। वह अपनी शारदा मा की तरह ही हुई है।"

"यह स्वाभाविक है। जन्म से जिसके साथ रही, उसकी तरह होना स्वाभाविक है।"

"क्या तुम इस बात में विश्वास रखते हो कृष्ण, कि जो पालन करती है, उसी की धारा विशेषकर मनुष्य को प्रभावित करती है।"

"यह स्वाभाविक है। जिसके निकट छुटपन से बढ़ते हैं, उसकी अनुभूति उसकी सभी चीज़े अवश्य ही प्रभावित करेंगी।"

"तुम कहना चाहते हो कि उसके मां-बाप कौन और क्या थे, यह बड़ी बात नहीं।"

"हा। उनका थोड़ा-बहुत प्रभाव पड़ सकता है। मगर पालन करने वाली मां का प्रभाव ही अधिक से अधिक पड़ेगा।"

"मन-प्राण से तुम इस बात पर विश्वास करते हो ?"

"हा। इसमें अविश्वास की कोई गुंजाइश नहीं। इसके अलावा हमारे हिन्दू-धर्म ने पालनकर्त्री और जन्मदात्री दोनों को एक ही आसन पर आसीन किया है।"

थोड़ी देर चुप रहकर डॉ० राव ने अचानक पूछा—"महाराज, आप

इन सब बातों की आलोचना इस तरह क्यों कर रहे हैं ? मुझे तो ये सभी बातें मालूम हैं।"

"अगर मैं कहूं कि तुम अनेक बातें नहीं जानते हो, तो ? अगर मैं कहूं कि अमृता के पिता चरित्रहीन, शराबी और नीच प्रकृति के थे, तो ? क्या तुम कहोगे—उससे कुछ नहीं आता-जाता ?"

"मैं केवल अमृता का याचक हूं। वह जिस उम्र में पहुंची है, उसकी खुद अपनी एक सत्ता कायम हो चुकी है। उसे मैं पहचानता हूं, जानता हूं और वही असल है। उसका भूत मेरे लिए भी भूत हो चुका है। अथवा वह अस्तित्वहीन है।"

महाराज कुछ देर मौन रहे।

थोड़ी देर बाद उन्होंने धीरे-धीरे कहना शुरू किया—"मान लो, उसकी मां चरित्रहीन थी, इस हालत में तुम क्या करोगे ?"

डॉ० राव काफी विचलित हो चुके थे। महाराज, क्या कहना चाहते हैं ? अमृता का जन्म रहस्य वास्तव में मानो एक अनजान रहस्य से घिरा है। महाराज उसे धीरे-धीरे खोलने की कोशिश कर रहे हैं।

वे इस बात को क्यों समझ नहीं पा रहे हैं कि उनके लिए अमृता का बाहरी मुखौटा कोई बड़ी चीज नहीं है। वे अतीत की बातें जानने के आग्रही नहीं हैं।

कौन किस तरह जन्म लेता है, कहां से आता है, यह बड़ी बात नहीं। केवल आना ही सब कुछ नहीं है। उसके प्रमाण खुद कृष्णराव हैं।

वे जहां से आए हैं, वहां विद्या की जगह नहीं। सरस्वती वहां अवहेलित है। लक्ष्मी की साधना ही उन लोगों का मूल मंत्र है। अपने स्वार्थ के अलावा वे और किसी चीज की चिंता ही नहीं करते। वे अच्छे-बुरे का विचार करना नहीं चाहते। उन लोगों के साथ उनका कुछ भी सामंजस्य नहीं है। अतएव अपने जीवन के आधार पर वे समझ सके हैं कि सभी अपनी किस्मत लेकर पैदा होते हैं। कभी-कभी जन्म एक दुर्घटना मात्र है।

"तुमने अब तक मेरे अंतिम प्रश्न का जवाब नहीं दिया"—महाराज ने कहा।

"मेरा एक ही उत्तर है। मैं इस बात पर विश्वास करता हूं कि हर व्यक्ति अपने पूर्व जन्म का सस्कार लेकर जन्म लेता है। इसीलिए देखा है कि साधु का पुत्र डाकू बन जाता है। कभी-कभी इसका उल्टा भी होता है। अतएव जन्म नही, बल्कि मनुष्य बडा होता है।"

"जब तुम ऐसा कहते हो तो सारी बातें सुनो। मैंने उसका नाम दिया है अमृता। वह अमृत-पुत्री है। वह स्वय ब्रह्मा की संतान है। आधे अधकार और आधे प्रकाश के एक स्वर्गीय प्रभात मे मैंने उसे धरती से उठाया, रास्ते की धूल से मुझे एक निष्पाप शिशु मिला।"

कुछ देर रुककर महाराज बोले—"शिशु के उपयुक्त देवी तुल्य मा के हाथों सौंपा था। शारदा सचमुच वही थी। बडी स्नेहमयी शिष्या थी वह मेरी। उसके स्वामी भी उसी तरह थे और थे मेरे शिष्य। जो परिचय सब को मालूम है, वह झूठ है।"

फिर थोडी देर रुककर उन्होने कहना जारी रखा—"इस निष्ठुर दुनिया के आघात से बालिका को बचाने के लिए, वह सिर उठाकर खडी रह सके, इस विषय में उसकी सहायता करने के विचार से इस झूठ का आश्रय लिया गया था। शारदा देवता की नाई मेरी श्रद्धा करती थी। इसीलिए मेरे आदेश का उसने अक्षरश. पालन किया था। वह निःसन्तान थी। संतान-स्नेह मे पलकर अमृता बडी हुई है। इसके अलावा अपने पूर्व जन्म के पुण्य-प्रताप से ही उसे ऐसी मा का आश्रय मिला। मेरे तथा शारदा के अलावा पृथ्वी का कोई भी तीसरा व्यक्ति इस बात को नही जानता। अमृता भी नहीं।" महाराज रुके।

कृष्णराव की आंखों के सामने से एक महीन परदा धीरे-धीरे खिसकता जा रहा है। क्या अमृता को इस बारे में कुछ पता है? क्या इसीलिए वह उनसे दूर होती जा रही है? उनका मन व्यथा से भर गया। एक ओर अमृता के लिए कष्ट था और दूसरी ओर अपने लिए। अमृता उन्हे जरा भी नही पहचान पाई। कुछ भी नही समझ सकी। यह कम दु ख की बात नही कि जिसे वे तहेदिल से प्यार करते है, वह उन्हे पहचानती तक नहीं, जानती तक नही, समझती तक नही।

"क्या सोच रहे हो कृष्ण? अब बात समझ में आई कि अमृता क्या

तुमसे दूर रहती है ? अब तक उसे कुछ भी मालूम नही था। शायद मैं भी उसे अभी सब साफ-साफ नही बतलाता ? फिर भी मरने के पहले मैं उसे सत्य से वाकिफ करा देता। जिस दिन उसने मुझे तुम्हारी बात बताई, उसी दिन उससे मैंने सब कुछ बताया।"

"अब मालूम हुआ कि वह क्यो मुझसे कतराती है।"

"मैंने उससे यह भी कहा था कि तुम सीता की तरह हो। जनक को सीता पड़ी हुई मिली थी। तुम भी मुझे मिली हो। तुम साधारण लोगों से ऊपर हो। तुम अमृत-संतान हो। तुम्हारे उपयुक्त क्या राव है ? यह भी गौर करने की बात है।"

"अमृता ने आपसे क्या बताया ?"

"वह भी मुझे मानती है। मुझे ऐसा लगता है वह अभी तक अपने मन को स्थिर नही कर पाई है कि गृहस्थाश्रम में प्रवेश करेगी अथवा इसके बाहर ही सबकी सेवा करते हुए जीवन बिताएगी।"

कृष्णराव कुछ देर मौन रहे।

महाराज ने भी उन्हे वह सुयोग दिया। अच्छी तरह सोच-विचार कर आगे बढ़ना ठीक होगा। वे वास्तव मे अमृता को व्यथा पहुंचाना नही चाहते। दु ख पाकर भी अमृता में खड़े रहने की शक्ति है। वे इसे अच्छी तरह जानते है।

"तुमने तो सब सुना। अच्छी तरह सोच-विचार लो। मैं समझता हूं अमृता के उपयुक्त होना काफी कठिन है। इसके बावजूद तुम सांसारिक जीव हो। सासारिक बन्धनो से पैर बाहर बढाना मुश्किल होता है। अगर तुम्हारे लिए पैर बढ़ाना कठिन हो तो मैं इसे बुरा नही मानूंगा। हां, तुमसे मेरा एक अनुरोध है—जो बातें तुमने सुनी है, वह दूसरा व्यक्ति न जान पाए। इस दुनिया में अमृता के सिवा तुम और मैं ही जान सका। तुम उसकी ओर हाथ न बढाना; मैं नही चाहता कि वह और अधिक आघात पाए।"

महाराज धीरे-धीरे उठ खड़े हुए।

अब तक कृष्णराव अन्यमनस्क भाव से सब कुछ सुन रहे थे। महाराज को खड़े होते देख पहली बार उन्होने अचानक उनका पैर पकड़कर उनसे

बैठने का अनुरोध किया, "महाराज, थोड़ी देर बैठें। आपको बताने के लिए बहुत-सी बातें बाकी रह गईं। एक बहुत बड़ी आशा लेकर आपके निकट आया हूं; मुझे निराश न करें।" उनके मुंह की ओर देखकर महाराज के मन में करुणा पैदा हुई। वे धीरे-धीरे बैठ गए।

"महाराज, आपने केवल स्नेहपात्री के ही दुःख का अनुभव किया, पर मेरे कष्ट के बारे में नहीं सोचा। जिस अमृता को मैंने अपनी समस्त सत्ता अर्पित कर प्रेम किया, वह मुझे जरा भी न पहचाने, यह कितना बड़ा आघात हो सकता है, इसे आप निश्चय ही अनुभव करेंगे। मैंने उसे प्यार किया है। उसकी बाहरी बातें जानने की मुझे कोई जरूरत नहीं। मुझे ही देख लें!" इतना कहकर उन्होंने अपने जीवन,अपने परिवार की बातें उन्हें बताईं —

"अपने आधार पर ही मैंने सब कुछ समझा है। मुझे कोई द्विधा नहीं। अब मैं केवल यही जानना चाहता हूं कि आपकी नजरों में मैं अमृता के लायक हू अथवा नहीं।"

डॉ० राव महाराज की ओर आंखें गडाए बैठे रहे। महाराज भी कृष्ण को अपलक देख रहे हैं। ऐसा प्रतीत होता है मानो शिव हाथ फैलाकर राजा दक्ष से उनकी राजकन्या सती को भीख के रूप में माग रहे है। चेहरे का भाव भी वैसा ही असहाय है। दूसरी ओर शान्त भाव।

मन ही मन महाराज ने तय कर लिया—कृष्ण अमृता के उपयुक्त है। दोनों ही एक दूसरे के लायक हैं।

"मैंने सोचकर देखा—तुम दोनो एक दूसरे के उपयुक्त हो। तुम दोनों की जय हो। मैं अमृता से सब कुछ कहूगा। छुट्टी के दिन तुम उसे अपनी निर्धारित जगह पर पाओगे।"

कृष्णराव महाराज को प्रणाम कर मन मे शान्ति लिए अपने फ्लैट की ओर चल पड़े।

दो फ्लैट है। एक तल्ले पर एक प्रोफेसर रहते हैं। कलकत्ते से आए हैं। वे हैं श्री और श्रीमती रनेन पालित। वे केमिस्ट्री के प्रोफेसर हैं। ऊपर तल्ले पर कृष्णराव अकेले रहते हैं। थोड़े दिनो में ही दोनो के बीच काफी घनिष्ठता हो गई है।

"वाणी, सुनती हो ? कृष्ण को शायद कुछ हो गया है। पहले का हंसोड़ व्यक्ति न मालूम कैसे बदल गया।"

"तुम ठीक कहते हो। मेरी नज़रों में भी ऐसा लगता है। मैंने उसके 'पीर-बावर्ची, भिश्ती-खर' रूपी नौकर भरद्वाज से पूछा था। वह कुछ बता नहीं पाया। पर कुछ दिनों से काफी रात गए घर लौटता है। सवेरे निकलता है। बातचीत एकदम नहीं करता।" वाणी रुकी।

"वास्तव में कृष्ण ने मुझे चिन्ता में डाल दिया है। अपनी जन्मभूमि छोड़कर यहां आने पर कुछ दिनों तक मन ही नहीं लगता था। पर उसका साथ पाकर वह भाव एकदम दूर हो गया। मेरे अपने भाई की तरह ही कृष्ण है।"

अपना भाई तो मेम-बहू लेकर कनाडा में मौज उड़ा रहा है। महीने दो महीने में मां को दो-चार हरफ लिखकर अपना फर्ज़ पूरा कर लेता है। अब कृष्ण ने ही दोनों का स्थान अख्तियार कर लिया है।

"यही तो है। जब मैं अपने को रोक नहीं पाई तब उससे पूछा। आने को भी कह आई हूं। कुछ पूछने पर उत्तर देता है—ठीक हूं। आऊंगा, आऊंगा।"

"नहीं वाणी! मैं सोचता हूं अपने मन में वह कुछ छिपाए हुए है।"

ठीक उसी समय, "रनेन दरवाज़ा खोलो। क्या बात है? तुम दोनों दिन रात आपस में क्या फुसफुसाते रहते हो?" कहते हुए कृष्णराव पालित के कमरे में दाखिल हुआ।

"वाणी, चाय पिलाओ और साथ-साथ गरम बड़े भी खिलाओ।"

"खैर, आखिर बरफ पिघला तो। क्या बात है कृष्ण? इतने दिनों तक कौन-सी तपस्या कर रहे थे?" रनेन चिल्लाया।

"समझते क्यों नहीं? शायद किसी राधिका के लिए?" वाणी ने व्यंग्य कसा।

"यह अच्छा नहीं होगा, वाणी! मैंने मांगी चाय और तुम दे रही हो बातों की फुलझड़ी। तुम्हारी बातें ही कौन सुन रहा है।"

"क्यों? वाणी की बातें इतनी कड़वी क्यों लगी? शायद अब कोई

तुम्हारे कानों में मीठी बातें घोलती है।" वाणी ने कहा।

"बड़ी मुश्किल की बात है। तुम दोनों भाई-बहन का झगड़ा कभी मिटेगा या नहीं ? मेरी रानी पहले चाय का इन्तज़ाम करो।" रनेन बोला।

बिना कुछ बोले वाणी चुपचाप रसोई की ओर चली गई। मद्रास आने पर दोनों का मन एकदम नहीं लगता था। जन्म से ही अपने कलकत्ते में रहे। अतः हमेशा भागने की सोचते। इन लोगों की भाषा समझना नितान्त मुश्किल है। कृष्ण को पाकर दोनों को राहत मिली थी। कृष्ण बंगला बोल लेता इसीलिए खासकर वाणी ने दो दिनों में ही उसे अपना बना लिया था।

कृष्णराव भी न मालूम कैसे सबको छोड़-छाड़कर इन्हें ही अपना महसूस करता और छुट्टियों के अधिकतर समय इनके साथ ही बिताता। जिस प्रकार रनेन अपने मन की सारी बातें उससे बताता, उसी प्रकार कृष्णराव भी बोलता। केवल यही बात खुलकर नहीं कह पाता।

अमृता के साथ हर छुट्टी के सुबह घूमने जाता यह किसी को मालूम नहीं था।

वाणी ने एक दिन पूछ ही लिया—"माजरा क्या है, बताओ तो कृष्ण ? छुट्टी के दिन भोर को ही कहां चले जाते हो ?"

रनेन ने ही उस दिन उसे छुटकारा दिलाया—"और कहां, टहलने।

"तुम्हें याद नहीं ! उसने तो कई बार बताया है कि हारवर्ड में रहते समय उसे सवेरे ही उठकर घूमने की आदत थी। यहां आकर वह आदत उसने छोड़ दी थी। उसी की पुनरावृत्ति कर रहा है।"

"इतना तक तो समझ गई, पर केवल छुट्टियों की ही सुबह क्यों ?"

"तुमसे पार पाना मुश्किल है, वाणी ! आदत चाहे जितनी भी अच्छी क्यों न हो, उसे फिर से दुहराने में समय अवश्य लगता है।"

कृष्ण को कोई जवाब नहीं देना पड़ा। कृष्ण को ये लोग बड़े अच्छे लगते हैं। दोनों ही समान रूप से बातें करते हैं। दोनों ही सीधे-सादे और खुले दिल के हैं।

कृष्ण कई बार बोल चुका है—"जानते हो, पूर्व जन्म में हम लोग सगे

थे। अगर ऐसा नही था तो मुलाकात होते ही हम एक दूसरे से खिंच क्यों गए ?"

बीच बीच मे उन तीनो के बीच किसी गंभीर विषय पर आलोचना शुरू हो जाती कि कृष्ण रंजन का भाई था अथवा वाणी का। ऐसा ही मधुर संपर्क उनमे था।

महाराज के साथ बातचीत करने के बाद डॉ० राव का मन हलका हो गया था। फिर भी वह असल को नजरअंदाज कर गया और वे लोग भी पहले के कृष्ण को पाकर बेहाल हो गए, बात आगे नही बढ़ी। पहले की तरह तीनो खा-पीकर अपने अपने कमरे में चले गए।

छुट्टी के दिन डॉ० राव समय से बहुत पहले अपनी निश्चित जगह पर जा हाजिर हुआ।

अमृता का कोई पता नहीं।

वह आई नही ? क्यों नही आएगी ? महाराज ने तो कहा था—"वह तुमसे प्यार करती है।"

ग्यारह

कृष्ण की नज़र घडी की ओर गई। अब तक समय नही हुआ था। बहुत पहले ही वह आ गया है। तभी दूर से, आ रही दिखाई पडी अमृता।

वही शान्त-स्निग्ध अमृता।

मुग्ध नज़रों से डा० राव निहार रहे थे।

"चलो कृष्ण, हम समुद्र की ओर चलें।" इतनी छोटी-सी बात, पर डॉ० राव को लगा कि उन्होंने जीवन मे कभी इसे सुना न हो। इस मामूली-सी बात को सुनने के लिए लोग जीवन भर प्रतीक्षा कर सकते हैं।

दोनो मौन थे। टहलते-टहलते वे समुद्र के किनारे आकर बैठे। यह एक अनूठी अनुभूति थी।

अमृता ने ही पहल की—"महाराज ने मुझे सभी बातें बताई। उन्होंने अपनी सहमति दे दी है।"

"तुम ?"

"क्यों, तुम मेरे मन की बात जान नही पाए ?"

"फिर, तुम क्यों मुझसे दूर चली गई थी ?"

"तुम्हें मौका दिया था ताकि तुम खुद को समझ सको।"

"मुझे जांच रही थी ?"

अमृता चुप्पी साध गई।

"बताओ अमृता, मैं उस कसौटी पर खरा उतरा या नही ?"

"मैं सिर्फ एक बात जानना चाहती हूं। अपने पिता से क्या बताओगे ?"

"उन्हें अधिक कुछ कहना नही पड़ेगा। यह सुनते ही कि तुम शारदा देवी की बेटी हो, वे मुझ तुम्हारे साथ-साथ त्याज्य पुत्र घोषित करेंगे। ऐसा उन्होंने कई बार किया है। हां, रुपये लेने में पहले भी नही हिचके, अब भी नही हिचकेंगे।"

"मैं मां की बेटी हूं यह जानकर आपत्ति क्या होगी ?"

"हम दूसरी जाति के हैं। यही सब सोचकर तुम मुझसे अलग हो गई थी, अमृता ? ये कई दिन मैं किस तरह मृत्यु-व्यथा से तड़पता था, तुम्हें मालूम है ?"

यह कहते हुए कृष्णराव ने अपने दोनों हाथों से अमृता का एक हाथ कसकर थाम लिया।

अमृता की आंखों में आंसू छलक पड़े। बोली —"मुझे भी काफी कष्ट हुआ है। मां के मरने के बाद इतना कष्ट कभी नही हुआ था।"

अमृता ने धीरे-धीरे अपना सिर कृष्णराव के कंधे पर डाल दिया।

कृष्ण ने धीरे-धीरे उसे अपनी ओर खींच लिया। कितनी देर तक वे, इस तरह बैठे रहे, किसी को होश नहीं रहा।

जब कड़ी धूप अमृता के बदन पर लगी तब वह बोली—"हां, काफी दिन निकल आया है, कोई देख न ले।"

"आज कोई डर नही। मेरी इच्छा हो रही है कि सबको बुला-बुला कर कहूं स्वर्ग इस धरती पर है। हम लोग उसकी रचना करेंगे। तुम सभी जानो और देखो।"

"क्यों ? अमृता की नाईं लड़कियां ही कितनी होती हैं ? हमारी नजरों में तो नहीं आई हैं।"

"तुम्हारी तरह ही डॉ० राव की आंखें हैं तभी तो यह दशा है।"

लोगों की तरह-तरह की बातें अमृता के कानों तक न पहुंचती हों, ऐसी बात नहीं। किन्तु अब वह पुरानी शान्त लडकी न थी। उसके मन में भी जीवन का संचार हो चुका था। कृष्ण की चिन्ता मे मन डूबा रहता।

रात को मा की बातें याद आती। जिन्दा रहने पर उन्हें कितनी शान्ति मिलती।

अमृता अब प्रायः ही वाणी के घर जाती है। वहीं कृष्ण के साथ मुलाकात करती है।

एक दिन वाणी ने पूछा—"क्यों जी कन्या-दाता, सामान खरीदने की क्या व्यवस्था हो रही है ? लड़की की शादी क्या सेंत-मेंत में हो जाती है ? तुम तो कुछ नहीं करते। मैंने अपना फेहरिस्त बना ली है।"

"हां, मुझसे भारी भूल हो गई है।" रनेन बोला।

"कन्या-दाता, केवल कहने से नहीं होता। टेंट खाली करो। मैं यों ठगने नहीं दूंगी।"

रनेन ने भी काफी रुपया दिया था और कृष्ण ने भी। अमृता को एक कानी कौडी भी खर्च करने नहीं दिया।

यों खर्च करने के लिए था भी क्या ! शारदा देवी की सामान्य आमदनी के बल पर ही तो अमृता इतना आगे बढ सकी है।

सिलाई में माहिर वाणी ने उस ओर खुद ही काफी संभाल लिया था। इसके अलावा अमृता के दोस्तों और सहेलियों ने भी हाथ बंटाया था।

अमृता की नजरों के सामने उस दिन की घटनाएं इस तरह घूमने लगतीं मानों वे हाल की घटनाएं हों। वाणी ने ही उसे दुल्हन के रूप में सजाया था। सभी उसे मुग्ध नजरों से निहारते थे।

कृष्ण अपनी नजरें नहीं मोड पाता था।

लज्जा से अमृता का चेहरा लाल हो उठा था। अगर कहा जाय तो अमृता परिवार से बाहर आश्रम में पली थी, इसलिए उसके लिए यह एक नई अनुभूति थी। रजिस्ट्री आफिस जाने के पहले दोनों महाराज से

अमृता की बातों में एक अलग सुर गूंजने लगा, मानो सोने की घड़ी के स्पर्श से राजकुमारी को जीवन मिला हो।

"काफी हो चुका। अब उठो भी। मुझे महाराज को जाकर सब कुछ बताना पड़ेगा।"

"मुझे भी जाकर महाराज को सब कुछ बताना है।"

"इसका मतलब ?"

"मतलब तो साफ है। महाराज तुम्हें तो स्नेह अवश्य करते है, पर थोड़ा-बहुत मुझे भी करते हैं। मैंने तुम्हारे हिस्से का कुछ भाग हथिया लिया है।"

दोनों एक साथ हंस पड़े।

कुछ दूर दो चिड़ियां सटकर बैठी थीं। खुशी का स्पर्श उन्हें भी लगा। अपने पंख फैलाकर वे आसमान के सीने पर उड़ चले।

दूसरे दिन महाराज से अनुमति लेकर वे एक साथ जाकर तीन महीने की नोटिस दे आए। इण्डियन स्पेशल मैरेज एक्ट के अनुसार शादी से पहले तीन महीने तक प्रतीक्षा करनी पड़ती है।

ऐसी खबरें हवा से भी तेज उड़ती है। कृष्ण ने यह बात रंजन और वाणी को बताई थी। अपना कहने वाले उनके लिए वे ही थे। यह सुनकर वाणी उछल पड़ी।

"अगर कहा जाए तो अमृता का अपना कोई नहीं। मैं ही दूल्हे की बुआ और दुल्हन की मौसी बनूंगी। कृष्ण, तुम्हें चिन्ता करने की कोई जरूरत नहीं।"

"मैं अभी से साफ बताए दे रहा हू। मैं कन्यादाता ही रहूंगा।" रंजन बोला। उसकी सहपाठिनी मानो आकाश से गिरी।

"भीतर ही भीतर इतनी दूर तक ?"

किसी को खुशी हुई, किसी को दुःख हुआ।

कृष्ण बेहाल हो गया। यह जानकर किसी-किसी का दिल हिंसा की आग से दहक उठा।

"बलिहारी जाऊं उस रूप पर। आगे नाथ, न पीछे पगहा !"

"पुरुष बड़े बौड़म होते है, है न जी ?"

"क्यों ? अमृता की नाईं लड़कियां ही कितनी होती हैं ? हमारी नज़रों में तो नहीं आई हैं।"

"तुम्हारी तरह ही डॉ० राव की आंखें हैं तभी तो यह दशा है।"

लोगों की तरह-तरह की बातें अमृता के कानों तक न पहुंचती हों, ऐसी बात नहीं। किन्तु अब वह पुरानी शान्त लडकी न थी। उसके मन में भी जीवन का संचार हो चुका था। कृष्ण की चिन्ता में मन डूबा रहता।

रात को मां की बातें याद आतीं। जिन्दा रहने पर उन्हें कितनी शान्ति मिलती।

अमृता अब प्रायः ही वाणी के घर जाती है। वहीं कृष्ण के साथ मुलाकात करती है।

एक दिन वाणी ने पूछा—"क्यों जी कन्या-दाता, सामान खरीदने की क्या व्यवस्था हो रही है ? लड़की की शादी क्या सेंत-मेंत में हो जाती है ? तुम तो कुछ नहीं करते। मैंने अपना फेहरिस्त बना ली है।"

"हां, मुझसे भारी भूल हो गई है।" रनेन बोला।

"कन्या-दाता, केवल कहने से नहीं होता। टेंट खाली करो। मैं यों ठगने नहीं दूंगी।"

रनेन ने भी काफी रुपया दिया था और कृष्ण ने भी। अमृता को एक कानी कौड़ी भी खर्च करने नहीं दिया।

यों खर्च करने के लिए था भी क्या ! शारदा देवी की सामान्य आमदनी के बल पर ही तो अमृता इतना आगे बढ सकी है।

सिलाई में माहिर वाणी ने उस ओर खुद ही काफी संभाल लिया था। इसके अलावा अमृता के दोस्तों और सहेलियों ने भी हाथ बंटाया था।

अमृता की नजरों के सामने उस दिन की घटनाएं इस तरह घूमने लगतीं मानो वे हाल की घटनाएं हों। वाणी ने ही उसे दुल्हन के रूप में सजाया था। सभी उसे मुग्ध नजरों से निहारते थे।

कृष्ण अपनी नजरें नहीं मोड पाता था।

लज्जा से अमृता का चेहरा लाल हो उठा था। अगर कहा जाय तो अमृता परिवार से बाहर आश्रम में पली थी, इसलिए उसके लिए यह एक नई अनुभूति थी। रजिस्ट्री आफिस जाने के पहले दोनों महाराज से

आशीर्वाद लेने गए थे। उस दिन सबने देखा महाराज की आंखें छलक आई हैं।

वे सुख के आंसू थे, शान्ति के आंसू थे। दोनों के सिर पर हाथ रखकर उन्होंने मन-ही-मन आशीर्वाद दिया था।

शादी के बाद अमृता की इच्छा के अनुसार वे दोनों आश्रम ही लौट आए थे। सभी ने स्वामीजी के साथ खाना खाकर वहां काफी समय गुजारा भी थी। रात को वापस लौटने पर उन्होंने देखा कि रमेन और वाणी ने बडी निपुणता से फ्लैट को सजाया है और उनके लिए प्रतीक्षा कर रहे हैं।

डा० राव ने बहुत बडा भोज दिया था। सब कुछ त्रुटिहीन हुआ था। शादी के कुछ दिन बाद अपने घर की कुंजी वाणी के हाथों सौंप वे घूमने बाहर निकल पड़े थे।

काफी सोच विचार के बाद दोनों ने आन्ध्र प्रदेश देख आने का फैसला किया था। छुट्टिया वहीं बितायेंगे। लोगो ने कहा भी था—देखने लायक और भी तो अनेक जगहे है। सब छोड़-छाडकर आखिर आन्ध्र प्रदेश ही क्यो ?

"वाह जी, अभी दूसरी ओर निहारने का उनके पास समय ही कहा है ? अपने आप मे ही रहने का तो यह समय है। अत· चुन-चुनकर वहीं चले हैं।"

"वाणी ने आप दोनों की बात सोचकर ही कहा है।" कृष्ण बोला।

"अहा, भाजी मछली पलटकर खाना नहीं जानता। मन-ही मन कितनी दूर तक चला गया था और इधर हम लोग भोदा बनकर चिन्तित थे कि कृष्ण को क्या हो गया।"

"मगर मेरी बहन बिलकुल भोली-भाली है।"

"देखो, उसकी आंखो मे किस तरह बिजली कौंध रही है। किन्तु पहले की तरह ही वह प्रेम-सागर मे स्नान कर चुकी है। समझे, महाशय ?"

"छि: वाणी दीदी भी क्या कहती है ?"

"वाणी ठीक ही कहती है। तुम्ही ने तो कहा था—ऐसी जगह चलें, जहां देखने सुनने के लिए अधिक कुछ न हो। दोनो केवल बातचीत करेंगे और रहेंगे।" कृष्ण ने हसते हुए कहा।

"ठीक है, फिर यदि कुछ कहूं तो ।"

"यह क्या किया ? बाजार के बीच ही हांड़ी फोड़ डाली।"

उन्हें अलविदा जताने यूनिवर्सिटी के प्रायः सभी व्यक्ति विमान बंदर गए थे। हैदराबाद पहुंचकर उन्होंने एक दिन प्रायः होटल में ही गुजार दिया।

"जानते हो कृष्ण, पहली बार ही मैं मद्रास के बाहर आई हूं। इतनी उम्र तक मैंने अभी भी कुछ नहीं देखा। अपनी बातें सोचकर मुझे आश्चर्य लगता है। छुटपन से एक ही साचे में पली हूं। मेरे लिए यह अलग दुनिया है। प्रथम-प्रथम मैं सचमुच डर गई थी। मन में हिचकिचाहट थी। क्या सबके साथ कदम मिलाकर चल पाऊंगी ?"

अपने नजदीक खींचकर कृष्ण ने पूछा—"अब कैसा लगता है ?"

"अब ऐसा लगता है मानो मैं इन्हीं के बीच थी, तुम्हारी बगल में, तुम्हारे निकट।"

उसके ललाट से केशों के गुच्छों को हटाते हुए कृष्ण बोला, "ऐसा ही होता है।"

"महाराज ने मुझे साहस बधाया था—मैंने कृष्ण को पहचान लिया है। हर तरफ़ से तुम्हारे लायक है। उसके निकट तुम्हे शान्ति मिलेगी। तुम्हारी जरूरत उसे भी है।"

इस तरह छोटी-छोटी बातों का कोई अन्त नहीं था। दूसरे दिन वे लोग वहां के स्थानों को देखने निकल पड़े थे।

"जानती हो, हैदराबाद भारत के पांच बड़े शहरों में से एक है।"

अमृता को सब कुछ सुनना पसन्द पड़ता है। खासकर कृष्ण की बातें सभी उसके लिए अमृत तुल्य है।

कृष्ण को बातचीत करना अच्छा लगता है, खासकर ऐसे श्रोता के निकट। "भारतवर्ष के अन्य शहरों की अपेक्षा यह सबसे कम पुराना शहर है। मुसलमान सुलतानों ने इसे बसाया है। जरा गौर से देखो, इसीलिए हर चीज में फारसी गंध मौजूद है।"

"सचमुच ! हिन्दुओं का जैसा प्रभाव मद्रास में है, वैसा यहां नहीं।"

वे लोग हाथों में हाथ डाले "चारमीनार" के नीचे जा खड़े हुए।

पुकार नाम के बीच मुझे केवल अपना बना लिया था।"

कृष्णराव ने उसकी नज़रों की ओर निहारा—वे छलक आई थीं। कुछ देर मौन रहने के बाद उधर से अपनी आँखें घुमा लीं।

अन्तर की यह अनुभूति जिस प्रकार दुःख देती है, उसी प्रकार देती है शान्ति।

"तुम अपनी मा के लिए थी 'अमि', मेरे लिए 'मिता'। यह संबोधन केवल हम दोनो के बीच रहा। न किसी को मालूम होगा और न कोई सुनेगा। पर सबके लिए तुम अमृता ही रहोगी।"

"ठीक है, जैसी तुम्हारी मर्ज़ी।"

डा० राव अपने स्वाभाविक चिंतन की ओर मुखरित हुए।

"इस किले पर तरह-तरह से आक्रमण किया गया, पर कोई इसे अपने कब्जे में नही कर सका। औरंगजेब दस बरसों तक इस पर घेरा डाले बैठा रहा। तब कहीं जाकर विजय मिली। इसी गोलकुंडा के हीरे के खानों से दुनिया के कई मशहूर हीरे निकाले गए है। कैथरिन द ग्रेट ने 'अर्लफ डायमड (Orloff diamond) खरीदा था। ब्रिटिश राजाओं के ताज का कोहनूर हीरा भी यही का है। ईरान के शाह के मयूर सिंहासन में यही के हीरे जड़े हैं।"

"सचमुच! आंखो मे चकाचौंध पैदा करने वाले हीरो को एक-न-एक दिन अवश्य तुम्हारे साथ चलकर देखूगी। क्या विचार है?"

"और एक हीरे के बारे में एक अनूठी कहानी सुनी जाती है।"

"क्या?"

"सुनने मे आया है कि जिसके पास यह हीरा पहुचता है, उसी का सर्वनाश हो जाता है। पर उसका नाम है 'होप डायमड'।"

"इसी को कहते हैं उल्टी गगा बहना। ठीक है न? आखों का अंधा नाम नयनसुख, अर्थात् आशा से निराशा ही हाथ लगती है।"

बारह

"रिणरिण आ गई क्या ? आज इतनी जल्दी आने की तो बात नही थी," अमृता मन-ही-मन बोली।

उठकर देखा। कोई नही था। दूर की आवाज निकट प्रतीत होती थी। पुरानी बातों को फिर से याद करने में, पुराने दिनों में फिर से वापस लौट जाने में तथा पहले की घटनाओ में अपने आपको खो देने में उसे आज बड़ा अच्छा लग रहा था। वास्तव में ऐसा होना नामुमकिन है। फिर भी, चिंतन के बीच उसे पा लेना कम बात नही।

इतनी देर तक अकेली रहने की सुविधा अमृता देवी को कम ही मिलती है। पहले अपने आपको जबरन किसी काम में व्यस्त रखती, अन्यथा इतना अधिक मंज़िल तय कर पाना उसके लिए असंभव होता। अब काफी हद तक शान्त हो चुकी है। इसीलिए यह अकेलापन उसमें पूर्णता ला देता है।

वह अनुभव करती कुछ भी तो खोया नही। सभी चीज़ें है ही। सभी मौजूद है – मां शारदा देवी, महाराज और कृष्ण भी।

वह सोचती, जब वे ज़िन्दा थे तब उनके खो जाने की चिन्ता उसे हमेशा कष्ट देती पर अब वह डर नही रहा। आज वे उसकी नज़रो के सामने नही हैं इसीलिए उन्हें उसकी आंखों, की मणि के बीच स्थान मिला है। उसके हृदय-मंदिर में सभी उपस्थित है। वहां से उन्हे किसी भी दिन कोई हटा नही सकता। इस परम शान्ति की अनुभूति के आने के बाद से ही उसका चित्त शान्त और स्थिर है।

बाहरी तौर पर इसे कोई समझ नही पाता।

सभी सोचते अमृता ने इतने बड़े दु ख को धैर्यपूर्वक झेला है। कोई यह देख या समझ नही पाता कि उसके भीतर एक तूफान चल रहा है। मृत ज्वालामुखी पुनर्जीवित हो, उसके हाड़-मास को तोड़-फोड़ कर खत्मकर दे रही है।

अगर उसके गुरु महाराज का आशीर्वाद उसके साथ न रहता तो आज वह जहा आकर खड़ी हो पाई है, वैसा नही कर पाती। शायद और लड़कियो की तरह या तो वह बह जाती अथवा बेसहारा होकर पागल बन जाती।

कृष्ण के कालकवलित होने के बाद जब वह दुःख से अति कातर हो उठी तो उसे अनुभव हुआ था, मानो उसकी मां उसके दोनों हाथों को थामे हुई है और महाराज के हाथ उसके सिर पर है।

उसके कान मे कोई कह रहा था—'इस दुनिया में कुछ खोता नहीं है। जिस प्रकार तुम हो, उसी प्रकार हम है, कृष्ण भी है। तुम्हारा काम पूर्ण होने पर ही हम लोग मिलेंगे।'

वह दहलीज से लौट आई और कुर्सी पर बैठकर फिर से पुरानी चिन्ताओं में डूब गई।

"चलो, मिता! हम लोग काजीपेठ चलें।"

"वह तो काफी दूर है, कृष्ण!"

"मुझे तो खयाल ही नही था कि दो समुद्र लांघना पड़ेगा।"

"अच्छा न होगा, कहे देती हू। तुमने मुझे क्या बच्चा समझ लिया है? वह तो केवल नब्बे मील दूर है।"

"सचमुच?"

"फिर वही शरारत। तुम तो अच्छी तरह जानते हो।"

"फिर कल ही वहा चलें। बहुत कुछ दिखाऊंगा तुम्हें।"

"तुम भी तो देखोगे। तुमने भी नही देखा।"

"हां! मगर जानती हो मिता, जो आनन्द खुद देखकर होता है, उससे बढ़कर आनन्द होता है तुम्हें दिखाने मे।"

आज भी अमृता को याद है, यह सुनकर उसकी आंखें आनन्द से छल-छला उठी थीं। उसने इतना बेहद प्यार करने वाला भी इस दुनिया में था। दूसरे दिन सवेरे "थोरिया-वधना" संभाल कर दोनों मोटर से काजी-पेठ के लिए रवाना हो गए थे। कृष्ण के मन में दिखाने का उत्साह था और अमृता के मन में उत्साह था कृष्ण के साथ रहने का।

वहां उन्होंने कई द्रविड मन्दिर देखे। पिरामिड का-सा शिखर ही इनकी विशेषताएं थी। हेलमकोण्ड मंदिर पहुंचकर कृष्ण ने कहा था—"इसे चालुक्य राजाओं ने बनवाया था। इसमें एक हजार पाए हैं। यही इसकी विशेषता है।"

"सचमुच। जरा इनकी नक्काशियों को तो देखो। कुछ भी कहो, सबसे अधिक खूबसूरत है काले पत्थरो से बनी नन्दी की मूर्ति।"

"तुमने ठीक ही कहा। सभी मूर्तियों पर यह हावी हो गई है।"

वहां वे दो दिनों तक रहे।

अमृता को और अधिक घूमना अच्छा नही लगता था।

"मेरी इच्छा आराम करने की है। मैं यहीं होटल में ठहरती हूं। तुम वारंगल देख आओ।"

"यह कैसे हो सकता है? मैंने तो तुमसे कहा है मिता कि तुम्हें छोड़कर मैं अब एक दिन भी नही रह सकता। इससे अच्छा है, आओ! मैं तुम्हें वहा की बातें इस तरह बताऊंगा कि तुम कहोगी…।"

"मैं, मैं कहती हूं—आखिर मैं कहूं क्या—तुम कोई जादू जानते हो मेरे दोस्त? वहां ले गए बगैर ही वहां की सभी चीजें मेरी आखों के सामने ला रखे।" उन्हें देखकर लोगों की आंखें जुड़ाती—जाने, अनजाने सबकी। उन दोनों का प्रेम उनकी आंखों में प्रतिफलित होता। ऐसा लगता मानो दोनों साक्षात् राधा-कृष्ण हों।

कृष्णराव थे श्यामले और अमृता थी गोरी।

बाहुपाश मे कसते हुए कृष्ण बोला था—"किस जंजीर से तुमने मुझे जकड़ा? इससे किसी भी दिन छुटकारा पाना मेरे लिए असंभव होगा। इस जन्म को तो मैं छोड़ ही देता हूं, जन्मजन्मान्तर में भी नही।"

आंखें तरेरती हुई अमृता बोली—"माजरा क्या है, कृष्ण? अभी से मन उड़ने लगा है न क्या? इस गुड़ पर मक्खी नही बैठती। अपनी इस लम्बी वेणी और आंचल से पोर-पोर बांधकर रखूंगी, और तुम्हारी दोनों आखें भी अपनी इन आखों से जकडे रहूंगी।"

"करने की क्यों कहती हो, कर तो रखी हो। तुम्हे मालूम नही, मै चिर दिन इन बंधनो मे बंधा रहना चाहता हू। ये वे बंधनहीन गांठें हैं, जिन्हें खोलने का दम किसी मे भी नही है।"

अचानक अमृता की दृष्टि आकाश के तारों की ओर गई। मां की बात याद आई।

बचपन में वह सोचती, मां उसे छोड़कर किसी भी दिन नही जाएगी।

पर आज ? उसकी आंखों से आंसू के दो बूंद लुढ़क आए। कृष्ण अपलक उसकी ओर देख रहा था। उसे इतना अधिक प्यार करता है, इसीलिए शायद उसके मन की सारी बातें समझ लेता है।

"मां के बारे में सोचती हो ?"

आश्चर्य से अमृता ने पूछा—"कैसे समझे ?"

"तुम्हारा और मेरा मन एक सूत्र में बंधा है। सितार के किसी भी एक तार में हाथ लगाने से दूसरे तार भी मृदु झंकार कर उठते हैं।"

"यह तो है।"

"मां की बात सोच रही थी। मेरा ख्याल था, मां किसी भी दिन मुझे छोड़कर नहीं जाएंगी। बचपन में ऐसा खयाल था। आज मैं कहां हूं और मां कहां हैं ?"

"सुनो मिता, तुम्हारी मां तुम्हें छोड़कर न किसी दिन गई हैं और न तो जाएंगी। तुम्हारी अनुभूति में वे ओत-प्रोत भाव से मिली हुई हैं। मैं तो तुम्हारी नज़रों के सामने काफी दिनों तक हूं, लेकिन जब तक मैंने तुम्हारे दिल में प्रवेश नहीं किया तब तक मेरा अस्तित्व कहां था ? इसीलिए कहता हूं, प्रेमीजन हमेशा बगल में रहते हैं, साथ रहते हैं, चाहे वे नज़रों के सामने रहें अथवा आंखों से ओझल।"

कृष्ण की बातें सुनकर अमृता को बड़ी शान्ति मिलती है। उसका मन स्निग्धता से सराबोर हो जाता है।

उसके कंधे पर अपना सिर टिकाए, उससे सटकर अमृता लेट गई। कृष्ण ने उसे अपने नज़दीक खींच लिया और उसके सिर पर अपना हाथ फेरने लगा।

"काफी रात हो गई मिता, अब सो जाओ।"

"कल तो मनसा वारंगल गच्छामि।"

सवेरे नाश्ता कर दोनों होटल के सामने के सुन्दर बगीचे में जा बैठे।

"अब मैं तुम्हारी नज़रों के सामने वारंगल शहर का इतिहास ला रखूंगा। सैकड़ों वर्ष पहले आन्ध्र प्रदेश के काकतीय नामक किसी राजवंश ने इस शहर की स्थापना की थी।"

"यह सब सुनने के बाद मन होता है उसी पुराने युग में लौट चलें, जब हम खुद की संस्कृति के बीच रहते थे। आज जिस अधपके खिचड़ी के बीच हम रह रहे हैं, उससे वह कितना अच्छा था।"

"लगता है था भी और नही भी था। पर यह सच है कि जभी कोई चीज एक जगह रुक जाती है तभी वह मर जाती है। हम सभी गतिमान हैं—देह, मन और चिन्तन में। अतएव परिवर्तन होगा ही। इसके अलावा आदान-प्रदान में ही तो पूर्णता आती है। मालूम है, गुरुदेव रवीन्द्रनाथ कह गए हैं—

"दो और लो, मिलो और मिलाओ।"

"तुमने ठीक कहा। तुम जारी रखो, मैं सुनूंगी।"

"मार्कोपोलो यहां आया था। इस शहर की सुन्दरता देखकर वह इतना मुग्ध हुआ कि उसे लिपिबद्ध कर लिया था। उसने और भी लिखे है—यहां के कपड़े इतने सुन्दर होते हैं कि किसी भी देश के राजा-रानी का आदर पा लेते हैं। ऐसा सुना जाता है कि यहां से कुछ दूर एक दुर्गम स्थान पर यहां का सबसे सुन्दर मंदिर अवस्थित है। उसका नाम है रामापा।"

"आखिर ऐसी जगह बनाया ही क्यो, जब लोग वहां जा ही नहीं पाते ?"

"उस समय ऐसा नहीं था। घनी आबादी वाला शहर था। हो सकता है तब हम दोनों कितनी ही बार एक साथ जाकर प्रार्थना कर चुके हो।"

इसके बाद दोनों के मुह की बातें मानो शेष हो गई। पता नही कितनी देर तक एक दूसरे का हाथ पकड़े बैठे रहे। होटल के बेयरे की आवाज सुनकर वे चौंक पड़े—"दोपहर के भोजन का वक्त हो गया है।"

इस प्रकार दोनों की छुट्टियो के दिन शेष हो गए। मद्रास लौटने के पहले उन्होने तिरुपति का मंदिर देखा था, कारण इधर फिर कब आना हो, कोई ठीक नही।

डॉ० राव हमेशा ही देश-विदेश घूमना पसन्द करते हैं। अब मिता जैसी संगिनी पाकर उन्होने तय कर लिया कि हर साल कहीं न कहीं अवश्य ही घूमने जाएगे। अमृता के लिए इधर यह एक अनास्वादित आनन्द का

उत्तम था। अपने इस छोटे से जीवन में उसे मद्रास के बाहर पैर रखने का मौका ही नहीं मिला था। मन में इच्छा भी नहीं हुई थी। इसलिए अब वह सोचती है, किस प्रकार यह इच्छा उसके मन में छिपी हुई थी।

सुख और शान्ति के बीच उनके दिन तेजी से गुजरते रहे। अमृता ने अच्छी तरह एम० ए० पास किया। कृष्णराव ने महाराज से दीक्षा ली। छुट्टी के दिन दोनो प्रायः ही महाराज के पैरो के निकट आकर बैठते और उनकी तरह-तरह की बातें सुनते।

ये केवल गुरु ही नही सगे भी थे।

एक दिन महाराज ने कहा—"मैं जीवन-भर से एक न एक संस्था चलाता आ रहा हूं। अब मन छुट्टी चाहता है। अब जीवन के बाकी दिनो में मैं प्रकृति की गोद में लौट जाना चाहता हू। अध्ययन करना चाहता हूं। मनन-चिन्तन करना चाहता हू। अपनी इच्छा मैंने बेलूर मठ में व्यक्त की थी। हरिद्वार-आश्रम जाकर एकान्त जीवन बिताना चाहता हूं। अनुमति मिल गई है।"

"महाराज, आप चले जाएगे ?" अमृता का गला भर आया।

"वाह री, पगली ! अब तो जोड़ी मिल गई है। इसके अलावा मैं तो हरिद्वार में ही रहूंगा। जब इच्छा हो चली आना। आश्रम में मेरे निकट कुछ दिन बिता आना।"

महाराज दूसरी ओर देखते हुए चुप लगा गए। महाराज का गभीर मुख देखकर अमृता को कुछ कहने का साहस नही हुआ। उसके मन में हिलोर उठने लगी।

जल्दी ही महाराज को प्रणाम किया और कृष्ण का हाथ पकड़कर खड़ी हो गई।

"कृष्ण, मेरा क्या होगा ? मेरे भाग्य में क्या यही लिखा है ? प्यार करने वाले दो व्यक्तियों को मैं कुछ दिनों के लिए एक साथ नज़दीक पा नही सकती ?"

"तुम इतना अधीर क्यों होती हो, मिता ? हर साल हम लोग महा-राज के निकट जाएगे।"

तुम समझ नही सके कृष्ण, पर उनकी ओर देखकर मैं समझ गई हूं।

—वे इस धरती पर और अधिक दिनों तक नहीं रहेंगे।" कहते हुए अमृता फूट-फूटकर रोने लगी।

"तुम महाराज के स्नेह में पली हो न ? तुम शारदा देवी की पुत्री हो न ? ऐसी अधीरता क्या तुम्हें शोभा देती है ?"

काफी देर तक अमृता आंखें बन्द किए बैठी रही, मानो शक्ति के लिए मन ही मन प्रार्थना कर रही हो।

"मैं थोडी देर के लिए नीचे जाती हूं, कृष्ण, वाणी के नजदीक।" कृष्ण ने केवल सिर हिला दिया। उसके मन में भी घुटन थी।

महाराज केवल गुरु थे, ऐसी बात नहीं। उन पर बहुत बड़ा भरोसा था। मन की सारी बातें उनके निकट खोलकर कहते। किसी भी संशय की मीमांसा वे करते। अगर कहा जाए तो बचपन से ही आश्रयहीन के रूप में बड़े हुए हैं। उन्हीं के नजदीक आश्रय मिलता।

तभी उन्होंने महसूस किया, इस उम्र में भी मनुष्य को आश्रय चाहिए, अर्थात् दूसरे पर निर्भर रहना। अच्छा ही हुआ वह वाणी के नजदीक चली गई।

जब खुद ही इतना चंचल हो रहा है तो उसे क्या सान्त्वना देगा ?

एक दिन दोनों महाराज को प्लेन पर बिठा आए। महाराज कुछ दिनों तक कलकत्ते के बेलूर मठ में आराम करने के बाद हरिद्वार चले जाएंगे। दोनों के सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया, आश्वासन भी दिया कि पत्र लिखेंगे। अमृता कुछ भी बोल नहीं पाई। भय था, बात करते समय इतने लोगों के बीच अगर वह रो पड़े।

कृष्ण बोला—"हम लोग जल्दी ही आपके नजदीक आएंगे।

हवाई जहाज आकाश की ओर उड़ चला।

तेरह

काफी तड़के ही अमृता की नींद खुल गई।

उस समय भी कृष्ण सो रहा था। एक बार इच्छा हुई कि उसे जगा

दे, पर उसकी ओर निहारते हुए मन में न मालूम कैसी माया हुई। दिन-भर मेहनत के बाद ही तो सोता है।

बाहरी तौर पर प्रोफ़ेसर के जीवन को देखते हुए लगता है वह काफी सहज और ढीला-ढाला जीवन है। पर, अगर कोई गंभीरतापूर्वक ले तो वह सचमुच ऐसा नहीं होता। हर छात्र-छात्रा की ओर नज़र रखना अर्थात् सचमुच का उन्हें समझना या जानना, जैसा कृष्ण करता है, काफी कठिन काम है।

सबसे छिपाकर सब पर नज़र रखनी पड़ती है। उनका सगा बनकर, उनके दोष, उनकी त्रुटि और दुर्बलताओं को इस प्रकार उनके सामने रखना पड़ता है। जिससे वे यह न समझ बैठें कि उन्हें समझाया जा रहा है। बच्चों के साथ चलना जितना सहज होता है उतना सहज बड़ों, वास्तव में बुद्धि में नहीं ऐसे कॉलेज अथवा विश्वविद्यालय के छात्र छात्राओं, के साथ नहीं होता। अमृता सोचती है सचमुच कृष्ण केवल विद्या में ही पण्डित हो ऐसी बात नहीं, वह मनुष्य की हैसियत से भी एक सच्चा मनुष्य है। उसके प्रति भगवान की दया है तभी तो वह कृष्ण को पा सकी है।

खिड़की के पास खड़ी सूर्योदय की लालिमा भरे आकाश की ओर देखते हुए उसके मन में तरह-तरह की बातें याद आ रही थीं। उसकी अन्तः घड़ी हमेशा के लिए अनजान बनी रही। मानो वह एक परी की कहानी हो। ओट से किसी ने एक के बाद दूसरी घटना बड़े करीने से सजा कर रख दी थी। महाराज आए, माँ शारदा आईं और उसके बाद आया कृष्ण।

अचानक कन्धे पर हाथ के स्पर्श से मुड़कर देखा बगल में कृष्ण खड़ा है। वह भी आकाश की ओर देखते हुए स्तब्ध खड़ा है।

"आज छुट्टी है। चलो, समुद्र के किनारे जाकर थोड़ी देर बैठें।"

"अच्छा।"

भरद्वाज को बताकर दोनों बाहर निकल पड़े।

"कृष्ण, कोई सुझाव दो। एम० ए० पास किये काफी दिन बीत चुके। कुछ भी नहीं करती।"

"क्यों ? प्रायः तो देखता हूं, [पुस्तकालय में बैठकर पढ़ती-लिखती हो।"

"हां, वह तो है। पहले सोचा था पढ़ूंगी, केवल पढूंगी। महाराज के चले जाने के बाद आश्रम का जो काम नियमित रूप से किया करती थी, वह भी रुक गया। अब वहां जाने की वैसी इच्छा नहीं होती।"

"ऐसा क्यों ? तुम तो प्रायः जाती हो।"

"प्रायः जाने और उसे ही अपना ठौर मानने में फर्क है न ? खैर, उसे जाने दो। महाराज नहीं हैं, इसलिए मन मानता नहीं। असल बात क्या है, जानते हो ? मां का पूरा मन मुझे मिला नहीं।"

"यह ठीक नहीं। जिस समय तुमने उनको देखा तब तुम्हारे पिता गुजर चुके थे। तुम्हारी हालत तो भिन्न है न।

"तुमने ठीक ही कहा। तुम्हें पाने के बाद मैं काफी बदल गई हूं। अब मेरा मन चाहता है, काफी काम करूं। रास्ता नहीं मिलता। एक नौकरी कर लूं ?"

"किस बला से ? इससे बेहतर है डाक्टरेट के लिए तुम पढ़ाई-लिखाई शुरू कर दो।"

"बेहतर रहेगा।" कुछ देर रुककर उसने कहा फिर, "नहीं, रहने दो। एक घर में एक ही डाक्टरेट पर्याप्त है। न होगा आगामी पीढ़ी वह कर लेगी।"

"अच्छी बात है। क्या करोगी, कुछ तय किया है ?"

"गीत सीखूंगी—रवि ठाकुर के लिखे गीत। केवल वही सीखूंगी, केवल वही गाऊंगी। तुम्हें अच्छा लगता है।"

"वही अच्छा रहेगा।"

इन सब विभिन्न बातों के बीच कृष्ण जिस बात को कह नहीं पाता, ऊपर से किसी को न बताकर अपने दिल में छिपाए रखकर भी अशांति पाता था, वही बोल पड़ा।

"मिता, एक सलाह दो ! तुम लोगों से करीबन दो साल ही जूनियर थी न कामाक्षी। उसने मुझे चिन्ता में डाल दिया है।"

"क्यों ? उसे कोई बीमारी हुई है ? मैं आजकल वैसे खोज-खबर

नही रखती हूं। यह यूनिवर्सिटी का मामला है। वैसे समय भी नही मिलता।"

"यह क्या ? अभी तो बताई प्रचुर समय है। तुम सोच नही पाती हो कि कैसे उसे गुजारोगी।"

"मैंने यही कहा ? अपना छोटा मधुर परिवार है। बीच-बीच में वाणी दीदी के साथ बातचीत, उनसे रसोई सीखना और पढ़ना-लिखना तो है ही।"

"तब तो मैं एकदम बरबाद हो गया।"

"ऐसा क्यो ? सबसे ऊपर तुम हो, सबसे ऊपर कृष्ण है।"

"रहने दो, रहने दो, खूब हुआ। साग से मछली ढकती हो और पकड़े जाने पर तरह-तरह की बातें। अब कृपा कर ध्यान से मेरी बातें सुनो।"

"मैं तो समझी थी कामाक्षी को लेकर कोई समस्या है। वही तो अभी वहां की मक्षी रानी है। आंखों में चकाचौंध पैदा करने वाला रूप और ऊपर से चार्मिंग गुरु-शिष्यों की चारों ओर भीड़। उसके चारों ओर सभी मधुमक्खियां गूंज रही हैं।"

कृष्ण ने हंसते हुए कहा—"ठीक ही कहती हो। कामाक्षी देखने में काफी खूबसूरत है। दाएं-बाएं जो कुछ भी घटता है, उसकी नज़रों से छिपा, नहीं रहता। बाहर जितना कोमल है, भीतर उतना ही, कठोर है। कामाक्षी रानी बनने लायक है।"

"तुमने इतना पहचाना कैसे ? कभी मन में बैठी थी क्या ?" हसते हुए अमृता बोली।

"मन नही, नजर गडी थी, ऐसा कह सकती हो। बाहर जितना सुन्दर प्रतीत हुआ था, भीतर भी उतना ही सुन्दर लगा था। जानती तो हो कृष्णराव अपनी आंखें खुली रखता है, इसीलिए दो दिनों की निगरानी के बाद ही पहचान लिया। ऐसी शक्ति है इसीलिए तो झाड़ी की ओट से भी रजनीगंधा को चुन लिया है।"

"तुम जैसा सोचते हो, मैं वैसा नही भी हो सकती हूं, कृष्ण ! पीछे पछताना पड़ सकता है।"

"ऐसा कह सकती हो। जो सोचता हूं, वह नही भी हो सकता है।

रजनीगंधा मानकर चुना पर बाद में देखूंगा वह पारिजात है—स्वर्ग का फूल।"

"रहने भी दो। तुम घुमा-फिराकर कह भी सकते हो। पर असल बात तो बताई ही नहीं। कामाक्षी को लेकर चिन्ता में पड़े हो न ? माजरा क्या है ? आखिर चिन्ता क्यों ?"

"कुछ दिनों से मैं ग़ौर कर रहा था, वह वेनुगोपाल के साथ घूमती-फिरती, उठती-बैठती और बातचीत करती है।"

"तो क्या हुआ ? आदमी-आदमी के साथ न बैठे, बातचीत न करे ?"

"जरूर, पर जो आंखों की भाषा पढ़ना जानता है, उसे धोखा नहीं दिया जा सकता। मैं उसे पढ़ सकता हूं मिता, इसीलिए लोगों को सहज ही पहचान जाता हूं, समझ जाता हूं।"

"कहां ? मैं तुम्हें प्यार करती थी, यह तो तुम समझ नहीं पाए।"

अमृता समुद्र की ओर देख रही थी। ऐसा जान पड़ता था जान-बूझकर ही वह अपनी दोनों आंखें कृष्ण की आंखों से ओझल किए हुए थी।

कृष्ण ने अपनी बातें जारी रखने के लिए मानो थोड़ा दम लिया।

"मैंने ठीक ही समझा था, इसीलिए तो साहस करके सीधा आगे बढ़ नहीं सका। महाराज को बीच में खड़ा कर दिया था। तुम्हारी आंखों ने ही मुझे बता दिया था, तुम मुझे प्यार अवश्य करती हो, पर ऐसी आत्म-भोली नहीं हो कि उसके बाहर तुम रह नहीं सको। तुम इस तरह लालित-पालित हो कि कोई भी चीज़ तुम्हें अधीर नहीं बना सकती है। कामाक्षी तो साधारण लड़की है। इसीलिए तो इतनी चिन्ता है।"

"इतना सोचते क्यों हो ? अगर दोनों के बीच प्यार हो ? हां, अन्त भला हो तो सब भला।"

"गड़बड़ी तो यही है। वेनु का प्यार दो दिनों का है। इस उम्र में साधारणतया जैसे हुआ करता है। इसके अलावा वह कामाक्षी को देखकर मुग्ध हो गया है। हो सकता है वह सामयिक हो, नहीं भी हो सकता है। कामाक्षी तो मक्षी रानी है, जितना भी आए कोई हर्ज नहीं। और इधर बेचारी कामाक्षी उद्भ्रान्त की तरह घूम रही है, पढ़ने-लिखने में उसका मन नहीं लगता। दूर से वेनु को देखकर उसकी आंखें सहज हो उठती हैं।"

"तुम इतना ख्याल रख सकते हो ?"

"रख सकता हूं मिता ! रख सकता हूं । मैं जिन्हें पढ़ाता हूं, उन पर मेरा काफी स्नेह रहता है । इसीलिए मेरी आंखों को कोई धोखा नहीं दे पाता । कामाक्षी में आत्मबल कम है । अगर कुछ इधर-उधर कर बैठे ?"

"तुमने तो काफी चिन्ता में डाल दिया । ठहरो, कुछ इन्तजाम करना ही पड़ेगा । वाणी बहन के साथ सलाह करूंगी । चाहे जैसे भी हो, उसे *समझना ही पड़ेगा । यह दुनिया इतनी बड़ी है कि यहां एक बार ठगा जाना* कोई बड़ी बात नहीं । अलावा इसके…"

"ठहरो, मिता ! देखो दूर में कोई लड़की समुद्र के किनारे पानी में "र डुबाए बैठी है । कामाक्षी जैसी लगती है न ?"

"हां है तो कामाक्षी ही । इतने तड़के समुद्र के नजदीक अकेली ? क्या होगा ?"

"हम लोग हाथ पकड़े दौड़ते रहें ।"

जब दोनों काफी नजदीक पहुंच गए तो उन्होंने देखा कि कामाक्षी उठकर धीरे-धीरे समुद्र की ओर आगे बढ़ रही है ।

एक ही झटके में अमृता अपना हाथ छुड़ाकर जी-जान से दौड़ी और पीछे से उसे कसकर पकड़ लिया । यह अचानक हुआ कि दोनों लड़खड़ा कर गिर पड़े ।

एक बहुत बड़ी लहर आकर उन पर गिरे इसके पहले ही कृष्ण ने मिता को कसकर पकड़ लिया । इस अचानक घटना से सभी विमूढ़ से हो गए ।

उस राक्षसी लहर को देखकर कृष्ण को याद आया कि अमृता तैरना नहीं जानती है । अगर वह अपने को संभाल न पाए, अगर वह लहर के *प्रभाव में ही…वह और सोच नहीं सका तथा कूदकर मिता को जकड़* लिया ।

पल भर के लिए वह परिस्थिति को भूल गया था, और भूल गया था कामाक्षी की बात । उसी के लिए मिता दौड़ी थी ।

"मिता, इस प्रकार दौड़कर तुम पानी में कूद पड़ी ? अगर कुछ हो जाता ? यह राक्षसी लहर ?"

अमृता हमेशा से ही शान्त और धीर है । अभी भी उसमें कोई व्यति-

भ्रम नहीं हुआ है। वह समझ गई थी कि कितनी बड़ी मुसीबत से सभी बच गए हैं। उसने शान्त भाव से कहा—"तुम्हें अचानक हो क्या गया, कृष्ण? तुम भूल गए, कामाक्षी को स्नान करते देखकर अचानक मेरी इच्छा भी पानी में घुसने की हुई। हठात् कुछ करने लायक मूर्खता तो मैंने नहीं की। सचमुच कैसा काण्ड है यह? साथ में कपड़े भी नहीं लाई।"

कामाक्षी अकचका गई थी। वह दिलोजान से वेनुगोपाल से प्रेम करती थी। उसी के चारों ओर उसकी चिन्ता भावनाएं जुड़ी हुई थीं। यहां तक कि वह अपना अस्तित्व भी खो बैठी थी।

उसके मां-बाप हैं। उनके प्रति उसका प्रेम, कर्तव्य सब कुछ मानो मन से लुप्त हो गया। छोटे भाई-बहन भी उसके लिए सामान्य से हो गए थे। वेनुगोपाल ही उसके लिए सिद्धि और साधना बन गया।

वही वेनुगोपाल कामाक्षी की ओर चला गया। उसका मन इतना अस्थिर हो उठा था कि उसके लिए जिन्दा रहना एक विडम्बना बन गई थी। इसीलिए वह तड़के ही समुद्र के किनारे आई थी। क्या से क्या हो गया। ज्यों ही अमृता ने पीछे से आकर उसे पकड़ा त्योंही वह कैसी हो गई थी। उसके बाद सामने से पहाड़ की तरह लहर गर्जना करती हुई दौड़ी आ रही थी। दूसरे पल ही डॉ० राव का व्याकुल चीत्कार, कूद पड़ना और उन्हें वहां से हटा लेना। काफी दिनों से उसके मन पर अत्यन्त दबाव पड़ रहा था। उसके बाद थोड़े ही दिनों के बीच एक के बाद दूसरी इतनी सारी घटनाएं।

वह और सह नहीं सकी। अमृता के शरीर पर ही वह निढाल हो गई।

"यह क्या? अब क्या हुआ?" डॉ० राव बोले।

अमृता अच्छी है, यह जानकर डॉ० राव अब कुछ हद तक स्थिर हो चुके थे।

"कुछ नहीं। मानसिक अशान्ति के चलते बेहोश हो गई है। उसे उठाकर बालू पर सुला दो न।"

कुछ सेकेण्ड के बाद ही कामाक्षी ने अपनी आंखें खोलीं।

एक-एक कर सभी बातें याद आते ही उसने लजाकर उठ बैठने की

"तुम इतना ख्याल रख सकते हो ?"

"रख सकता हूं मिता ! रख सकता हूं । मैं जिन्हें पढ़ाता हूं, उन पर मेरा काफी स्नेह रहता है । इसीलिए मेरी आखों को कोई धोखा नहीं दे पाता । कामाक्षी में आत्मबल कम है । अगर कुछ इधर-उधर कर बैठे ?"

"तुमने तो काफी चिन्ता में डाल दिया । ठहरो, कुछ इन्तजाम करना ही पड़ेगा । धाणी बहन के साथ सलाह करूंगी । चाहे जैसे भी हो, उसे समझना ही पड़ेगा । यह दुनिया इतनी बड़ी है कि यहां एक बार ठगा जाना कोई बड़ी बात नहीं । अलावा इसके···"

"ठहरो, मिता ! देखो दूर में कोई लड़की समुद्र के किनारे पानी में ^र डुबाए बैठी है । कामाक्षी जैसी लगती है न ?"

"हां है तो कामाक्षी ही । इतने तड़के समुद्र के नजदीक, अकेली ? क्या होगा ?"

"हम लोग हाथ पकड़े दौड़ते रहें ।"

जब दोनों काफी नजदीक पहुंच गए तो उन्होंने देखा कि कामाक्षी उठकर धीरे-धीरे समुद्र की ओर आगे बढ़ रही है ।

एक ही झटके में अमृता अपना हाथ छुड़ाकर जी-जान से दौड़ी और पीछे से उसे कसकर पकड़ लिया । यह अचानक हुआ कि दोनों लड़खड़ा कर गिर पड़े ।

एक बहुत बड़ी लहर आकर उन पर गिरे इसके पहले ही कृष्ण ने मिता को कसकर पकड़ लिया । इस अचानक घटना से सभी विमूढ़ से हो गए ।

उस राक्षसी लहर को देखकर कृष्ण को याद आया कि अमृता तैरना नहीं जानती है । अगर वह अपने को संभाल न पाए, अगर वह लहर के प्रभाव में ही···वह और सोच नहीं सका तथा कूदकर मिता को जकड़ लिया ।

पल भर के लिए वह परिस्थिति को भूल गया था, और भूल गया था कामाक्षी की बात । उसी के लिए मिता दौड़ी थी ।

"मिता, इस प्रकार दौड़कर तुम पानी में कूद पड़ी ? अगर कुछ हो जाता ? यह राक्षसी लहर ?"

अमृता हमेशा से ही शान्त और धीर है । अभी भी उसमें कोई व्यति-

श्रम नहीं हुआ है। वह समझ गई थी कि कितनी बड़ी मुसीबत से सभी बच गए हैं। उसने शान्त भाव से कहा—"तुम्हें अचानक हो क्या गया, कृष्ण ? तुम भूल गए, कामाक्षी को स्नान करते देखकर अचानक मेरी इच्छा भी पानी में घुसने की हुई। हठात् कुछ करने लायक मूर्खता तो मैंने नहीं की। सचमुच कैसा काण्ड है यह ? साथ में कपड़े भी नहीं लाई।"

कामाक्षी अकचका गई थी। वह दिलोजान से वेनुगोपाल से प्रेम करती थी। उसी के चारों ओर उसकी चिन्ता भावनाएं जुड़ी हुई थीं। यहां तक कि वह अपना अरि.त्व भी खो बैठी थी।

उसके मां-बाप हैं। उनके प्रति उसका प्रेम, कर्तव्य सब कुछ मानो मन से लुप्त हो गया। छोटे भाई-बहन भी उसके लिए सामान्य से हो गए थे। वेनुगोपाल ही उसके लिए सिद्धि और साधना बन गया।

वही वेनुगोपाल कामाक्षी की ओर चला गया। उसका मन इतना अस्थिर हो उठा था कि उसके लिए जिन्दा रहना एक विडम्बना बन गई थी। इसीलिए वह तड़के ही समुद्र के किनारे आई थी। क्या से क्या हो गया। ज्यों ही अमृता ने पीछे से आकर उसे पकड़ा त्योंही वह कैसी हो गई थी। उसके बाद सामने से पहाड़ की तरह लहर गर्जना करती हुई दौड़ी आ रही थी। दूसरे पल ही डॉ० राव का व्याकुल चीत्कार, कूद पड़ना और उन्हें वहां से हटा लेना। काफी दिनों से उसके मन पर अत्यन्त दबाव पड़ रहा था। उसके बाद थोड़े ही दिनों के बीच एक के बाद दूसरी इतनी सारी घटनाएं।

वह और सह नहीं सकी। अमृता के शरीर पर ही वह निढाल हो गई।

"यह क्या ? अब क्या हुआ ?" डॉ० राव बोले।

अमृता अच्छी है, यह जानकर डॉ० राव अब कुछ हद तक स्थिर हो चुके थे।

"कुछ नहीं। मानसिक अशान्ति के चलते बेहोश हो गई है। उसे उठाकर बालू पर सुला दो न।"

कुछ सेकेण्ड के बाद ही कामाक्षी ने अपनी आंखें खोलीं।

एक-एक कर सभी बातें याद आते ही उसने लजाकर उठ बैठने की

कोशिश की।

"तुम उठने की कोशिश मत करो। तुम्हे और मुझे, दोनो को भूत ने आ घेरा था। इसीलिए तो साथ में बिना कपड़ा लाए ही स्नान करने चली थी। सभी बचपना है।"

"बचपना क्या ? तुम-लोग तो बच्ची हो ही। खैर, तुम लोगों के पल्ले पड़कर मुझे भी एक डुबकी लगानी पड़ी। देखू, एक टैक्सी पा सकता हूं या नही ?"

डॉ॰ राव लपकते हुए रास्ते की ओर रवाना हुए। वे दोनों भी धीरे-धीरे चलने लगी।

अमृता आखें मूदकर सोच रही है—कितनी सारी घटनाएं उसके चारो ओर घट चुकी है। विचित्र है धरती। विचित्र उसकी गति है। आखें मुदी अवस्था मे ही उसके निर्लिप्त मुह पर दोनो होठों के बीच एक छोटी-सी हंसी की रेखा खिंच गई। साथ-साथ एक तृप्ति। उसे कामाक्षी की बात याद आई। उस लड़की को समझा-बुझाकर शान्त करने में उसे और वाणी को हिमसिम खाना पड़ा था। कितने दिनो तक उन्हे केवल यही करना पड़ा था।

उसके मन मे गीत सीखने का भूत सवार हुआ था। बाद मे वही कामाक्षी कम्पटीशन के सहारे ऑडिट सर्विस मे घुसी थी। नौकरी पाने के बाद भी अमृता को भूल नही पाई। अनेक बार मुलाकात करने आई थी।

उसके बाद सब कुछ पलट गया।

अपने कृष्ण को गवांकर यह छोटी रिन का हाथ पकड़े कलकत्ते चली आई। मद्रास को वह सह नही सकी थी, इसीलिए तो उसे जानी-पहचानी जगह छोडकर अनजान जगह आना पड़ा।

उसने कन्वेन्ट मे पढ़ा था। उसी स्कूल की मदर ने उसे कलकत्ता के मिशनरी स्कूल मे टीचरी की व्यवस्था कर दी थी। इसके अलावा वाणी बहन के पति भी कलकत्ते में अच्छी प्रोफेसरी पाकर चले आने की बात सोच रहे थे।

वे ही वहा उसके सच्चे आश्रय थे। एक नौकरी भी मिल गई। उन्ही के साथ पहले पहल आई थी। एक ही फ्लैट मे ठहरी थी।

चौदह

"मिता ! क्या सोच रही हो ?"

अचानक आंखें खोल उसने चौंक कर देखा। वही पुकार, वही गला, कृष्ण तो नहीं है ? यह पुकार उसने कैसे सुनी ?

यह आवाज़ सुनने के लिए वह दिन पर दिन प्रार्थना करती आ रही है।

उसने अनुभव किया, वह बगल में ही है। दोनों साथ-साथ एक ही बात सोच रहे हैं। हिल-डुलकर अमृता तनकर बैठ गई। उसने मिसेज वेंकटेश्वर से रवीन्द्र संगीत सीखा था। वे काफी सुन्दर गाती। पति अच्छा काम करते थे। मिसेज कलकत्ते की थी, इसीलिए यह विद्या हासिल कर सकी थी। उनके साथ रहते हुए पति भी बहुत कुछ समझ जाते थे।

रिटायर की उम्र हो आई है। बेटी पति के साथ दिल्ली में थी और पुत्र कनाडा में।

मिसेज वेंकटेश अमृता को काफी प्यार करती। लड़के-लड़की तो दूर थे, इसलिए उन लोगों पर ही ममता उमड़ पड़ी।

अमृता तो जाती ही, कृष्ण भी जाता। उनके साथ रनेन और वाणी भी जाती। मिलजुले परिवार की तरह वे लोग थे।

अमृता की आवाज में कृष्ण को रवीन्द्र संगीत बहुत अच्छा लगता, खासकर यह गीत—

> "नूपुर बेजे जाय रिनि-रिनि
> आमार मन कय चिनि-चिनि।"

लड़की होने पर डॉ० राव ने ही उसका नाम रखा रिणरिण।

"मालूम है, लड़की हमारे जीवन में रिन-रन का सुख, शान्ति और आनन्द का झंकार लाएगी। इसीलिए यही नाम रखा।

अमृता सोचती है, वास्तव में लड़की हमारे जीवन में सुख, शान्ति और

आनन्द का हिलोर लाएगी। उसे यह विश्वास है कि रिण उसे शान्ति प्रदान करेगी।

मगर क्या कृष्ण को अपना हिस्सा मिलता है ? उसका मन कहता है, हा, पाता है यही तो भरोसा है। महाराज के स्वर्गवासी होने के पहले ही रिन पैदा हुई थी, और वे उसे आशीर्वाद भी दे गए हैं।

उस दिन की बात याद आई। साल भर की रिण को लेकर पति-पत्नी दिल्लीगामी रेलगाडी पर जा बैठे।

"मिता, मुझे कितना अच्छा लग रहा है। रिण भी महाराज का आशीर्वाद पाएगी।"

"सचमुच। मैं तो पहले ही पा गई थी। हां, रिण की तरह माता-पिता के साथ जाकर नही। धूल मे पड़ी हुई।"

पति ने उसका मुह बंद कर दिया था—"छोड़ो, उस बात को, रहने दो, मिता ! पर इस बात को भूल मत जाना कि इसीलिए तुम अमृता हो।"

उस दफे वे लोग दिल्ली मे एक दिन ठहर कर हरिद्वार आश्रम चले गए थे। वे महाराज के संग-संग ही रहते। इधर-उधर घूमने-फिरने नही जाते। करीब पन्द्रह दिनो तक वहा ठहरकर वे मद्रास लौट आए थे।

वही आखिरी जाना था।

उसके कई माह बाद ही उन्हे खबर मिली थी—सोए हालत मे ही महाराज स्वर्ग सिधारे। एक दिन भी भोगना नही पड़ा।

अमृता के जीवन मे वह दूसरा शोक था।

मां की मृत्यु के समय जिस प्रकार महाराज को सम्बल बनाकर वह खडी हुई थी, उसी प्रकार महाराज के जाने का शोक वह कृष्ण को बगल मे पाकर भूल सकी थी। इसके अलावा थी छोटी रिण। चंचल रिण।

उसके लिए बीच मे गीत भी बन्द हो गया। कृष्ण मजाक करता—"क्या ? काफी समय है, डॉक्टरेट करूंगी, वह सब गया कहा ?"

"क्यो ?" रिण को सीने से चिपकाकर कहती—"यही तो डाक्टरेट किया है। जरा देखो तो। बेटी को ऐसी सीख दूगी कि तुम भी उसके साथ पार नही पाओगे।"

यूनिवर्सिटी से लौटते ही कृष्ण रिण का चार्ज (भार) सभालता।

"अब तुम आराम करो, गीत गाओ, मेरी रानी ! किसी एक वस्तु में पूरा मन लगाना उचित नही होता। जानती हो बड़ी होकर अगर दूर खिसक जाय ? तुम्हारा खुद का कुछ बना रहे। मैंने तो सोच लिया है, रिण के कुछ बढ़ते ही तुम्हें फिर से पढ़ने-लिखने की ओर मुड़ना पड़ेगा।"

ऐसी बातें उनमें प्रायः ही होती। उस समय अमृता को क्या यह पता था कि रिण के बढ़ने के बहुत पहले ही उसी एकाकी जीवन की ओर पैर बढ़ाना पड़ेगा ?

रिण के पैदा होने के पहले ही वे लोग एक बार बंगलोर गए थे। कितनी सुन्दर जगह है वह। मैसूर अर्थात् कर्नाटक की राजधानी।

जगह देखने के पहले ही वे लोग एक ऐसी घटना में उलझ गए थे, जिसकी मीमांसा के लिए अमृता को काफी समय और बुद्धि खपानी पड़ी थी।

कोई लड़का-लड़की उन्हीं के होटल में आकर टिके थे। घर से भाग निकले थे।

लड़की सम्पन्न घराने की थी, पर लड़का वैसा उपयुक्त नहीं था। लड़की के घर वाले शादी देने के लिए राजी नही थे—ऐसा साफ-साफ बता दिया था। लड़की की शादी के लिए कही और ही कोशिश कर रहे थे। संभव था लड़का मान जाता, पर लड़की मानने वाली पात्री नहीं थी। लड़की ही लड़के को बुद्धि और दिलासा देकर उसके साथ यहां भाग आई और पति-पत्नी के रूप में इस होटल में आ ठहरे थे।

घर के लोगों को काफी छान-बीन तथा थाना पुलिस करने के बाद उसकी खोज मिली थी। लड़की का चाचा भी उसी दिन—जिस दिन अमृता और कृष्ण पहुंचे थे—आकर होटल में टिका था। लड़के-लड़की को जानकारी नही होने दी, अगर फिर कहां भाग जाएं।

अमृता को देखने के बाद लड़की के चाचा को वह बड़ी पसन्द आ गई थी। उसने सोच लिया था कि अमृता के कथनानुसार ही काम होगा। मैनेजर से सभी बातें खोलकर कहते समय उसे भी ऐसा लगा था कि अगर जीवन की शुरुआत ही इस रूप मे हो तो शायद ही समाज उन्हें ग्रहण करे।

परिणति तो दुःखपूर्ण हो ही सकती है।

डॉ० कृष्णराव को आकर उन्होंने सब कुछ बताया और अमृता की सहायता मांगी। लड़की बड़ी हठी थी। शादी देने के लिए अब सभी राजी है पर लड़के को ससुर के कारबार मे साथ देना पड़ेगा।

सब कुछ सुनने के बाद अमृता ने व्याकुल होकर कहा—"आप कुछ चिन्ता न करें। मुझे लड़की को समझाना ही पड़ेगा। मैं यह जरूर करूंगी। आप जाए। बाद मे आपको सब कुछ बताऊंगी।"

अमृता ने अपनी आंखें दूसरी ओर फेर ली थी, जब लड़की के चाचा ने डॉ० राव से कहा—"आपकी पत्नी अगर देवी न होती तो दूसरे के दु.ख से इतनी अशांति अनुभव नही करती। उनकी तसल्ली से मुझे शान्ति मिली है। भगवान उनका भला करें।"

डॉ० राव समझ गए थे, अमृता इतनी बेचैनी क्यों अनुभव कर रही है। अपने अतीत की बातें, जिसे मिता के मन से दूर करने की भरसक कोशिश कृष्ण करता है, वही उसे चचल किए हुए है।

मिता के लिए उसका मन व्यथा से भर गया था। ऐसा हुआ क्यों ? वे मजे से दो दिनों की छुट्टी बिताने यहा आए थे। यहां भी राहत नहीं।

उसकी इच्छा होती वह अपनी मिता के हर तरह की आघातो से ढककर रखे। दुनिया में कितने दुःख हैं, समाज मे कितना अविचार है।

वह मिता से कहना चाहता था—"अपने इन दो छोटे हाथो मे तुम कितनों को बचाओगी ?" पर डॉ० राव न कुछ बोले और न तो कुछ किया ही।

वह जानता था मिता को अपनी टेव से विमुख नहीं किया जा सकता है। उसने धीरे से केवल उसके हाथ पर हाथ रखा।

मिता ने मुड़कर उसकी ओर देखा, "लड़की को समझाना ही पड़ेगा, कृष्ण ! मैं जानती हूं, मैं अपने हृदय से समझती हूं, कितनी दु.खी, कितना असहाय होकर मा अपने रक्त-मास से गढ़कर अपनी संतान को त्यागती है।"

"तुम अस्थिर मत बनो। मुझे यकीन है तुम असाध्य को भी साध सकोगी।"

"तुम ऐसा समझते हो ? तुम्हें अपने बगल में पाकर मैं ऐसा कर सकूंगी। मैंने निश्चय किया है मैनेजर के मार्फत लड़की को चाय पीने बुला भेजूंगी।"

"क्या बताकर मैनेजर न्योता देगा ?"

"मैंने वह भी सोच लिया है। दूर से देखकर मुझे वह अच्छी लगी है। मैं शाम को यहां अकेली रहूंगी और तुम काफी समय के लिए टहलने जा रहे हो, यही।"

"अच्छा, मान लिया ऐसा हो भी गया, पर आरंभ किस तरह करोगी ?"

"वह मैं ठीक कर लूंगी। बातचीत के दौरान मैं ऐसी ही एक घटना और उसके भयानक नतीजे का जिक्र करूंगी, जिससे लड़की डर जाए। इस प्रकार उसी के मुंह से उसकी बात निकलवाने की इच्छा है।"

हंसते हुए कृष्ण बोला, "महारानी की जय हो।"

जिस समय मैनेजर लड़की को लेकर आया था, ऐसा लगता था वह काफी तेज तर्रार है।

उसने पूछ ही लिया, "सहसा आपको मुझे अच्छा लगने का सबब ?"

हंसकर अमृता ने उत्तर दिया, "आप ऐसा सवाल कर सकती हैं। परन्तु आप इसे जान लें कि कब और क्यों सहसा कोई किसी को अच्छा लगता है अथवा प्यार करता है, इसका सही जवाब शायद देवता भी नहीं दे पाएंगे। इसीलिए पुराण में उन्हें भी कितनी ही जगहों में खतरे में पड़ना पड़ा है।"

इससे लड़की की आंखों के रंगों में तबदीली आई थी। जलती हुई आग ने मानो बुझने का रंग अपनाया था।

अमृता ने पूछा, "उम्र में तो काफी फर्क है। तुम कहने से क्रोध करोगी ?"

"नहीं, आप तुम ही कहें। मेरी मौसेरी दीदी की उम्र जैसी आप होंगी।

"तुम्हारी मर्जी" कहते हुए अमृता ने चाय का प्लेट उसकी ओर बढ़ाया और स्वयं भी लिया।

चाय पीते-पीते अमृता अपनी ही कहानी कह रही थी। किस प्रकार

डॉ० राव के साथ प्रेम हुआ था।

थोड़ा घुमा-फिरा कर बताने के बाद बोली—"वे अलग जाति के हैं और ऊपर से उनके पिता जी राजी नहीं होंगे यह सोचकर मैं खुद ही कट गई थी। मैंने निश्चय किया था कि उनके प्यार करने के बावजूद जब तक रजिस्ट्रेशन के द्वारा शादी नहीं हो जाती, पहल नहीं करूंगी। अगर इसमें राव की सहमति न रहे तो हमेशा के लिए अलग हो जाऊंगी।

"फिर आपने प्यार ही क्यों किया, अगर छोड़ सकी तो ?"

"तुम बच्ची हो। सच्चा प्यार केवल नज़दीक ही नहीं खींचता, दूर भी हटा सकता है।"

अमृता ने गौर किया लड़की मन लगाकर उसकी बातें सुन रही है। ऐंठपन न मालूम कहां छूमन्तर हो गया था। दुःख की एक काली रेखा मुंह पर खिंच गई है।

इस प्रकार भागकर बेचारी को क्या मिलती है ? अमृता को मन ही मन व्यथा पहुंची। आह ! यह उम्र साधारण लड़के-लड़कियों के बहुत खतरे और दुःख की होती है। अनजाने में अनेक कुराह पर चल पड़ते है। खुद को बुद्धिमान् और विलक्षण गिनते हैं। सामयिक वासनाओं के शिकार बनकर खुद को दुःख देते हैं। और इधर अपने सगे-संबंधियों को भी जीते जी मार डालते हैं।"

"जैसा इस लड़की ने किया है।"

"मां-बाप को अगर समझाकर वह कहती—ठीक है, मुझे दो वर्ष का समय दो। इस बीच मैं न तो शादी करूंगी और न उस लड़के से मिलूंगी ही। इसके बावजूद अगर मेरा प्रेम कायम रहे तथा लड़के का खिंचाव मेरी ओर बना रहे तो अवश्य ही तुम लोग आपत्ति नहीं करोगे। अगर दोनों में एक पक्ष भूल जाय तो फिर बात ही और है।"

इस पर मां-बाप जरूर राजी होते। उनका मन भी पिघलता—हमारी बेटी हमें प्यार करती है, इसीलिए तो हमें मद्देनज़र रखते हुए उसने ऐसा कदम उठाया है। हो सकता है उसी समय शादी देने के लिए राजी हो जाते, अन्यथा दो साल बाद देते। कितनी शान्ति, कितने आनन्द के साथ सब कुछ होता।"

"क्या सोचकर आपने कदम खींच लिया था ?"

"हिन्दू धर्मानुसार अगर शादी संभव न हो तो रजिस्ट्री करवाना पड़ता है। अगर ऐसा न हो तो सोचा कितना नुकसान होगा। एक संतान हो जाने पर भी पति छोड़कर चला जा सकता है। वास्तव में कोई सामाजिक बंधन तो नहीं है। उस हालत मे क्या होगा ? समाज की अवहेलना, सबकी दुत्कार के बीच बढ़ना होगा। सोचो यह कितनी बड़ी बदकिस्मती होगी। मैं तो वह सोच भी नहीं सकती।"

कहते-कहते अमृता की आंखों में आंसू छलक आए।

नरम स्वर मे लड़की बोली—"बहन जी, आप इतनी दूर तक सोचती हैं ?"

अमृता ने अनुभव किया बर्फ पिघलने लगी है।

"अच्छा, बहन, अगर छोड़-छाड़ न हो तो ?"

"फिर भी मुश्किल है। ऐसी सन्तान को कानूनन जगह-जायदाद मे कोई अधिकार नहीं मिलता। अगर किसी प्रकार यह बात जाहिर हो जाय तो स्कूल में दाखिला के वक्त भी मुश्किल होती है। अर्थात् चारो ओर मुश्किल। केवल लाछना-गंजना। कोई मा इसे सह सकती है ? मैं सोचती हूं, इसीलिए लडकियां सामयिक उत्तेजना के वशीभूत कितनी विपत्ति मे फसती हैं, पता नही। दुनिया का आधा दु:ख तो इसी समयिक उत्तेजना के वशीभूत काम के चलते होता है।"

मौन रखकर अमृता यह समझने की कोशिश कर रही थी कि वह लड़की के मन में कोई रेखापात कर सकी है या नही।

कुछ देर तक लड़की सिर झुकाए बैठी रही। फिर वह सहसा बोली, "बहन जी, मेरे मन में बड़ी बेचैनी हो रही है। आपसे सब-कुछ बताना चाहती हूं। किसी से बताकर सलाह भी नही ले पाती हूं।"

"तुम मुझे सब बताओ। मेरे अपने भाई-बहन नहीं हैं। न मालूम क्यों तुम मुझे मेरी छोटी बहन-सी लगती हो। मुझसे सब कुछ साफ-साफ बताओ। मैं तुम्हारी भलाई के लिए सब कुछ करने को तैयार हूं।"

लड़की ने धीरे-धीरे सब कुछ खोलकर बता दिया। यह भी बताया—"मेरे माता-पिता काफी कष्ट पाते हैं। मैं दिलोजान से यह समझ पाती

हूं। उनके नजदीक जाने की इच्छा होती है। इधर इसे भी छोड़कर मैं रह नहीं पाऊंगी।"

इस प्रकार अपने पिता का नाम और उन्हें आपत्ति क्यों है, आदि सब कुछ बता गई।

अमृता बोली, "तुम्हारे पिता का खासा कारोबार है। तुम्हारे दो भाई तुमसे काफी छोटे हैं। तुम्हारे पति साधारण नौकरी करते हैं, यही फ़र्क है न? अगर तुम्हारे पिता उसे अपने कारोबार में लगा लें तो सभी झमेला चुक जाय।"

उत्साहित होकर लड़की ने अमृता का हाथ थामते हुए कहा—"बहन, तब तो काफी अच्छा रहेगा। आप उसे देखें। हर तरफ से वह आपको अच्छा लगेगा। मैं अभी उसे ले आती हूं। वह कमरे में ही है।"

"अच्छा।"

लड़की-लड़के को ले आई थी। अमृता को वह अच्छा ही लगा। बी० ए० पास था। संप्रति, धीर और स्थिर भी था।

उसने भी कहा था—"मैं इसके मां-बाप के मन में दुःख पहुंचाना नहीं चाहता हूं। पर क्या से क्या हो गया।"

अमृता ने गौर किया लड़के को इसके लिए पछतावा है?

"जानती हैं, बहन जी, मेरे पिता की अचानक मृत्यु हो गई। हम लोग काफी कठिनाई में पड़ गए थे। मैं और मेरी छोटी बहनें थीं। बेसहारा होकर मां ने जो कुछ भी थोड़ा-बहुत पैसा कौड़ी था, उसी से किसी तरह परिवार चलाया। मेरे बाद की बहन सही इलाज के अभाव में गुज़र गई। मैंने ट्यूशन करके पढ़ाई जारी रखी और पास किया। इसे पढ़ाने के लिए मैं आया था।" इतना कहकर लड़का मौन रहा।

"उनकी ओर से आपत्ति करना स्वाभाविक है। यह समझते तो हो?"

"हां।" लड़के ने सिर हिलाया।

"मैं पूछती हूं, इस प्रकार भगोड़े की ज़िन्दगी कितने दिनों तक चला पाओगे? इससे बेहतर है दोनों जाकर मां-बाप से माफी मांग लो। वे निश्चय ही सब कुछ भूलकर सीने से लगा लेंगे। सैकड़ों अन्याय करने पर

भी माफी मांग लेने से मां-बाप उसे भूल जाते हैं, इस पर तुम लोग विश्वास करते हो तो ?"

"हम लोग किस प्रकार पहल करें ? कोई रास्ता नहीं दीखता ।"

"अगर मैं रास्ता निकाल दूं तो तुम लोग मेरी बात मान जाओगे ?"

"हां, बहन जी ! आप जैसा कहेंगी वैसा ही करूंगी । पूर्व जन्म में आप मेरी बहन थीं ।"

"अच्छी बात है, फिर सुनो !"

अमृता ने सब कुछ साफ-साफ बताया—चाचा की बात बताई और उसी प्रकार खुद बुलवाने की बात भी बता गई ।

चाचा के साथ उसने स्वाभाविक व्यवहार किया था ।

उस सफर के दौरान वे बंगलोर देख नहीं पाए । लड़का, लड़की और उसके चाचा तीनों मिलकर जबरन उन्हें अपने घर मद्रास ले गए थे । उसकी शादी के वक्त जिस प्रकार वाणी दुल्हन की बुआ और दूल्हे की मौसी बनी थी अमृता को भी वैसा ही बनना पड़ा था । लड़की के मां-बाप भी पुत्रवत् दामाद पाकर खुश थे । बहू पाकर सास निहाल हो गई थी ।

"अमृता, बंगलोर देखने की अपेक्षा हमें इससे काफी आनन्द और तृप्ति मिली ।"

"सचमुच । मन ही मन पहले डर रही थी, अगर ऐसा न कर सकूं तो ? पर महाराज की दया से सब अच्छा ही होता, जिसका अन्त अच्छा हो ।"

कलकत्ता आते समय वह देख आई थी कि वह लड़की अपने पति, पुत्र, मां-बाप सबके साथ सुखी है । लड़के के कारोबार में लग जाने से उसकी मां और बहनों को सुख का मुंह देखने को मिला । पहले पहल कलकत्ता आने पर वहां से सबके नियमित पत्र आते । अमृता भी पत्र लिखती पर धीरे-धीरे चतुर्दिक कामों में लग जाने के कारण उत्तर देने में देरी होने लगी और अब वह प्रायः रुक ही गया है । फिर भी मन में सभी उसी प्रकार नजदीक बैठे हैं ।

पन्द्रह

मन के आईने में सभी इसी प्रकार संजोए रहते हैं। चिन्ताओं के बीच इतने निकट, पर बाहर कितनी दूर। अतएव अमृता सोचती—मनुष्य का बाहरी रूप बदलता है, पर मन आज कृष्ण को पा चुका है। कृष्ण की बातें, कृष्ण का सान्निध्य सर्वोपरि हो, यही उसकी कामना थी।

अमृता को लगता वह अपनी समस्त अनुभूतियों से, सभी इन्द्रियों के जरिये कृष्ण को पाती है। वही स्पर्श, वह दिल खोलकर हंसी, मानो सभी उसे घेरे बैठे हैं।

"मिता, इस बार तो केवल जाकर लौट आने के लिए बंगलोर जाना हुआ। इसके बाद छुट्टियों में फिर चलेंगे। मगर इस बार परमार्थरूपिणी देवी बनने नहीं पाओगी। हम दोनों धरती के जीव हैं, घूम-घाम कर आयेंगे।"

दूसरे साल वे गए। वाणी कहती,"अभी तुम लोग घूम फिर लो। बाद में बच्चा होने पर और आसानी नहीं रहेगी।"

वाणी की शादी हुए काफी साल बीत गए। ऐसा लगता है उसे अब बच्चा नहीं होगा।

अमृता सोचती, उन्हें अपनी जन्मभूमि के प्रति कितना लगाव है। इसके अलावा उनके मां-बाप अभी मौजूद हैं, इसीलिए छुट्टी मिलते ही वे कलकत्ता दौड़ पड़ते हैं। दक्षिण का अधिक उन्होंने कुछ नहीं देखा है। जब वे अपने घर से वापस आते तब उनके चेहरे पर तृप्ति का एक अनूठा भाव रहता। उस समय अमृता का मन मसोसता—"मां और कुछ दिनों के लिए जिन्दा नहीं रह सकी? अपने निकट रखती, सेवा करती, लेकर देश विदेशों में घूमती। वह कुछ नहीं कर सकी।"

क्या अनजान में वाणी के प्रति मन में हिंसा का भाव पैदा होता? पर ऐसा ख्याल नहीं आता। निश्चय ही नहीं आता, अन्यथा वाणी के लिए वह प्रार्थना ही क्यों करती—उसका कल्याण हो, वह सुखी रहे।

उस दफे बंगलौर पहुंच कर दोनों उसी होटल में ठहरे थे। उस लड़के-लड़की की बातें याद करने पर बहुत अच्छी लगती। उस बार दोनो खूब घूमे। कर्नाटक राज्य की राजधानी।

"इस शहर की खासियत है," कृष्ण ने बताया था। यहा बड़े-बड़े उद्योग पनपे हैं। फिर भी इस स्थान की शोभा जरा भी नष्ट नही हुई। बगीचों से भरा है। फूल ही फूल हैं।"

"ठीक ही कहते हो। हमारे देश में इन दोनों का समिश्रण वैसे कम ही है।"

"इस शहर को देखती हो, एक बारगी ही नया है। मानो कारखाने से गढ़कर अभी निकला हो। पुराना कुछ भी नही है। मगर इतना सुन्दर योजनाबद्ध है कि सभी अभाव ढक जाता है।"

कृष्णराव लगातार बोले ही जा रहे थे। उस दिन बोलने की खुशी में मानो वे पागल हो गए थे।

सोलहवी शताब्दी में यहां मिट्टी का सिर्फ एक किला था। यहा के नवाब हैदरअली ने उस माटी के किले को ईंट-पत्थर के किले मे परिणत किया था।"

अमृता बोली "मगर महाराज का राज-प्रासाद तो इंगलिश कैसल की तरह है।"

अमृता को बड़ा आश्चर्य लगता है। उसकी याददाश्त इतनी तेज है, उसने पहले कभी सोचा नही। कितने दिन पहले की ये बातें हैं, फिर भी हर छोटी-सी छोटी बातें भी उसे यो याद हैं। इसी तरह अगर सभी अच्छी बातें, याद रखने की रही तो दुःख किस बात का ?

एक गोधूलि बेला में वे वहा का लालबाग देखने गए थे। सबसे खूबसूरत बगीचा। वह फीकी नीले रंग की मैसूरी सिल्क की साड़ी पहने थी। पाड़ रुपहला था। पहले दिन पहुंचते ही कृष्ण ने उसे खरीद दिया था। उसे तुरन्त पहनने के विचार से एक दुकान में ब्लाउज भी बनने दे दिया था। दर्जी इतना भला आदमी था कि इनकी जल्दबाजी देखकर दिन-रात एक करते हुए एक ही दिन मे तैयार कर दिया था।

यह सब सोचकर अब हसी आती है। उस समय कितना बचपना

पन्द्रह

मन के आईने में सभी इसी प्रकार संजोए रहते हैं। चिन्ताओं के बीच इतने निकट, पर बाहर कितनी दूर। अतएव अमृता सोचती—मनुष्य का बाहरी रूप बदलता है, पर मन आज कृष्ण को पा चुका है। कृष्ण की बातें, कृष्ण का सानिध्य सर्वोपरि हो, यही उसकी कामना थी।

अमृता को लगता वह अपनी समस्त अनुभूतियों से, सभी इन्द्रियों के जरिये कृष्ण को पाती है। वही स्पर्श, वह दिल खोलकर हंसी, मानो सभी उसे घेरे बैठे हैं।

"मिता, इस बार तो केवल जाकर लौट आने के लिए बंगलोर जाना हुआ। इसके बाद छुट्टियों में फिर चलेंगे। मगर इस बार परमार्थरूपिणी देवी बनने नहीं पाओगी। हम दोनों धरती के जीव हैं, घूम-घाम कर आयेंगे।"

दूसरे साल वे गए। वाणी कहती,"अभी तुम लोग घूम फिर लो। बाद में बच्चा होने पर और आसानी नहीं रहेगी।"

वाणी की शादी हुए काफी साल बीत गए। ऐसा लगता है उसे अब बच्चा नहीं होगा।

अमृता सोचती, उन्हें अपनी जन्मभूमि के प्रति कितना लगाव है। इसके अलावा उनके मां-बाप अभी मौजूद हैं, इसीलिए छुट्टी मिलते ही वे कलकत्ता दौड़ पड़ते हैं। दक्षिण का अधिक उन्होंने कुछ नहीं देखा है। जब वे अपने घर से वापस आते तब उनके चेहरे पर तृप्ति का एक अनूठा भाव रहता। उस समय अमृता का मन मसोसता—"मां और कुछ दिनों के लिए जिन्दा नहीं रह सकी? अपने निकट रखती, सेवा करती, लेकर देश विदेशों में घूमती। वह कुछ नहीं कर सकी।"

क्या अनजान में वाणी के प्रति मन में हिंसा का भाव पैदा होता? पर ऐसा ख्याल नहीं आता। निश्चय ही नहीं आता, अन्यथा वाणी के लिए वह प्रार्थना ही क्यों करती—उसका कल्याण हो, वह सुखी रहे।

उस दफे बंगलौर पहुंच कर दोनों उसी होटल में ठहरे थे। उस लड़के-लड़की की बातें याद करने पर बहुत अच्छी लगती। उस बार दोनो खूब घूमें। कर्नाटक राज्य की राजधानी।

"इस शहर की खासियत है," कृष्ण ने बताया था। यहा बड़े-बडे उद्योग पनपे हैं। फिर भी इस स्थान की शोभा जरा भी नष्ट नही हुई। बगीचो से भरा है। फूल ही फूल हैं।"

"ठीक ही कहते हो। हमारे देश में इन दोनों का समिश्रण वैसे कम ही है।"

"इस शहर को देखती हो, एक बारगी ही नया है। मानो कारखाने से गढ़कर अभी निकला हो। पुराना कुछ भी नही है। मगर इतना सुन्दर योजनाबद्ध है कि सभी अभाव ढक जाता है।"

कृष्णराव लगातार बोले ही जा रहे थे। उस दिन बोलने की खुशी मे मानो वे पागल हो गए थे।

सोलहवी शताब्दी में यहां मिट्टी का सिर्फ एक किला था। यहा के नवाब हैदरअली ने उस माटी के किले को ईंट-पत्थर के किले में परिणत किया था।"

अमृता बोली "मगर महाराज का राज-प्रासाद तो इंगलिश कैसल की तरह है।"

अमृता को बड़ा आश्चर्य लगता है। उसकी यादश्त इतनी तेज है, उसने पहले कभी सोचा नही। कितने दिन पहले की ये बातें है, फिर भी हर छोटी-सी छोटी बातें भी उसे यों याद हैं। इसी तरह अगर सभी अच्छी बातें, याद रखने की रही तो दुःख किस बात का?

एक गोधूलि वेला मे वे वहां का लालबाग देखने गए थे। सबसे खूबसूरत बगीचा। वह फीकी नीले रंग की मैसूरी सिल्क की साड़ी पहने थी। पाड़ रुपहला था। पहले दिन पहुंचते ही कृष्ण ने उसे खरीद दिया था। उसे तुरन्त पहनने के विचार से एक दुकान में ब्लाउज भी बनने दे दिया था। दर्जी इतना भला आदमी था कि इनकी जल्दबाजी देखकर दिन-रात एक करते हुए एक ही दिन में तैयार कर दिया था।

यह सब सोचकर अब हंसी आती है। उस समय कितना बचपना

था।

उस दिन बगीचे में टहलते हुए उसका नामकरण हुआ था नील परी।

उसके पास अपना था ही क्या ? सभी तो कृष्ण ने खरीद दिया था।

वहा उन्होंने घूम-घूमकर काफी चीजें देखी थी—सौ वर्ष पुराना पेड़, झरना आदि। सुन्दर तालाब सद्यः प्रस्फुटित कमल फूलों से जगमगा रहे थे। इसके अलावा तरह-तरह के पेड़, लताएं तथा झाड़ियां। कई एकड़ भूमि मे यह बगीचा फैला है।

ऐसा लगता है अमृता आज अपनी पूरी जिन्दगी को दोनो हाथो की मुट्ठियों के बीच पकड़ने की कोशिश कर रही है, विशेषकर वह अल्प समय जिसे उसने कृष्ण के साथ बिताया था।

ऐसी आकांक्षा ने उसके मन में इस प्रकार कभी घर नही किया था।

पहले पहल याददाश्त के इस बोझ को उतारने के लिए वह व्याकुल मन से पुकारती—"इस बोझ को मेरे सिर से उतारो प्रभु !"

और आज उसका मन छोटी-मोटी इन बातों में घुल-मिलकर रहना चाहता है। उसे ऐसा महसूस होता कि कृष्ण की जीवितावस्था में शायद वह कृष्ण को इतने पास से, अपना बनाकर, खुद के रूप में पा नही सकी थी।

कोई न कोई उसका साक्षी रहता। और कोई न सही कृष्ण का अपना चिन्तन तो था ही।

वे लोग सैंतीस मील दूर नदी, पहाड़ देखने गए थे। कितना सुन्दर नज़ारा था। पहाड़तली के मंदिर को उन्होंने बड़ी निगरानी से देखा था। उन्होंने सुना था कि ऊपर के मंदिर की अपेक्षा नीचे का मंदिर सुन्दर है।

"भाई, मैं तो ऊपर चढ नही सकूंगी।"

"जिन्होंने दोनों मंदिर बनवाए थे वे पहले से ही जानते थे कि मिता ऊपर चढ़ नहीं सकेगी। इसीलिए नीचे का ही अधिक सुन्दर बनवाया था।"

मिता को यह बात इतनी सुन्दर लगी थी कि उसने कोई जवाब नही दिया। केवल कान से सुन भर लिया था।

अभी भी उसे पूरा याद है।

सचमुच कृष्ण के साथ वे कुछ वर्ष किस प्रकार उड़ते हुए से बीते। उसे इतना भी खयाल नहीं है कि एक दिन के लिए भी वास्तव में कोई दु:ख, कष्ट या अशान्ति उसे हुई भी।

तब वह अनुभव करती, दुनिया इतनी शान्त है यह उसे मालूम ही नहीं था। वह सोचती लोग अलग से स्वर्ग की तस्वीर बनाते ही क्यों हैं? वह तो यही है।

लड़की होने के पूर्व वे दक्षिण खूब घूमे।

"वाह जी, क्या किसी भी छुट्टी में तुम आराम से और बेफिक्र नहीं रह सकते?"

अमृता ने कहा था, "क्यों न हम दोनों एक आध बार बैठते उठते, बेफिक्री से घर बैठे छुट्टियां मनाएं?"

कृष्ण हमेशा एक ही बात कहता, "पता नहीं, मन में ऐसा लगता है शायद अधिक दिनों तक हम लोग इस प्रकार देश-देशान्तर घूम फिर कर देख नहीं पाएंगे। अड़चनें आएंगी। जानता हूं यह डर अमूलक है, फिर भी क्या बताऊं?

"सचमुच। हो सकता है बच्चा होने पर इच्छा रहते हुए हम कुछ वर्षों के लिए निकल न पाएं। बड़ा होने पर फिर से स्वतंत्र।"

"हां, यह तो है। जितनी सारी अकारण चिन्ताएं।"

कृष्ण के हृदय में लड़कियों के प्रति अर्थात् अपने देश की लड़कियों के लिए बहुत दया थी। अनेक बार कह चुका था, "इस देश की अधिकांश लड़कियां बड़ी असहाय होती हैं। पहले इनकी संख्या पूरी की पूरी थी। हां, अब इनमें थोड़ा-बहुत अंतर आया है। इतना होने पर भी वे हैं कितनी? कोई खास तो नहीं। उंगली पर गिने जाने लायक दो-चार। अगर कहा जाए तो सभी अंधकार के गर्त में पड़ी हैं।"

ऐसा कहते समय वह अस्थिर सा दीखता।

अमृता का दुनिया-जहान का अनुभव बहुत ही सीमित था। उसकी मां समाज की चर्चा कभी नहीं करती। इसके अलावा अवकाश का समय आश्रम में गुजारती।

अतएव कृष्ण से ही पूछा था "मैं जानती हूं—अधिकांश लड़कियां

दु:खी रहती हैं, फिर भी इनकी बातों को लेकर तुम इतने बेचैन क्यों हो उठते हो ?"

"इसका कारण है, मिता! बहुत बड़ा कारण है। बचपन की घटना मन को झकझोर देती है। मैं उस समय काफी छोटा था। मां जिन्दा थी। मेरी छोटी मौसी की शादी गांव के एक धनी परिवार मे हुई थी। अर्थ की दृष्टि मे तो धनी थे, पर शिक्षा-दीक्षा मे थे नगण्य। अलावा इसके बाहरी तौर पर तो मनुष्य थे, पर भीतर से थे पशु।"

जरा रुककर वह बोला, "सभी मिलकर उस छोटी लड़की पर काफी अत्याचार करते। हम लोगों के पास शरण पाने की आशा से आई थी, पर मेरे पिताजी ने झंझट के डर से रहने नही दिया। मां का रोना-धोना उन्हें हिला नही सका। मां के आसुओं को देखकर न मालूम क्यो उसी छोटी उम्र में पिता के खिलाफ, समाज के खिलाफ विद्रोह करने की इच्छा जागी थी। उस समय मैंने यही सोचा था कि मेरी मां का उस परिवार में, जिसमे वह सूर्योदय से सूर्यास्त तक अथक परिश्रम करती है, कोई सच्चा अधिकार नही है। फिर बेवकूफ की तरह लडकिया इतना आखिर करती क्यों है ?"

थोड़ी देर मौन रह कर कृष्ण फिर बोला, "उस समय मैं समझ ही नही सका था कि इसके अलावा उन्हे कोई और चारा नही। पोर-पोर उनका जकड़ा हुआ है। इसीलिए उन्हें शिक्षा नही दी जाती। अगर वे जान जाएं तो विद्रोह करेंगी।"

अमृता बोली, "अपनी मौसी के बारे मे बताओ।"

कृष्ण ने धीरे गले से बताया, "उसके थोडे दिनो के बाद ही मौसी सहसा मर गई। उन्होने बताया—बीमार थी। वास्तव मे कुछ मालूम नही। मां को इससे इतना सदमा पहुंचा कि उसके थोड़े ही दिनो बाद उन्होने खाट पकड़ ली और फिर उठ नही सकीं।"

अमृता चुपचाप सोचे ही जा रही थी—अपनी हालत पर क्या उसे दु:ख होता है ? पूर्व जन्म मे उसने जरूर काफी पुण्य जमा कर लिया था, जिसके फलस्वरूप वह एक के बाद दूसरा ऐसा व्यक्ति पा चुकी है अथवा पाए जा रही है कि सचमुच उसे किसी दु:ख से गुजरना नहीं पड़ा।

कृष्ण फिर बोला, "जानती हो मिता, थोड़ी-सी सत्ता पाने के विचार से लड़कियों को एक-एक कर हर पही कितना बड़ा त्याग करना पड़ा है ? यह सोचते हुए भी दिल मसोसने लगता है।"

"कृष्ण तुम जैसे पुरुषों के चलते ही तो लड़कियों को आगे बढ़ने का मौका मिला है। इसके अलावा यह सच है कि मिट्टी काटनी पड़ती है, पत्थर तोड़ना पड़ता है। और उन स्तूपाकार मलबों को ढोना पड़ता है, तभी रास्ते बनते हैं। आगे बढ़ने का रास्ता खुल जाता है।"

"इसीलिए तो मां का वह असहनीय दुःख भीतर ही भीतर कुण्ठित था जिसका प्रतिशोध मैंने घुमा-फिरा कर लिया था। शुरू से ही देता आ रहा हूं, कुछ लिया नहीं। उस परिवार से मैं कुछ नही लूंगा, जिसने मां को दिया नहीं।"

"इसीलिए शायद तुम मुझसे शादी करने के लिए व्यस्त थे ?" मिता ने शरारत से कहा था।

"मेरे प्रेम को इस प्रकार छोटा मत बनाओ। बिना कुछ जाने ही मैंने तुम्हें प्यार किया। जान लेने के बाद मैंने समझा भगवान मुझसे प्रेम करते हैं, इसीलिए तो उन्होंने हर तरफ से मेरी आकांक्षा पूरी की। अमृत का भंडार लेकर तुम मेरे जीवन मे आई हो।"

वही कृष्ण बहुत कम समय में ही इस धरती को छोड़कर चला गया। किसी महापाप के कारण स्वर्ग का देवता इस धूल भरी धरती पर आया था, इसलिए उसे स्वस्थान, देवलोक, इतनी जल्दी चला जाना पड़ा।

यह बात याद आते ही उसका मन विह्वल हो उठता है। मृत्यु के बाद क्या वह कृष्ण को पा नही सकेगी। ऐसा हो नही सकता। वहा के लायक अगर वह न भी हो, तो भी कृष्ण अपनी शक्ति से खीच लेगा।

उसे याद है जिस दिन रिणरिण पैदा हुई थी, उस दिन काफी खुश था वह। बाद में वाणी से उसने सुना था, "तुम्हारा पति भी अजीब है। तुम्हारे कष्ट को लेकर वह लगातार कहता रहा—मुझे कुछ नहीं चाहिए। मिता अच्छी रहे। उसका कष्ट मैं सह नही सकता। डॉ० से उसने कहा,

है, "मिता के कष्ट को आप दूर करें। लड़की हो जाने पर उसने अभिमानवश उसकी ओर देखा भी नहीं। जिसने मिता को इतना कष्ट दिया वह मेरा शत्रु है।" वाणी ने कहा था, "महाशय, खुद भी तो दुःख देते आ रहे हैं।"

"इसीलिए तो वाणी, मा को शांति देने का मौका मुझे नहीं मिला।"

अमृता को एक विशेष दिन की बात याद आई। किसी छुट्टी के दिन यूनिवर्सिटी के सभी प्रोफेसरों ने अपनी पत्नियों को साथ लेकर पिकनिक मनाने की व्यवस्था की थी। खाने-पीने के सभी सामान बनाकर साथ ले जाएंगे। हर व्यक्ति के जिम्मे किसी न किसी काम का भार पड़ा था। चूंकि अमृता रवीन्द्र संगीत सुनाएगी इसलिए खाना बनाने की ओर से उसे रिहाई मिली थी।

क्या वास्तव में रिहाई मिली थी?

"वाह जी, क्या मजे हैं? दो-एक गीत सुनाएंगी, इसीलिए हाथ-पैर समेट कर बैठी रही घर में। आखिर क्यों? क्या हाथ चलाने से मुंह नहीं चलता?"

उत्साहित होते हुए कृष्ण ने कहा था, "तुमने ठीक कहा। यह दूसरे के काम में हीला देने की चाल है। यह चल नहीं सकता, चल नहीं सकता।"

अमृता यह सब सुनते हुए चुपचाप मजा ले रही थी। ये सब व्यंग उसी को लक्ष्य बनाकर कहे जा रहे थे, यद्यपि ऐसा उसने कहा बिल्कुल नहीं था। प्रोफेसर एसोसियेशन की तरफ से ही ऐसा फैसला लिया गया था।

बीच में रनेन ने गुस्सा कर कहा, "तुम लोग कर क्या रहे हो? एक छोटी-सी लड़की के पीछे पड़े हो। उसका-सा गुण तो तुम लोगों में है नहीं, इसीलिए पीछे पड़ते हो। इसके अलावा उसने तो ऐसा कहा नहीं था।"

"देखते हो कृष्ण गुस्सा! भैया अपनी छोटी बहन के शरीर पर जरा भी आंच नहीं आने देगा। अच्छी बात है, भई तुम्हारी बहन को कुछ करने की जरूरत नहीं। मैं अकेली ही करूंगी। मेरी चिन्ता कौन करे?"

इससे वाणी बहन क्षुब्ध हुई थी। यों वह काफी हंसमुख है। वह एकाएक गुस्सा क्यों हो गई, अमृता समझ नहीं पाई। उसका मन खट्टा हो गया था।

उसने सिर उठाकर देखा, कृष्ण रनेन को उसकी ओर अगूठा दिखाते हुए वाणी को साथ लिए रसोई घर चला गया था।

"भैया, आपने ऐसा क्यों कहा ? मैं तो वाणी बहन की सहायता करने खुद जाती। मेरे भरोसे ही तो उसने सबके लिए दो तरह का खाना बनाकर ले जाने का वचन दिया था। मैं तो केवल मजाक कर रही थी।"

यह तो मैं जानता हूं। पर तुम्हारा रियाज ?"

"अरे, आपको मालूम नही ? कल शाम को जो गीत गा चुकी हूं, उसी में से गाऊंगी।"

"सच ? चलो, दोनों हल्के कदमो से चलकर देखें कि रसोईघर मे क्या होता है।"

जाकर देखा, कृष्ण वाणी की सहायता कर रहा है और दोनो आनन्द मग्न बातचीत करते हुए हाथ चला रहे हैं।

उन्हें देखकर वाणी चिल्लाई, "जल्दी इधर आओ। बैठो और हाथ चलाओ। कृष्ण जैसे निकम्मे से क्या कुछ हो सकता है ? अरे भई, इसमें बुद्धि लगती है।"

"ऐं, इतनी बड़ी बात ? मैंने तो इतना सब किया और अब चोर-चोर मौसेरे भाई बन गए। अंगूठी ढीली पड़ गई ?"

सबने जमकर ठहाका लगाया। उसके बाद दूसरे दिन चारों वहीं खूब तड़के ही साथ मे खाना लिए यूनिवर्सिटी मे दाखिल हुए। बाकी सभी इकट्ठे हुए थे। सभी मोटर गाड़ी पर बैठकर महाबलीपुरम चले गए थे। वहां एक सुन्दर स्थान खोजकर वे सभी बैठे। ताश खेले गए, बाजे बजाए गए, गीत हुए, बातचीत हुई और न मालूम क्या-क्या हुआ। इस हुल्लड़बाज़ी के बीच दिन कैसे गुजर गया किसी को पता ही न चला। पर इन सबको मात कर दिया था अमृता के एक गीत ने—"चांदेर हासिर बांध भेंगेछे।"

सचमुच चादनी में समुद्र का पानी झिलमिल कर रहा था। ऐसा प्रतीत हुआ मानो प्रकृति आनन्द से पागल हो उठी है और सबके मन पर उसकी छूत लग गई है।

जानकर और अनजान सभी उसके सुर में सुर मिलाने की चेष्टा कर

रहे थे। सबने एक स्वर से अमृता का जय-जयकार किया था। और इसके साथ-साथ ऐसी पत्नी जुटा पाने के लिए सबो ने कृष्ण की भी शुक्रिया अदा की थी।

उस दिन लौटने पर चारों मे से किसी की आंखों में नींद नही आ रही थी। सारी रात अनेक बातचीत हुई थी।

दूसरे दिन भी छुट्टी थी। इसीलिए रनेन पालित ने कहा था, "अन्य रातों से अलग कर हम लोग इस रात को पकड़े रहेंगे।"

इस रजनी की स्मृति अमृता के मन मे अम्लान रह गई है।

वाणी और रनेन को भी। पर कृष्ण को ?

सहसा ख्याल हुआ काफी दिनो से उनके साथ मुलाकात नही हुई है। ठीक ही होंगे। पत्र आते है। वे लंदन में हैं।

कलकत्ते चले आने के करीबन तीन साल बाद एक अच्छी नौकरी पाकर रनेन ने विलायत जाने का निश्चय किया। तब तक इनके मां-बाप गुजर चुके थे। पीछे का खिचाव कम था।

रिण को साथ लिए उसे भी चलने को कहा था, पर अमृता राजी नहीं हुई। उस समय तक कलकत्ता उसे भा गया था।

सोलह

उसे ऐसा भान हुआ था मानो फिर से पैरों के नीचे मिट्टी जम रही है। रिण ने स्कूल में अच्छा रिजल्ट किया है। उसे भी खुद की नौकरी अच्छी लग गई है। इसके अलावा रामकृष्ण मिशन के साथ जुड़ गई है। इन्स्टीट्यूट के स्वामी जी अच्छे लगते है। इसीलिए वह गई नही।

कहा था, "वाणी बहन, तुम लोग तो वापस आओगे ही, तब मुलाकात होगी। इसके अलावा रिण के बड़ी हो जाने पर जाने की इच्छा है।"

दोनो प्रायः ही आते हैं। यहा मकान खरीद लिया है। आगामी वर्ष हमेशा के लिए चले आएंगे। रिण के साथ जब वह पेरिस में थी तब बहुधा मुलाकात होती। उनके साथ वे दिन कितने आनन्द से कटे थे। उनका

संग विशेप कर उसे अच्छा लगता है ।

कृष्ण तो उन्हीं में से एक था ।

अभी भी सप्ताह में एक पत्र न पाने पर वह तार करती है, टेलीफोन करती है। उन्हीं के चलते तो इतनी सहजता से वह रिण का साथ पकड़ सकी थी। कितनी पगली लड़की है वह। स्कॉलरशिप पाकर भी नही जाने की जिद पकड़ ली थी उसने।

"अम्मा, तुम्हें छोडकर मैं कही नही जाऊंगी। क्यों, यहाँ रहकर क्या कोई बड़ा नही हो सकता? ये सब भूठी धारणाएं हैं। अवनीन्द्रनाथ ठाकुर, नन्दलाल बोस ये सब ?"

एकदम अकाट्य तर्क।

अमृता को बाणी बहन की याद आई। तुरंत टेलीफोन पर सब कुछ बताया। वे लोग खुशी से पागल हो उठे।

"इसके लिए चिन्ता मत करो। हम लोग तुरत दोनों के टिकट के रुपये भेज देते है, और इधर से चिट्ठी भी दे रही हूं। तुम अपने भैया के पास रहना। खर्च तो उसका होगा।"

इसी प्रकार दोनों चले गए थे। अगर कहा जाए तो रिण उनकी ही आधी बेटी है। पैदा होने और विलायत जाने तक रिण बाणी बहन के ही हाथों पली थी।

जाते वक्त कहा था, "आज कृष्ण रहता तो क्या यों रिण को हम छोड़ जाते? उसे छोड़कर जाते हुए मेरा कलेजा फटा जा रहा है, पर तुम्हें भी तो एक सहारे की जरूरत है। हम लोग दो जन हैं। रो-धोकर कुछेक साल बिता देंगे। तुम रिण को लेकर रहो।"

तभी से रिनि की प्राणप्रिय सहपाठिनी संगीता के चलते मिस्टर और मिसेज चौधरी के साथ धीरे-धीरे अंतरंगता स्थापित हो गई।

ये ही अब अपने हो गए हैं। जरूरत-बेजरूरत, बीमारी-विमारी में ये लोग ही आकर खड़े होते हैं।

सहसा अमृता का दिल दहल गया, अगर उसे कुछ हो जाए तो, रिण रिण

का क्या होगा ? पर दूसरे पल ही वह निश्चिन्त हो गई।

नहीं, अब कुछ चिन्ता की बात नहीं। रिण अब पहले की बच्ची नहीं रही। अगर देखा जाए तो वही उसकी देखभाल करती है। वह लायक, रोजगारी और प्रतिष्ठा सम्पन्न लड़की है।

इतनी छोटी उम्र में काफी नाम कमाया है। जल्द ही खुद की बनाई हुई तस्वीरों की एक प्रदर्शनी कर रही है। कृष्ण देखो, तुम जैसा चाहते थे मैंने उसी तरह तुम्हारी बेटी को बनाया है। तुम कहते थे न कि उसे इन्सान बनाने की इच्छा है। दो पैसे अधिक कमाया या दो पैसे कम, यह बड़ी बात नहीं। इन्सान, अर्थात् इन्सानियत ही सबसे बड़ी बात है।

अमृता सोचने लगी—तुम्हारी आकांक्षा शायद मैं पूरी कर सकी हूं। मैंने उसे सब कुछ बता दिया है। पेरिस जाने की बात तय होने के साथ ही मैंने उसे सब कुछ बता दिया है। डर था दुःख पाएगी, पर मालूम है तुम्हारी बेटी तुम जैसी ही है। तुम्हारी ही बातें फिर से नये तौर पर, नये रूप में उसके मुंह से सुनने को मिला।

"अम्मी, तुम्हारा जन्म ईसा मसीह की तरह हुआ है। अगर ऐसा नहीं होता तो ऐसी दादी मुझे नहीं मिलती और न मिलता महाराज का आशीर्वाद। शायद पिता जी काफी भाग्यशाली थे, तभी तो तुम्हें पा सके थे। अम्मी, पहले तुमने मुझे क्यों नहीं बताया ? सीने पर पत्थर दबाए बैठी थी, इसीलिए शायद तुम्हारी सेहत पहले की अपेक्षा बिगड़ गई है। अब से जिस प्रकार पिताजी तुम्हारी रक्षा किया करते थे मैं भी वैसा ही करूंगी। मैं अपने पिता की तरह बनूंगी।"

यों रिण हमेशा से अच्छी रही है। पर उसके बाद से वह और भी उत्तरदायित्वशील बन गई।

रिण बहुधा कहती—"किसी हाउस कीपर-कम-रसोई जानने वाली लड़की अथवा लड़के को रख लिया जाए तो कैसा रहे ? तुम्हें थोड़ा आराम मिलेगा। मैं तो हर ओर संभाल नहीं पाती हूं, तुम्हें भी बहुत कुछ करना पड़ता है। पिताजी के रहते तो तुम्हें इतनी कसरत नहीं करनी पड़ी थी, यद्यपि तुम्हारी उम्र बहुत कम थी। अब मेरी बात सुनो, अम्मी, मेरी भी इच्छा तुम्हें उसी तरह रखने की होती है।"

यह सुनकर अमृता का दिल धड़कने लगता है। बीते हुए दिनों को वह किसी भी तरह उसी रूप में पा नहीं सकती। उस नाटक के असल नायक का तो वास्तव में प्रत्यावर्तन हो नहीं सकता।

यों वह जवानी कहती है, "रिणरिण तुम समझ नहीं पाती हो। उस समय की मैं, आज की मैं नहीं हूं। इस बीच काफी पानी लुढ़क चुका है। आदत भी बदल गई है। इसके परे पश्चिम में रहने के कारण काम करने के इरादे और अभ्यास दोनों ने घर दबोचा है। ऊपर से ऐसी होनहार लड़की है। मुझे करना ही क्या पड़ता है? हम लोगों ने व्यवस्था सहज और सरल बना ली है। कहती क्या हो?"

जरा रुककर फिर बोली, "हाथ-पैर सिकोड़े बैठकर क्या तुम्हारी मा इतनी कर्मठ रह सकती थी? इसके अलावा तुम जैसी संतान मेरी नजरों के सामने है और ऊपर से है प्रियजनों का स्नेह-ममता। हर तरफ से विचार कर देखो, रिण, मेरी तरह शान्ति से कितने लोग हैं?"

रिण चुपचाप सुनती और समझती है, उसकी मा व्यस्तता के बीच रहना चाहती है। काम करते रहना चाहती है। उसमें टांग अड़ाना उचित न होगा।

इसीलिए रिण केवल कहती, "नहीं, सोचती थी छुट्टियों के दिन क्या कोई व्यवस्था करूं? उन्हीं दिनों तो बोझ अधिक पड़ता है।"

"छुट्टियों के दिन तो तुम पर काम का बोझ अधिक पड़ता है। सवेरे छात्र-छात्राएं आते हैं। इसके अलावा दोपहर की रसोई का भार भी तुम्हीं पर पड़ता है। मैं तो अधिकतर मेमसाहब की तरह नाश्ता खाकर निकल पड़ती हूं और लौटती हूं भोजन की मेज़ पर बैठने के लिए। रात की रसोई का झंझट तो किसी दिन रहता ही नहीं है।"

"यह तो ठीक है! रात का काम तो इधर-उधर खाने का रहता है। इसके अलावा दोपहर को भी बहुधा संगीता के यहां ही खाने को मिल जाता है। इसलिए देखती ही हो, मुझे ही कितनी मेहनत पड़ती है?"

बात यहीं खत्म हो गई थी।

अमृता सोचती है, बेटी मुझसे कितना अधिक प्यार करती है। मां-बाप सन्तान से तो इतना ही चाहते हैं—स्नेह, ममता, सहानुभूति, जिसके सहारे

उन्हें ऊंचा उठाया जाता है।

किसने कितना अधिक रुपया खर्च किया या कम, यह बात तो गौण थी।

एक दिन कृष्ण ने कहा था, "बताओ तो मिता, ऐसा होता क्यों है? ऐसा क्योंकर होता है?"

"कहना क्या चाहते हो?" अमृता ने हाथ की बुनाई बन्द रखते हुए कृष्ण के चिन्तित मुख की ओर निहार कर देख लिया था।

"नहीं, मैं ही कहता था कि मेरे पिताजी अपनी अन्य संतानों की अपेक्षा मुझे दूसरी नजर से देखते हैं। मेरे अच्छे-बुरे, जीने-मरने से उन्हें कोई मतलब नहीं। मेरी ओर से एकदम निर्लिप्त हैं। महीने के अन्त में केवल दो लाइन का चिट्ठा, रुपया मिला-मात्र भेजते हैं। इधर कुछ दिनों से वह भी बन्द हो चुका है, जब से लड़की पैदा होने के बाद हर महीने रुपये भेजना बन्द हुआ है। हालांकि उनकी अवस्था मुझसे भी अच्छी है, इतना होते हुए भी देखता हूं कि वही आदमी अपनी अन्य संतानों के लिए कितना व्याकुल और चिन्तित रहता है।"

अमृता क्या जवाब दे? ऐसी परिस्थितियों के बीच तो वह पली नहीं है। वह अपनी मां की एकमात्र संतान थी। अपना समस्त प्रेम उसकी मां ने उस पर उंड़ेल दिया था। पर उसने बहुतों के मुंह से सुना है कि सभी हर एक को प्रेम का समान हिस्सा देते नहीं है अथवा दे नहीं पाते हैं। शायद वे साधारण लोग हैं, यही उनका परिचय है। बोली, "पुनर्जन्म पर तो तुम विश्वास करते हो। जो जितना पाने का भागी है, उससे अधिक शायद वह पा नहीं सकता।"

"तुम सच कहती हो, मिता।" कृष्ण चुप्पी साध गया।

दूसरे दिन जिस विषय पर वह लेक्चर देता, उसी विषय की किताब पढ़ता रहता। अगर कहा जाए तो बच्चे का झंझट मिता को उठाना ही नहीं पड़ता है। वास्तव में वाणी ने ही उसका लालन-पालन किया था सुबह से शाम तक वाणी की हिफाजत में रहती, केवल रात को छोड़कर।

उस पर भी अगर थोड़ी-सी तबीयत खराब हुई तो बस। वाणी कहती, "रहने दो, काफी हो चुका। तुम तो देख चुकी। स्वस्थ न होने तक वह मेरे नजदीक सोयेगी।"

अमृता की चिन्ताधारा दूसरी ओर मुड़ी। सचमुच, चिन्ताधारा की तुलना लोग नदी के साथ करते है। जिस प्रकार नदी की धारा का कोई ठिकाना नहीं रहता, उसी प्रकार चिन्ताधारा का भी। फिर भी यह सही है कि चिन्ताधारा की गति का स्रोत और भी प्रखर रहता है, क्योंकि मन के बीच उसे अड़चनहीन मौका मिलता है। इसीलिए वह बड़ी आसानी से एक राह से दूसरी राह पर अनायास ही चली जाती है। पहाड़ मे घूमते हुए वह गांव की पगडंडी पकड़े अवलेश भाव मे चली जाती है।

नदी के पानी को उतनी आजादी नही मिलती। इसीलिए अनिच्छा रहते हुए भी उसे काफी दूर तक बंधे-बंधाए पथ पर बहना पड़ता है। इसी-लिए संभवत: उसके मन का जमा हुआ क्षोभ बाढ़ के रूप में प्रगट होता है।

प्रकृति का नियम समान रूप से चलता है। दिन के बाद रात, फिर दिन। रश्मि-रथी की रोशनी से दिन होता है। पूर्व दिशा से आकर पृथ्वी अपने निश्चित पथ पर परिक्रमा करती हुई पश्चिम के दरवाजे से होकर अपनी विरामस्थली की ओर निकल जाती है। आराम करने के बाद उसे फिर उसी तो रास्ते से निकलना है।

सूर्य के ओझल होते ही धीरे-धीरे अवगुंठनवती निशा का आगमन होता है। सारे संसार में यही नियम चलता आ रहा है।

हम लोग एक दिन अचानक देखते है, सूरज उगा ही नही। निशा पूर्ण विदाई लेना भूल जाती है। इसी धरती को आधी रोशनी और आधी छाया से ढके रखता है।

इसे देखकर ऐसा लगता है मानो भावी को भी कभी-कभी नियम न मान कर चलने की इच्छा होती है। इसीलिए तो मनुष्य को भी कभी-कभी नियम भंग कर असमय में ही चला जाना पड़ता है। यह सभी जानते और समझते हैं कि मनुष्य जहां से आया है, एक दिन उसे वहां अवश्य ही जाना पड़ेगा।

पर उसके भी नियम है। इसीलिए मानव जीवन चार भागों में

विभक्त है—शैशव, यौवन, प्रौढ़ता और वार्धक्य। पर हठात् इसमें व्यतिक्रम होते दिखाई पड़ता है।

कृष्ण का जीवन भी एक व्यतिक्रम था। वह स्वस्थ, सबल और ज़िन्दादिल युवक था। वह अचानक इस व्यतिक्रम का शिकार बना।

आखिर क्यों? अमृता इसे समझ नहीं पाती। वह सोचती है, मनुष्य का यह सुख देवता सह नहीं सकते। उन्हें भी यह देखने में अच्छा नहीं लगता है कि स्वर्ग की छोटी-सी एक किरण इस धरती पर आ पड़ी है। संभवतः इसीलिए अपनी आखों पर हाथ धरे वे एक स्वर से चिल्ला उठते हैं—"उसे हटाओ। इस सुखी घोंसले को तोड़ डालो।"

हाँ भी सकता है, अथवा यह मन की चिन्ता या अनुभूति भी हो सकती है। इसके सिवा और कुछ नहीं। मनुष्य के लिए वह भी तो संभव हो सकता है। अमृता इन सब बातों पर विचार करती है।

मनुष्य भगवान का अंश है। इसीलिए वह अनेक चीज़ों की सृष्टि करना पसंद करता है। नये तरीके से, नये सिरे से। तभी तो वह नई-नई व्याख्या देता है। यह उसका जन्मजात गुण है।

शायद यही उसके भाग्य में लिखा था—अपने पति और संतान को लेकर तुम इतने ही दिनों तक संसारी रहोगी। इससे अधिक नहीं। इस धरती पर आने के कारण ही तुम्हारे भाग्य में यह लिखा गया था। इसमें हेर-फेर नहीं होगा। हो ही नहीं सकता।

इसी अमोघ नियमानुसार कृष्ण के जीवन में घटना घटी। कुछ दिनों तक कमजोरी अनुभव करता रहा। उत्साह कमता रहा। वे तीनों उद्विग्न हो उठे, एक बड़े डाक्टर के पास ले गये।

कृष्ण ने कहा था, "तुम तीनों मिलकर मुझे पागल बना दोगे। मैं तो ठीक ही हूं। थोड़ी बहुत कमजोरी अनुभव करता हूं। शायद अधिक परिश्रम करना पड़ा था। दो-चार दिनों तक कोई टानिक खाने से ठीक जाएगा।"

कुछ दिनों के बाद वह पूर्ण स्वाभाविक हो गया। वह तो केवल कुछ ही महीनों के लिए था। फिर वही कमज़ोरी आरम्भ हुई।

इस बार डॉक्टर ने पूरी परीक्षा की। डॉक्टर के मुंह

से उच्चारित हुआ सर्वनाशी नाम—कैंसर।

उस दिन की बात अमृता को स्पष्ट रूप से याद आई। बिना कारण दिखाये भगवान ने अपनी सजा सुना दी—"तुम्हारे सुख के दिन खत्म हुए अमृता।" जिस अमृता को किसी दिन कोई बीमारी नहीं हुई उसी अमृता के हाथ-पाँव ठंडे पड़ गए। उसके बाद वह बेहोश हो गई थी। वाणी बहन ने बताया था कि काफी देर बाद उसे होश आया था। भाग्यवश कृष्ण इसे जान नहीं पाया और रनेन भी उसकी बेहोशी की बात से अनजान रहा।

वे फिर से डॉक्टर के नजदीक गए थे। वाणी बहन ने धमकाया था—"इस तरह दिल कमजोर करने से चलेगा? उसे जिन्दा रखने के लिए हम लोगों को प्राणपण से कोशिश करनी पड़ेगी। तुम्हें पत्थर की तरह कठोर बनना पड़ेगा। अगर हम लोग सफल नहीं भी हुए,फिर भी आने वाले दिनों में हम अपने को सान्त्वना दे सकेंगे कि हमने अपनी शक्ति भर सब कुछ किया था। इस ओर से हमने कोई कसर नहीं रखी।"

कृष्ण को कुछ मालूम नहीं था। रनेन से बताया था। वही आकर कह गया था।

हम तीनों ही केवल जान सके। चौथे के कानों मे यह बात नहीं जाएगी। इसी भांति वे समय गुजारते। उसके इलाज में अमृता ने जो कुछ भी था सब लुटा दिया।

रनेन और वाणी भी फकीर बन गए थे। उन्हें मालूम था कि वह बचेगा नहीं। फिर भी—"मेरे भाई के इलाज में कोई कोर-कसर नहीं रहे।"

रनेन ने कहा था, "अगर ऐसा नहीं हुआ तो आखिरकार हम जिन्दा रहते हुए भी मृतवत् रहेंगे।" अन्त तक रनेन को काफी कर्ज भी लेना पड़ा था।

एक दिन अमृता ने रोते हुए कहा, "भाई, तुम तो रास्ते के भिखारी बन गए।"

"मैं भिखारी नहीं बनूंगा तो क्या बनूंगा? मेरी राजरानी बहन तो पथ की धूल में बैठ गई है। उसका क्या करूंगा? इसके सिवा, अगर कहा जाए तो, यही मेरा अकेला भाई है। घर में बूढ़े माता-पिता को छोड़कर

दुनिया में और रहा ही कौन ? उनका तो किसी भी दिन बुलावा आ सकता है।"

रिण थाणी बहन के पास रहती। अमृता नजर फिराकर भी उसकी ओर नहीं देखती। एकाग्रभाव से वह केवल सेवा करती। और करती प्रार्थना—"अगर यगा करना है, प्रभु ! तो कर दो, वरना कष्ट दिए बगैर उसे उठा लो। हे ईश्वर मेरी इतनी-सी बात तुम रखना।"

वह जानती थी, यह बीमारी इतने एडवांस स्टेज पर मालूम पड़ने से दूर नहीं होती। कुछ दिन अधिक बचे या कुछ दिन कम।

अमृता की प्रार्थना जहां तक संभव हो सकी ईश्वर ने सुन ली थी। इतने गैलोपिंग कैंसर के बावजूद कृष्ण को पीड़ा नहीं हुई। डॉक्टर दंग हर गए थे। सबने कहा, यह अमृता की प्रार्थना का ही फल है।

अन्तिम श्वास लेने के पहले कृष्ण बोला—"मिना, तुम्हारे लिये मैं कुछ भी नहीं कर सका। तुम्हें रास्ते का भिखारी बनाकर जा रहा हूं।"

"ऐसा न कहो। तुम्हारे चलते ही मैं जिन्दा हूं। तुम्हारे चलते ही मैं यह जान सकी कि इस पृथ्वी पर पाने के लिए बहुत कुछ है। मैं जब तक जिन्दा रहूंगी तुम मेरे निकट रहोगे, रहोगे मेरे मन में। तभी तो मैं आगे बढ़ सकूंगी, तुम्हारी बेटी को अच्छी तरह पाल-पोस सकूंगी। तुम केवल इतना ही अनुभव करने देना कि तुम मेरा हाथ थामे हुए हो।"

कृष्ण ने धीरे-धीरे उसका हाथ पकड़ा। चेहरे पर शांति की एक रेखा खिंच गई।

उसके बाद चिराग बुझ गया।

अभी भी साफ-साफ याद है।

अमृता की आखों से आंसू का एक कतरा भी नहीं ढलका। वह काठ मारकर बैठी रही। वाणी बहन ने रोते हुए उसे जकड़ लिया था।

सबने कहा, अगर अमृता इसी तरह रही तो पागल हो जाएगी। पर उसकी आंखों में न आंसू गिरे और न तो मुंह से बात ही निकली। वह किसी को समझा भी नहीं पा रही थी। सभी तो शरीर को ही लेकर व्यस्त हैं। मगर वह अपनी आखों से देख रही है कृष्ण को, वह अपनी स्वाभाविक हंसी में उसके सामने खड़ा है।

मानो उसके कान में फुस-फुसाकर कह रहा है, "तुम चिन्ता न करो। मैं तुम्हारे साथ हूं। रिण के साथ हूं।"

रनेन ने मुखाग्नि दी। वही तो वास्तव में बड़े भाई की तरह था। उसके बाद उसे लेकर उसके फ्लैट में लौट आया था। वहां उसे सबकी काफी सहानुभूति मिली थी। फिर भी न मालूम क्यों मद्रास शहर उसे विष जैसा लगने लगा।

वह अनुभव करती, अगर यहां से वह चली न गई तो पागल हो जाएगी। यद्यपि वह बाहर से स्थिर थी, फिर भी उसका अन्दर टूटकर चूर-चूर हुआ जा रहा था।

दो-चार दिनों के बाद ही उसने वाणी से कहा—"यहां रहने से मैं जरूर ही पागल हो जाऊंगी। तुम लोग कहीं दूर मेरे लिए कोई काम खोज दो।"

"तुम्हारा भैया भी रोज यही कहता है। इसके अलावा मुझसे भी अब नहीं चलता। तुम्हारा भैया कलकत्ता लौट जाने की कोशिश कर रहा है। आशा है, नौकरी मिलने पर चला जाएगा। उस समय हम सभी एक साथ चलेंगे।"

"सोचती हूं, तब तक यही कुछ कर लूं। तुम लोगों के मत्थे···"

मुंह बन्द करते हुए वाणी ने कहा—"ऐसा मत कह। आम्मि, मैं तुझे कितना प्यार करती हूं, यह बात क्या तुम्हारी समझ में नहीं आएगी?"

आश्चर्य से उसने वाणी बहन की ओर देखा। उसकी आंखें आंसुओं से भरी थीं।

"क्यों री, क्या हुआ? चुप क्यों है?"

"जानती हो वाणी बहन, सबसे अनजान केवल मेरी मां ही मुझे इस नाम से पुकारती थी। एक दिन मैंने केवल कृष्ण से बताया था। तुमने अन-जाने ही इस नाम से मुझे बुलाया। मुझे सांत्वना दिलाने के लिए ही मेरी मां ने तुमसे इस नाम से मिलवाया। उन्होंने आगाह करा दिया कि तुम उन्हीं की तरह मुझे जकड़े रहोगी।"

यही कहकर अनेक दिनों के बाद वाणी बहन से चिपककर वह रोती हुई बेहाल हो गई थी। कृष्ण के जाने के बाद ऐसी रुलाई वह नहीं रोई थी।

उमी समय से उनके साथ रहने में उसे कोई द्विधा नहीं हुई थी।

अमृता काफी थकावट अनुभव करती है।

धीरे-धीरे उसने आंखें खोली। यह क्या, शाम बीत कर रात हो आई। यह समझ ही नहीं सकी। सवेरे दस बजे रिण के साथ खाना खाने के बाद बरामदे में जो आकर बैठी तब से उठी ही नहीं।

किसी चिन्ता में लीन थी। दोपहर ढलकर शाम हो आई। उसके बाद सन्ध्या का प्रस्थान और रात्रि का आगमन। उसे पता ही नहीं चला।

कृष्ण के ध्यान में लीन थी।

मन में बड़ी तृप्ति अनुभव की उसने। प्रेमी को नज़दीक पाकर ऐसा ही होता है। पर कमज़ोरी अनुभव होती है, सिर जकड़ा हुआ है। शायद इतनी देर तक समान भाव से बैठे रहने का यह फल है। हो सकता है समय पर चाय न पीने का नतीजा हो यह।

उठने की उसने जल्दबाजी की पर उठ न सकी। सिर चकरा गया। अंधकार हो आया है। रोशनी भी नहीं जलाई गई है। रिण भी अभी तक नहीं आई। काफी देर हो रही है। उसके लिए कुछ बनाया भी नहीं। बेचारी दिन भर खटकर आएगी। उसकी तो छुट्टी थी, प्रायः बैठकर ही बिता दी।

दूसरे क्षण सोचा—सौभाग्य से बैठी थी तभी तो कृष्ण को इतने निकट से पा सकी।

दूर से फ्लैट में अंधकार देखकर रिण को आश्चर्य हुआ। उसकी वापसी के समय तो मां कभी घर से बाहर नहीं निकलती। उसके लिए प्रतीक्षा करती रहती है। काम पर जाने की बात अलग है। आज तो दिन-भर मां की छुट्टी थी।

कहीं संगीता तो अचानक बुलाकर नहीं ले गई? तब तो मां ज़रूर ही चिट्ठी लिखकर गई होगी। इस प्रकार के ऊहापोह में वह दो तल्ले के अपने फ्लैट के दरवाज़े पर आ खड़ी हुई।

ताली से दरवाज़ा खोलकर उसने बैठकखाने की रोशनी जलाई।

रिण की प्रतीक्षा में अमृता बरामदे में बैठी थी।

उठते ही सिर चकराने लगता है, इसलिए उठ नहीं सकी।

"क्यों री, ! रिण आई ? तेरी प्रतीक्षा में बैठी थी। मुझे पकड़कर ज़रा भीतर तो ले चल।"

"क्यों अम्मी ? इस अंधकार में तुम बरामदे में बैठी हो ?"

हाथ की चीज़ों को फेंककर रिण दौड़कर मां से चिपक गई।

"तुम्हें क्या हुआ है, मुझे बताओ ?"

रिण के रुंधे गले से अमृता विचलित हो उठी—"कुछ तो नहीं। केवल सिर चकरा रहा है।"

सावधानी पूर्वक पकड़कर रिण ने मां को बिछावन पर लिटाकर और पानी में एक चमचा ब्रांडी मिलाकर पिला दिया।

"मां, तुम लेटी रहो। मैं अभी ओवलटिन गरम कर तुम्हें खिलाती हूं।" मां की ओर नज़र करते ही उसे अनुभव हुआ मानो वह बेहोश हो गई है। ठीक थोड़ी देर पहले ही उसके कानों में मां की धीमी आवाज़ सुनाई पड़ी थी—"कृष्ण, कृष्ण।"

उसका दिल दहल उठा। उसके पिता का तो यही नाम है। क्या मां ने उन्हें नज़रों के सामने देखा ?क्या पिताजी उससे दुश्मनी साधने के लिए मां को लेने आए हैं ?

उसने सुन रखा था कि कभी-कभी ऐसा होता है। नहीं, वह ऐसा नहीं होने देगी। उसकी अम्मी उसके साथ रहेगी।

फोन करने के विचार से उसने दौड़कर फोन का रिसीवर उठाया। हे भगवान ! फोन तो खराब है।

अब वह क्या करे ? कुछ तो करना ही होगा। दौड़कर वह एक तल्ले पर गई। पर बदनसीबी उसके साथ थी। वहां महाराजिन के सिवा घर में कोई नहीं था। सभी बाहर गए हुए थे।

"सुनो मानदा, मां बेहोश हो गई है। फोन भी खराब है। थोड़ी देर के लिए तुम मां के पास बैठो। मां के नज़दीक रहना। करम फूटा है। सामने फोन करने जा रही हूं।"

"तुम जाओ दीदी, मैं तुम्हारी मां के नज़दीक रहूंगी। दुर्भाग्यवश आज

के दिन ही घर में कोई नहीं है।"

तब तक रिण दौड़ती हुई रास्ता पार कर उस घर में घुस चुकी थी।

एक महाशय उठते हुए बोले—"आइए मिस राव। आप तो अमृता देवी की पुत्री हैं न ?"

शायद और भी कुछ कहते, पर रिण का चेहरा देखकर रुक गए।

चेहरा सूख गया था। विचलित आंखों में दिशाहारापन का भाव था।

"मैं डॉक्टर को जरा फोन करना चाहती हूं। मेरी मां अचानक बेहोश हो गई है।"

"जरूर, जरूर। पर एक बड़े डॉक्टर तो यहीं बैठे हैं—डॉ० नीलकंठ चटर्जी। जाओ नील, देर मत करो।"

डॉ० नीलकंठ रिण को देखते ही पहचान गए। यह मुंह और ये आंखें भुलाए नहीं जा सकते।

कुछ महीने पहले इसी को उन्होंने वृत्तभंगी में ट्रैफिक कंट्रोल करते हुए देखा था। स्लाक्स और बुश-शर्ट पहने थी। चलने के कायदे से ऐसा लगता था मानो सारी दुनिया इसकी मुट्ठी में है।

और आज ? पूरे चेहरे पर असहाय-भाव फूट पड़ा है।

डॉ० चटर्जी समझ गए, लड़की उन्हें पहचान नहीं पाई। हो सकता है, साधारण अवस्था में शायद याद आ जाती।

"आप डॉक्टर हैं ? भगवान की कितनी बड़ी दया है। आइए, जल्दी आइए। मां अकेली है।" कहते-कहते रिण दौड़ पड़ी और एक ही सांस में सड़क पार कर मोने के कमरे में दाखिल हुई। डॉ० चटर्जी ने रोगिणी का हाथ उठाकर नाड़ी देखी।

"नहीं, भय की कोई बात नहीं।" कहते हुए उन्होंने बैग से इंजेक्शन निकाल कर लगाया।

"कैसा देख रहे हैं मां को ?"

लड़की की ओर निहार कर डॉक्टर को माया आ गई। क्या दूसरा कोई नहीं है ?

"नहीं, मिस राव, डरने की कोई बात नहीं। उत्तेजना और कमजोरी के कारण बेहोश हो गई हैं। होश में आ जाएगी। मुझे एक कलम कहते

हुए उन्होंने लड़की की ओर निहारा और समझ गए कि लड़की का हाथ कांप रहा है।

"माजरा क्या है ? आप खड़ी हैं, गिर पड़ेंगी। बैठ जाइए।"

"आपकी कलम ?"

"नहीं, नहीं, मेरे पास है। मैं भूल गया था।"

स्टेथस्कोप से अच्छी तरह जांचने के बाद बोले—"जो कुछ कह चुका हूं, फिर वही कहता हूं—डरने की कोई बात नहीं। अभी होश में आ जाएंगी। उस समय इन्हें दूध अथवा ऐसी ही कोई चीज देने की जरूरत है।"

"मैं अभी ले आई।"

"आप क्यों ? और किसी से कहें। आप थोड़ी देर स्थिर बैठें।"

"मां, और मैं, दो ही तो रहती हैं। तीसरा कोई नहीं है।" कहती हुई रसोई घर की ओर चली गई।

रिण की ओर देखकर डॉ० चटर्जी को लगा कि पहले की अपेक्षा अब स्थिरता आई है। शायद उनकी ही तसल्ली से।

एक कप ओवलटिन गरम कर रिण ने बिछावन के नजदीक मेज पर ला रखा। थोड़ी देर बाद ही अमृता ने आंखें खोलीं।

"रिण, कहा गई ? कुछ खाया या नहीं ?" कहकर उठने की कोशिश की।

डॉ० चटर्जी और रिण ने मिलकर उन्हें सुला दिया।

"आप उठें नहीं।"

"तुम थोड़ा ओवलटिन पी लो।"

अमृता ने चुपचाप ओवलटिन ले लिया।

"यह लड़का कौन है ?"

तब तक रिण के चेहरे पर असली रिण की छाप लौट आई थी।

"सचमुच ! तुमसे तो परिचय ही नहीं कराया। आप हैं डॉ० नीलकंठ चटर्जी और यह मेरी मां है।"

अधखुली आंखों से ही अमृता बोलीं—"आपको देखकर बड़ी खुशी हुई। मुझे बड़ी नींद आ रही है रिण। मैं सोती हूं—तुम कुछ खा लो। और हां, डॉ० चटर्जी को भी खिला देना।" कहते-कहते वे सो गईं।

रुंधे गले से रिण बोली—"यह क्या डॉ० साहब, मां तो सो गई।"

"हां, जरूर सोएंगी। इंजेक्शन में ताकत और नर्वसूदिंग दवाई है। इसीलिए अभी कुछ देर तक सोएंगी। आपकी मा ने तो आपसे खाने के लिए कहा। मेरी बात पर विश्वास कीजिए और चैन से खाइए।"

अब नीलकंठ की ओर देखकर अचानक उसे सुधि आई, इसे तो शायद कही देखा है। सही-सही याद नही कर पा रही थी, पर काफी पहचाना-सा लगता था।

"सचमुच, आपकी बात से मुझे तसल्ली हो रही है। मालूम है डॉ० चटर्जी, मां के सिवा मेरा और कोई नही है।"

इस बात का कोई जवाब न देकर वे बोले, "आपकी मां तो अभी आध घंटा से ज्यादा सोएंगी। मुझे भी काफी भूख लगी है। अभी तुरंत अस्पताल से खाने के लिए दोस्त के घर आया था। चाय का कप होंठो पर लगाने के पहले ही आप आंधी की तरह घुसी। बाकी तो आप जानती ही हैं।"

"मैं अभी चाय बनाकर लाती हू। इसके अलावा कालेज से लौटते वक्त साथ मे रसगुल्ला और समोसा ले आई हूं। वही ले आती हूं।"

"आप कालेज मे पढती है ?"

मन में निश्चिन्तता आ जाने के कारण अब उसमें स्वभाविक बातें करने का तरीका आ गया।

"इतनी बूढी लड़की क्या कालेज में पढ़ती है ? क्या कहते हैं ? मैं पढ़ाती हूं।"

"अच्छा ! आप कालेज में पढ़ाती हैं ? देखकर तो ऐसा बिलकुल नही लगता।"

"क्यों ? देखने में मूरख-मूरख लगती हूं न ? इसीलिए केवल बातें ही किए जा रही हूं। जाऊं, पहले चाय बनाकर ले आऊं। मगर…"

"फिर अगर-मगर क्यों ?"

"अर्थात्, मा के नजदीक कौन रहेगा ?"

"क्यो ? मैं तो हूं। कोई डर नही। मेरी मां के बीमार पड़ने पर क्या मैं ही रहता हू ?"

"आपकी मा हैं ?"

"हां।"

बिना कुछ बोले रिण रसोई घर में चली गई। नीलकंठ बैठा सोच रहा था—केवल मां और बेटी रहती हैं! आजकल ऐसा प्रायः ही देखा जाता है। एक संदेह मन मे हुआ। लगता है इनके तीनों कुलों में कोई नहीं है। अतएव ऐसी अवस्था मे इन लोगों को छोड़कर उसका चला जाना उचित नहीं होगा।

उसके घर में नौकर के सिवा कोई नहीं है। और बगल के मकान का फोन नम्बर नौकर को दे आया है ताकि कोई अरजेंट कॉल आए तो बता दे। कल मोटर के अचानक खराब हो जाने से काफी असुविधा में फंस गया था। आगामी कल दे जाने की बात है।

सामने देखा, लड़की हाथ मे ट्रे लिए आ गई है। फिर से वह विपण्ण दीख रही है।

चाय का कप और खाने की तश्तरी आगे बढ़ाकर तथा स्वयं कप लेती हुई वह बोली—"अच्छा डॉ॰ चटर्जी, सच कह रहे है, कि भय की कोई बात नही ? मैं तो पहले नरवस हो गई थी। अब काफी स्थिरता अनुभव करती हूं। वैसे घबरा भी नही, क्योंकि मुझे ही सब कुछ करना पड़ेगा। अगर मां के इलाज मे कोई कमी रही तो मैं अपने आपको कभी क्षमा नहीं कर सकूंगी।"

"आप कुछ चिन्ता न करें, मिस राव ! मेरी बात पर विश्वास करें। मैं कच्चा डाक्टर नही हूं। आपकी मां को किसी कारणवश अल्प समय मे काफी मानसिक आघात पड़ा है। उसी मे यह कमज़ोरी आई है। आज सवेरे जरूर ही नार्मल थी ?"

"आपने ठीक पकड़ा। जब मैं कालेज जा रही थी तब तो वह स्वाभाविक अवस्था मे थी। ये पार्ट टाइम पढ़ाती है। पहले फुल टाइम पढ़ाती थी। पेरिस से पढ़कर आने के बाद मैं अधिक काम करने नही देती हूं। आज छुट्टी थी। बोलीं, घर मे रहूंगी। जाड़े के दिन हैं, बरामदे मे बैठकर धूप सेकूंगी। और लौटकर आने के बाद इस अवस्था मे देखती हूं।"

नील दत्तचित्त होकर सुन रहा था और सोच रहा था कहीं किसी को खबर देने को न कह बैठे। डर की कोई बात नही। रात को कुछ हलका

रुंधे गले से रिण बोली—"यह क्या डॉ० साहब, मां तो सो गई।"

"हां, जरूर सोएंगी। इंजेक्शन मे ताकत और नर्वसूदिंग दवाई है। इसीलिए अभी कुछ देर तक सोएंगी। आपकी मा ने तो आपसे खाने के लिए कहा। मेरी बात पर विश्वास कीजिए और चैन से खाइए।"

अब नीलकंठ की ओर देखकर अचानक उसे सुधि आई, इसे तो शायद कहीं देखा है। सही-सही याद नहीं कर पा रही थी, पर काफी पहचाना-सा लगता था।

"सचमुच, आपकी बात से मुझे तसल्ली हो रही है। मालूम है डॉ० चटर्जी, मा के सिवा मेरा और कोई नहीं है।"

इस बात का कोई जवाब न देकर वे बोले, "आपकी मा तो अभी आध घंटा से ज्यादा सोएंगी। मुझे भी काफी भूख लगी है। अभी तुरंत अस्पताल से खाने के लिए दोस्त के घर आया था। चाय का कप होंठों पर लगाने के पहले ही आप आंधी की तरह घुसी। बाकी तो आप जानती ही हैं।"

"मैं अभी चाय बनाकर लाती हूं। इसके अलावा कालेज से लौटते वक्त साथ में रसगुल्ला और समोसा ले आई हूं। वही ले आती हूं।"

"आप कालेज में पढ़ती है?"

मन में निश्चिन्तता आ जाने के कारण अब उसमें स्वभाविक बातें करने का तरीका आ गया।

"इतनी बूढ़ी लड़की क्या कालेज मे पढ़ती है? क्या कहते हैं? मैं पढ़ाती हूं।"

"अच्छा! आप कालेज में पढाती हैं? देखकर तो ऐसा बिलकुल नहीं लगता।"

"क्यों? देखने में-मूरख-सूरख लगती हूं न? इसीलिए केवल बातें ही किए जा रही हूं। जाऊं, पहले चाय बनाकर ले आऊं। मगर⋯"

"फिर अगर-मगर क्यो?"

"अर्थात्, मा के नजदीक कौन रहेगा?"

"क्यो? मैं तो हूं। कोई डर नहीं। मेरी मा के बीमार पड़ने पर तो मैं ही रहता हूं?"

"आपकी मां हैं?"

"हां।"

बिना कुछ बोले रिण रसोई घर मे चली गई। नीलकठ बैठा सोच रहा था—केवल मां और बेटी रहती हैं! आजकल ऐसा प्राय: ही देखा जाता है। एक संदेह मन मे हुआ। लगता है इनके तीनों कुलों में कोई नही है। अतएव ऐसी अवस्था में इन लोगों को छोड़कर उसका चला जाना उचित नही होगा।

उसके घर मे नौकर के सिवा कोई नही है। और बगल के मकान का फोन नम्बर नौकर को दे आया है ताकि कोई अरजेंट कॉल आए तो बता दें। कल मोटर के अचानक खराब हो जाने से काफी असुविधा में फंस गया था। आगामी कल दे जाने की बात है।

सामने देखा, लडकी हाथ में ट्रे लिए आ गई है। फिर से वह विषण्ण दीख रही है।

चाय का कप और खाने की तश्तरी आगे बढ़ाकर तथा स्वयं कप लेती हुई वह बोली—"अच्छा डॉ॰ चटर्जी, सच कह रहे है, कि भय की कोई बात नहीं ? मैं तो पहले नरवस हो गई थी। अब काफी स्थिरता अनुभव करती हूं। वैसे चलेगा भी नहीं, क्योंकि मुझे ही सब कुछ करना पड़ेगा। अगर मां के इलाज में कोई कमी रही तो मैं अपने आपको कभी क्षमा नही कर सकूंगी।"

"आप कुछ चिन्ता न करें, मिस राव ! मेरी बात पर विश्वास करें। मैं कच्चा डाक्टर नही हूं। आपकी मा को किसी कारणवश अल्प समय मे काफी मानसिक आघात पड़ा है। उसी से यह कमजोरी आई है। आज सवेरे ज़रूर ही नार्मल थी ?"

"आपने ठीक पकड़ा। जब मैं कालेज जा रही थी तब तो वह स्वाभाविक अवस्था मे थी। ये पार्ट टाइम पढाती है। पहले फुल टाइम पढाती थी। पेरिस से पढ़कर आने के बाद मैं अधिक काम करने नही देती हूं। आज छुट्टी थी। बोली, घर मे रहूंगी। जाड़े के दिन हैं, बरामदे मे बैठकर धूप सेकूंगी। और लौटकर आने के बाद इस अवस्था में देखती हूं।"

नील दत्तचित्त होकर सुन रहा था और सोच रहा था कही किसी को खबर देने को न कह बैठे। डर की कोई बात नही। रात को कुछ हलका

भोजन ही पर्याप्त होगा। सवेरे से स्वाभाविक अवस्था में आ जाएंगी—यही उसकी धारणा थी।

फिर भी यह लड़की अकेली इस अवस्था में रहे ऐसा नहीं हो सकता। वह स्वयं रह सकता था। पर यह उचित न होगा।

मन-ही-मन उसने तय कर लिया कि रात्रि के शेष कुछ घंटे वह अपने दोस्त के घर बिता देगा। आधी रात तक यहीं रहेगा।

"इतना क्या सोच रहे हैं, डॉ० चटर्जी ?"

"कुछ नहीं। सोच रहा था आपकी मां को रात में थोड़ा-सा हल्का भोजन देने से अच्छा रहता। आपके अपने किसी आदमी को खबर देने से अच्छा होता। हां, अगर कोई कलकत्ता में हों तो।"

"हूं, आप ठीक कहते है। मेरी बुद्धि भी भ्रष्ट हो गई है। मैं अपनी सहेली संगीता को अभी तुरंत फोन करती हूं। उसके मां-बाप मेरे अपने मौसा-मौसी की तरह हैं। मां को छोटी बहन की तरह स्नेह करते हैं।"

"तब तो अच्छा ही रहेगा। अच्छा हो उन्हें ही कह दें आप दोनों के लिए भी कुछ खाने को ले आएंगे।"

"आपको भी तो यहां काफी रात तक रहना पड़ेगा। प्लीज, कहिए रहेंगे।"

"अच्छा, ठीक है। आप लोगों को तसल्ली देकर ही जाऊंगा।"

"फिर आपके लिए भी कुछ खाना लाने के लिए मौसी को कह दूं ? देखूं, अगर टेलीफोन मेहरबानी करे।"

सत्रह

सौभाग्य से टेलीफोन चालू था। जल्दी ही रिंग करने पर मि० चौधरी मिल गए।

"मौसाजी, मां अचानक बेहोश हो गई थीं। मेरे कॉलेज से वापस आने पर डॉ० चटर्जी मिल गए। आते ही उन्होंने एक इंजेक्शन दिया।"

"कहती क्या हो ? अब तक कोई खबर नहीं दी ! अब कैसी हैं ?"

"होश में आ गई हैं। एक कप ओवलटिन पीकर अभी सो रही हैं।"

"डॉ० चटर्जी को फोन दो।"

वह दौड़कर डॉ० चटर्जी को बुला ले गई।

"आपके साथ मौसा बातचीत करना चाहते है।"

"ठीक है। मैं बातचीत करता हूं।"

"डॉ० चटर्जी, अमृता कैसी है? आप जैसे नामी डॉक्टर रिण के बुलाने पर आए हैं, इसके लिए हम लोग काफी एहसानमन्द है।"

"नहीं, ऐसी बात नही। बगल के मकान में मैं दोस्त के घर चाय पीने आया था। मिस राव के बुलाते ही दौड़ा आया।···नही, नही, डरने की कोई बात नही। मुझे आशा है कल सवेरे से ही नार्मल हो जाएंगी। हां, थोड़ी कमजोरी जरूर रहेगी।"

"खैर, बचाया आपने। वह मेरी बहन की तरह है। पहले सुनते ही मेरे हाथ-पैर ठंडे हो गये थे। आप जैसे डॉक्टर का ही भरोसा है। मेहरबानी करके आप जाएंगे नहीं।"

"ठीक है। मिस राव आपसे बातचीत करेंगी।"

"मौसा जी, आपने तो सब सुना। अब आप एक काम करें। आप और संगीता चले आएं और मौसी से कह दें कि वह मां के लिए हलका भोजन, सूप आदि लेकर आए। और हां, आप लोगो के लिए भी रात का खाना अन्दाज से ले आएगी। दोनों को तो यहीं रहना पड़ेगा। इसके अलावा मेरे और डॉक्टर चटर्जी के लिए भी रात का भोजन लेकर पीछे अनुज के साथ आ जाएगी।"

"ठीक है। हम अभी आ रहे हैं। हां, डॉक्टर साहब से पूछो अगर कोई विशेष दवाई लानी पड़ी तो?"

"रुकिए।"

आकर रिण ने बताया—"नही, अभी कुछ नही लाना है।" और यह कहकर फोन रख दिया।

"आपके मौसा आप लोगों से काफी स्नेह करते है। मुझे ऐसा ही लगा।"

"सचमुच! अपने लोग भी ऐसा स्नेह नही करते। सर्वोपरि एक

व्यक्ति ही घनाता है, अन्यथा आप सरीखा डॉक्टर तुरन्त पा जाना क्या आसान बात है। अब कहा जाय तो इस जहान में हमारा कोई नहीं है।"

रिण का गला भर आया।

"यह बात रहने दें।" डॉक्टर चटर्जी बोले, "आपकी मां तो ठीक ही हैं।"

"नहीं, सुनिए न, जाने क्यों अभी अपनी सारी बातें बताकर दिल हलका कर लेने की इच्छा कर रही है।"

"अच्छी बात है। यदि आपको अच्छा लगे तो सुनाइए।"

"मेरी मां अकेली पुत्री हैं। अपने पिता की बात उन्हें मालूम नहीं। मेरी नानी ने ही उनका लालन-पालन किया। जब वे बी० ए० में पढ़ती थीं तभी मातृहीना हो गईं। जब वे बी० ए० में थीं तब मेरे पिता के साथ उनकी शादी हुई। वे विश्वविद्यालय के प्रोफेसर थे। मां भिन्न जाति की हैं। इसलिए मेरे दादा ने पिता को त्याग दिया।"

"ओह! कैसा अन्याय है यह।"

"और भी सुनें। जब मैं काफी छोटी थी तभी मेरे पिताजी इस दुनिया से चल बसे। मां मद्रास में टिक नहीं पाईं। मां, पिताजी के दोस्त और उनकी पत्नी के साथ कलकत्ता चली आईं। तभी से हम लोग कलकत्ता में ही हैं। बचपन से उन्हीं मौसी को मां समझती थी। उन्होंने हमारा काफी उपकार किया है, हमें काफी प्रेम दिया है।'

सचमुच, इन मुसीबतों में भी स्नेह देने वाले लोग आपकी बगल में आकर खड़े हुए। वे लोग अभी कहां हैं?"

"विलायत में हैं। बड़ी-सी नौकरी करते हैं। कलकत्ता में मकान खरीद चुके हैं। आगामी वर्ष हमेशा के लिए चले आएंगे।"

"अगर कुछ बुरा न मानें तो जो अभी-अभी आ रहे हैं वे···?

"वे मि० चौधरी हैं। उनकी लड़की के साथ मैं पढ़ती थी। वे लोग भी हम दोनों को अपने परिवार के लोगों की तरह प्यार करते हैं।"

"मि० चौधरी की व्यग्रता से यह मैं पहले ही समझ गया था।"

"मां जरा तो देखिए, तभी से बके जा रही हूं।" रिण ने धीरे से अपना हाथ मां के कपाल पर रखा।

"मा तो अभी भी सो रही हैं, यह खराबी का लक्षण तो नहीं ?"

"कहा न, आप मूठ-मूठ में परेशान हो रही हैं। न हो, आप जाइए, प्लेटों को धो डालिए। मैं तो हूं ही।"

बिना कुछ बोले कप और डिस ट्रे में रखकर रिण चली गई।

नील बैठे-बैठे सोच रहा था, सचमुच दुनिया में चारों ओर कितनी सारी घटनाएं घट रही हैं। हम जानते ही कितना हैं, अथवा जाना ही कितना है, अथवा जान ही कितना पाते हैं ?

सोई हुई अमृता के चेहरे को देखकर उसे बड़ी दया आई। पिता को तो पहले ही खो चुकी थीं। मां भी चली गईं। बाद में पति भी गए। हाय रे जीवन !

अपनी बात याद आई। वह ऐश्याली में बढ़ा। पिता जी अच्छी नौकरी करते थे। अब अवकाश ग्रहण किया है। माता-पिता दोनों ही मौजूद हैं। रुपये की चिन्ता किसी दिन नहीं करनी पड़ी। माता-पिता की स्नेह छाया में पला है।

विलायत का पढ़ा वह एक बड़ा डॉक्टर है। छोटा भाई वकालत पास कर खासा प्रैक्टिस कर रहा है। पहले ही शादी कर ली है। वह स्वयं शादी नहीं करेगा, यह बात घर वालों को बता दी है। परिवार में सुख और शान्ति है।

बदकिस्मती कभी आई नहीं ? आई है पर कट जाने लायक। कट भी गई है।

लेकिन इनकी ?

"मौसा आ गए। मैं नीचे जाऊं, अन्यथा घंटी की आवाज से मां की नींद टूट जाएगी।" डॉक्टर चटर्जी ने केवल सिर हिलाया। कुछ पल बाद ही मि० चौधरी अपनी पुत्री को लिए रिण के साथ हौले कदमों से कमरे में घुसे। दोनों के चेहरे पर चिन्ता की छाप मौजूद पाई नील ने।

"तू, तू मौसी के निकट बैठ। हम बगल के सोने के कमरे में जाकर

आलोचना करते हैं ?"

तीनों बगल के कमरे में जा बैठे। रिण ने सविस्तार सब कुछ बताया। डॉक्टर चटर्जी को भी जो कुछ कहना था, कह सुनाया।

"जब आप कहते हैं अमृता के लिए चिन्ता का कोई कारण नहीं तो हम लोग निश्चिन्त हुए। आप जैसे नामी डॉक्टर अगर कुछ बुरा न माने तो एक बात कहूं। आपका नाम सुनकर सोचा था आप जरूर ही अधेड़ उम्र के होंगे। मगर आश्चर्य है, आप तो बिल्कुल कमसिन है। इस छोटी उम्र में इतना नाम कर गए ?"

हंसते हुए डॉ० चटर्जी ने कहा —"बच्चा तो मैं एकदम नहीं हूं।"

"मेरी इच्छा है चंगा हो जाने पर अमृता पूरी जांच कराए। चाहे जितनी भी चिन्ता क्यों न रहे, पर अचानक इस प्रकार हो जाना उचित नहीं। उम्र भी उतनी अधिक नहीं है।"

"यह बात मैंने पहले ही सोच ली है।"

बगल के कमरे से आकर संगीता बोली—"मौसी उठ गई हैं। पिता जी ! वे आपके साथ बातें करेंगी।"

"नहीं, नहीं, बातचीत नहीं होगी। अगर। खाना दिया जाय तो कैसा रहेगा, डॉक्टर साहब ?"

"थोड़ी चाय बनाकर ले आइए। और कुछ ड्राई टोस्ट भी।"

"ठीक है। हम दोनों सबके लिए बना लाती हैं।" कहती हुई दोनों सहेलियां कमरे से निकल गई।

मि० चौधरी के साथ डॉ० चटर्जी भी अमृता के कमरे में आए। डॉ० चटर्जी ने देखा रोगिणी का चेहरा काफी स्वाभाविक दीख पड़ता है। उनके मन को पूरी तसल्ली मिली। सामयिक उत्तेजना के चलते ही यह आकस्मिक घटना घटी थी। उसका निदान ठीक निकला। मन में थोड़ी तृप्ति हुई; पर यह भी तय कर लिया कि स्वस्थ हो जाने पर भली-भांति परीक्षा अवश्य करनी पड़ेगी।

"क्या हाल बना रखा है, अमृता ? सातों कांड रामायण की चिन्ता करने बैठी थी क्या तुम बहुत अधिक चिन्ता करती हो, अन्यथा जाते समय रिण तो स्वस्थ मां को रख गई थी। किस्मत से डॉ० चटर्जी को नजदीक

मे पा गई। तुमसे कितनी बार कहा इतना परिश्रम न करो, इतनी चिन्ता न करो।" मि० चौधरी रुके।

अमृता सोच रही थी, सचमुच का रामायण तो है ही। उसके जीवन का रामायण। लोभ में पड़कर वह अपने आनन्द और सुख के दिनों को मुट्ठी मे पकड़ना चाहती थी। उसी का अचानक बुरा अनुभव हुआ। सीमा के बाहर अच्छी चीजें भी अच्छा फल नही देती। अधिक लोभ मे पड़ गई थी। उसी से यह हाल हुआ।

एक स्मित हंसी फूट पड़ी अमृता के चेहरे पर—"दिन भर समान भाव से बैठी तरह-तरह की बातें सोचती रही हूँ। उसकी मात्रा शायद अधिक हो गई। सबको काफी परेशानी मे डाल दिया।"

अमृता देवी की सहज और स्वाभाविक बाते सुनकर मि० चौधरी के मन का मेघ छंट गया।

बोले—"अच्छा ही किया। अब ऐसा लगता है तुम अपने लिए किसी भी दिन किसी को न कुछ सोचने देती हो और न कुछ करने ही देती हो।"

"इस बार मौसी जब्त हुई। हम लोग जो कुछ कहे वही करना पड़ेगा" पीछे से संगीता अचानक बोल पड़ी। बोली, "इसके सिवा हम लोगों को कितना अधिक लाभ हुआ कि डॉ० चटर्जी से जान-पहचान हो गई। अब चूंकि मौसी भली चंगी हैं, अत. सबकी सम्मति मिले तो मैं एक बात कहना चाहती हूं।"

"ठीक है, सुनाओ ? मगर यह भूमिका क्यों ?" रिण बोली।

डॉक्टर चटर्जी को मैं बहुत पहले देख चुकी हू। रिण कैसी है ? उसे कुछ याद है ? ट्रैफिक कन्ट्रोल से आपने रिण को छुट्टी दी थी।"

मीठी हसी हंसते हुए नील बोला "आपकी यह सहेली पहचान नही सकी।"

"नही, ऐसी बात नहीं। मुझे भी लगता था मानो कहीं देखा है। सिर इतना उलझ गया था कि सही याद नहीं कर पा रही थी।"

अमृता इनकी बातें न तो समझ पा रही थी और न समझने की कोशिश ही कर रही थी। उसका शारीरिक अवसाद तब भी नहीं मिटा था और सिवा इसके उसका मन उस समय भी एक स्वर्गीय आनन्द में सराबोर था।

"[illegible] कर रही हो, कुछ समझ में नही आता।" [illegible]

[illegible] बाद में सब बताऊंगी। यह घंटी बजी। [illegible] मां और अनुज आए होंगे। तब तक मै [illegible]"

"[illegible] सकती हूं?"

"[illegible] वे ऐसा कर सकें।"

[illegible] इसकी स्वीकृति उसने सिर हिलाकर दी। सू[illegible] कमरे से रूई तकिया ले आई। डा० चटर्जी और सू[illegible] सावधानी से अमृता को उठाकर बिठाया।

"[illegible] तुम धीरे-धीरे अच्छी लडकी की तरह पीयो।"

[illegible] में दो टिफिन केरियर लिए नीचे से ऊपर आया। उसके पीछे [illegible] थी और सबसे पीछे रिण। रिण से सब कुछ [illegible] सुन लिया है। अतएव अति स्वाभाविक रूप से ही उन्होंने [illegible]

"[illegible] तूने अच्छा ही किया बहन, अन्यथा [illegible] आंखें उठाकर भी नही देखता। लड़किया तो [illegible] है। इसी तरह कुछ होने से ये लोग थोड़ा-बहुत हिलते-[illegible]"

ही देखनी है।

"इतनी मेहनत से हमने चाय और टोस्ट बनाया केवल ठंडा होने के लिए ?"

चाय ढालकर सबसे पहले डॉ० चटर्जी को दिया।

"सभी मेरी चारपाई पर बैठो और मौसाजी कुर्सी पर बैठेंगे।

"मि० चटर्जी हमारी इस बकवास से आपकी रोगिणी को कोई नुकसान तो नहीं होगा ?"

"नहीं, मि० चौधरी ! मैंने जो सोचा था वही हुआ है। अब वे पूर्ण स्वस्थ है। हां, दो-चार दिनों तक कमजोरी रहेगी। कई एक दिन लेटकर बिताने से अच्छा होगा।"

"अमृता वही करेगी, हम नजर रखेंगे। हां, आपको रोज एक बार देख जाना पड़ेगा। उसके बाद हम उसे आपके चेम्बर में ले जाएंगे।"

"अच्छी बात है मिसेज चौधरी ! मैं आ जाया करूंगा।"

अमृता खा-पीकर सो गई। सभी उसे घेरकर बैठे हैं—यह उसे बेहद भा रहा था। थोड़ी देर पहले कृष्ण घेरे हुए था।

अब वाणी बहन और भैया की बात याद आती है। आगामी साल वे लोग हमेशा के लिए लौट आएंगे। बड़ा मजा आएगा।

अमृता ने डा० की ओर निहारा। नामी डाक्टर होते हुए भी बहुत भला है। शायद दिल का भी भला है। अगर ऐसा नहीं होता तो दूसरे डाक्टरों की तरह देखकर चला जाता। औरों की तरह नहीं है। तभी तो रिण की अवस्था समझ सका। ऐसी अवस्था में रिण को अकेला छोड़कर जा नहीं सका।

जीवन में अनेक डाक्टरों को देख चुकी है। मगर यह तो अलग सांचे में गढ़ा है। इधर जमकर बैठ गए। सब के मन से दुश्चिन्ता का भार दूर हो गया है। डा० चटर्जी से कहां और किस तरह मुलाकात हुई थी इस विषय में संगीता ने सबको विस्तार से बताया।

"मैं सोच भी नहीं सकी थी कि आप डाक्टर होंगे।" रिण ने बताया।

"फिर क्या सोचा था ?"

"साधारण पोशाक में कोई मिलिटरी अफसर।"

"क्या बेसिर-पैर की बातें कर रही हो, कुछ समझ में नहीं आता।" मि० चौधरी बोले।

"सिर भी है और पैर भी। बाद में सब बताऊंगी। यह घंटी बजी! रिण जरा देखना तो। जरूर ही मां और अनुज आए होंगे। तब तक मैं सब के लिए चाय ढालती हूं।"

"मौसी को टिकाकर बिठा सकती हूं?"

"कोई आपत्ति नहीं, अगर वे ऐसा कर सकें।"

अमृता ऐसा कर सकेगी इसकी स्वीकृति उसने सिर हिलाकर दी। रू दौड़ती हुई बगल के कमरे से कई तकिया ले आई। डा० चटर्जी और रू दोनों ने मिलकर बड़ी सावधानी से अमृता को उठाकर बिठाया।

"मैं कप पकड़ती हूं। तुम धीरे-धीरे अच्छी लड़की की तरह पीयो।"

तब तक अनुज हाथ में दो टिफिन केरियर लिए नीचे से ऊपर आया। उसके पीछे श्रीमती चौधरी थी और सबसे पीछे रिण। रिण से सब कुछ विस्तारपूर्वक सुन लिया है। अतएव अति स्वाभाविक रूप से ही उन्होंने बातचीत शुरू की।

"सरू को इस प्रकार चौंकाकर तूने अच्छा ही किया बहन, अन्यथा हम लोगों की ओर कोई आंखें उठाकर भी नहीं देखता। लड़कियां तो परिवार का कूड़ा है। इसी तरह कुछ होने से ये लोग थोड़ा-बहुत हिलते-डुलते हैं।"

"यह क्या? तुम्हारी तबीयत खराब होने पर मैं कुछ नहीं करता?" मि० चौधरी ने अधीर होकर पूछा।

"अगर इतना ही ख्याल रखते हो तो कभी यह भी कहा है—अमृता छुट्टी ले लो। बेकार की बातें।" इन दोनों की बातचीत अमृता को बड़ी अच्छी लग रही थी। इसी से इन दोनों के मन का मेल प्रगट होता था।

उसकी मा को लेकर सभी इतना हट्टगोल कर रहे हैं। यह सब रिण को बड़ा सुहा रहा था। लगता था आम्मी काफी छोटी है और सभी मिलकर उसे प्यार कर रहे है।

उसकी भी इच्छा होती मा को चिपकाकर दुलारे। पर अचानक ख्याल आया वह तो अभी गृहस्वामिनी है। सबकी सुविधा-असुविधा उसे

ही देखनी है।

"इतनी मेहनत से हमने चाय और टोस्ट बनाया केवल ठंडा होने के लिए ?"

चाय डालकर सबसे पहले डॉ० चटर्जी को दिया।

"सभी मेरी चारपाई पर बैठो और मौसाजी कुर्सी पर बैठेंगे।

"मि० चटर्जी हमारी इस बकवास से आपकी रोगिणी को कोई नुकसान तो नहीं होगा ?"

"नहीं, मि० चौधरी ! मैंने जो सोचा था वही हुआ है। अब वे पूर्ण स्वस्थ हैं। हाँ, दो-चार दिनों तक कमजोरी रहेगी। कई एक दिन लेटकर बिताने से अच्छा होगा।"

"अमृता यही करेगी, हम नजर रखेंगे। हां, आपको रोज एक बार देख जाना पड़ेगा। उसके बाद हम उसे आपके चेम्बर में ले जाएंगे।"

"अच्छी बात है मिसेज चौधरी ! मैं आ जाया करूंगा।"

अमृता खा-पीकर सो गई। सभी उसे घेरकर बैठे हैं—यह उसे बेहद भा रहा था। थोड़ी देर पहले कृष्ण घेरे हुए था।

अब वाणी बहन और भैया की बात याद आती है। आगामी साल वे लोग हमेशा के लिए लौट आएंगे। बड़ा मजा आएगा।

अमृता ने डा० की ओर निहारा। नामी डाक्टर होते हुए भी बहुत भला है। शायद दिल का भी भला है। अगर ऐसा नहीं होता तो दूसरे डाक्टरों की तरह देखकर चला जाता। औरों की तरह नहीं है। तभी तो रिण की अवस्था समझ सका। ऐसी अवस्था में रिण को अकेला छोड़कर जा नहीं सका।

जीवन में अनेक डाक्टरों को देख चुकी है। मगर यह तो अलग सांचे में गढ़ा है। इधर जमकर बैठ गए। सब के मन से दुश्चिन्ता का भार दूर हो गया है। डा० चटर्जी से कहां और किस तरह मुलाकात हुई थी इस विषय में संगीता ने सबको विस्तार से बताया।

"मैं सोच भी नहीं सकी थी कि आप डाक्टर होंगे।" रिण ने बताया।

"फिर क्या सोचा था ?"

"साधारण पोशाक में कोई मिलिटरी अफसर।"

"सच ?"

"रिण ने क्या सोचा था ?" संगीता ने प्रश्न किया।

"क्या सोचा था ? क्या सोचा था ? रुकिए—बिजली की चमक।"

"कैसी पुरानी और भद्दी बातें कही चटर्जी ने।" कहते हुए रिण ने मुंह बनाया। फिर बोली, "बिजली का 'ब' भी नहीं है। मैं तो उज्ज्वल श्याम बरन की हूं। हां, बादल की छटा कह सकते थे।"

"सच बताऊं ? जो कुछ कहा, वैसा बिल्कुल नहीं सोचा था। देखकर काफी सुन्दर लगा था। सोचा, अगर अपने देश की लड़कियां इस तेजस्विता का आधा भी पा लें तो देश का कल्याण हो जाए। यहां तो हमेशा गूंथ-गांथ कर बात करने और टेढ़ी-मेढ़ी चाल चलने की आदत है। हमेशा सोचती हैं, हमें निहारो।"

अपनी इस वाचालता के लिए डॉ० चटर्जी को स्वयं पर हतप्रभ होना पड़ा। थोड़ी देर पहले ही तो उन लोगों से जान-पहचान हुई है।

"आपने ठीक कहा। पहले की लड़कियां लड़कियां थीं, केवल लड़कियां, शर्मीली और कोमल। और आजकल की—न यहां की, न वहां की, केवल खिचड़ी।"

"खूबे। अब तो पिताजी ने भी मुंह खोल दिया।"

"लेकिन मैं उनसे सहमत हूं।" नीलकंठ बोला।

इसी बीच डाक्टर साहब बोले, "मैं एक प्रिसक्रिप्सन लिख देता हूं। इसे ले आने से अच्छा होता। भोजन के बाद इसे खाकर सो पड़ेंगी और सवेरे भी खाना खाने के बाद एक बार खा लेंगी। सवेरे अस्पताल जाने के पहले देखता जाऊंगा।"

"ड्राइवर से अभी मंगवाता हूं।" कहते हुए अनुज नीचे चला गया।

थोड़ी देर बाद अमृता को खाना-खिलाकर उन लोगों ने भोजन कर लिया।

दूसरे दिन सवेरे आने की बात कहकर डॉ० चटर्जी उठे।

"मैं अनुज के साथ यहीं रहूंगी, ऐसी ही व्यवस्था कर आई हूं। तुम संगीता के साथ घर चले जाओ। रास्ते में डॉ० चटर्जी को उतारते जाना। कल सवेरे हमारी गाड़ी ही आपको अस्पताल तक छोड़ आएगी। रास्ते में

इसी ओर से होकर जाइएगा।" मिसेज चौधरी ने कहा।

"मेरे लिए तकलीफ क्यों उठाएंगे।"

"नहीं-नहीं, इसमें तकलीफ क्या है ?" मि० चौधरी बोले—"आपके निकट हम काफी एहसान मन्द हैं।"

सवेरे खाना ले आने की बात संगीता को मा ने बताई। तीनों जने गाड़ी में जा बैठे। तब तक सबकी शारीरिक और मानसिक मनहूसियत चली गई थी।"

"जरूरत पड़ने पर मुझे बुला भेजना।" कहते हुए मां-बेटे बगल के कमरे में सोने चले गए।

"तुम चैन से सोओ," रिण के सिर पर प्यार से हाथ चलाते हुए मौसी ने कहा।

"ठीक है, मैं सो जाती हूं। मां तो सो रही हैं।"

पर रात को रिण की आंखों में नींद कहां ? उसने एक-एक कर तीनों चित्रों के सामने सिर झुकाया। अमृता प्रत्येक दिन तीनों चित्रों के सामने खड़ी होकर प्रार्थना करती है।

रिण भी यदाकदा कर लेती है। इन तीनों में से दो को उसने कभी देखा भी नहीं। मां से सुनकर उन्हें पहचानती है। प्यार और श्रद्धा करना सीखा था।

उसे पिताजी याद आते। छोटी-मोटी कुछ घटनाएं भी उसे याद हैं। पिता ने उसे प्यार किया था, उसके साथ खेले थे। उसके बाद उसने पिता के बारे में मां से उनकी जीवन गाथाएं इस प्रकार सुनी थीं कि वह सोच भी नहीं पाती कि पिता को वह खो चुकी है। उसे लगता मानो हाल में उसके चारों ओर मौजूद थे।

उसे लगा मानो मां ने बुलाया। रिण अमृता के चेहरे पर झुक गई। नहीं, चैन से सो रही है। नींद मे ही बोलीं, "रिण…रिण।"

अठारह

धीरे-धीरे रिण मां के शरीर को हाथ से सहलाने लगी। प्रायः रात-भर जगी

रहने के बाद भोर को मौसी की पुकार से रिण की नींद टूट गई। मां के बिछावन पर सिर टिकाए वह सो गई थी।

आंखें खोलकर देखा, मां उसके सिर पर हाथ सहला रही है और मौसी हाथ में ओवलटीन का कप लिए खड़ी है।

"यह खासी पगली है। साफ जाहिर है, रात भर जगी है। अब उठो, अन्यथा तुम्हारी मां को खिला नहीं पा रही हूं।"

"मुसीबत है" कहती हुई रिण सरकी और मां को टिकाकर बिठाया।

"जाओ। हाथ-मुंह धोकर केश संवार लो। थोड़ी देर बाद ही डॉ॰ चटर्जी और वे लोग आ धमकेंगे।"

जब रिण तैयार होकर आई तो देखा कि मौसी रसोई घर में रोटी-टोस्ट बनाने में व्यस्त हैं।

"तुम हटो, मौसी! मैं सबके लिए चाय-टोस्ट तैयार कर ले आती हूं। तुम जाकर हाथ-मुंह धो लो।"

चाय पीकर जब सभी अमृता देवी को घेरकर बैठे बातचीत कर रहे थे तभी संगीता दल-बल सहित हाजिर हुई।

पूर्णांक के साथ पास की घोषणा करते हुए डॉ॰ ने एलान किया, "हम लोगों की तरह ही अब अमृता देवी ठीक हो चुकी हैं।"

"क्या कहा आपने? नहीं, मौसी, तुम डाक्टरों पर विश्वास मत करो। बढ़ा-चढ़ा कर कहने की आदत उन लोगों का स्वभाव होता है। अतएव दो कहने से एक पर विश्वास करना।"

अब तक संगीता डॉ॰ चटर्जी से खुल गई थी। बैरिस्टर साहब नहीं आए थे। सवेरे से ही फिक्र लेकर बैठे थे। फोन से खबर ले ली थी कि अमृता ठीक है। डॉ॰ चटर्जी जल्दी उठे। अस्पताल जाने की जल्दबाजी थी।

"जो दवाई लिख दी है वही चलेगी। साथ-साथ पूर्ण विश्राम। कोई चिन्ता नहीं। स्वाभाविक भोजन। पर पुष्टिकर और हल्का हो तो अच्छा।"

"ठीक है। वही होगा। चलिए आपको अस्पताल पहुचाते हुए हम और अनुज घर चले जाएंगे। मिसेज चौधरी अनुज के साथ घर से निकलती हुई बोली, "तुम लोगों के लिए खाना भेज दूंगी।"

"ठीक है, मौसी ! इस वक्त तुम मत आना। शाम को तीनों एक साथ ही आना।"

"अच्छी बात है। रिण, तुम जल्दी खा-पीकर सो जाना। तू अमृता के नजदीक बैठेगी।

"बैठने की कोई जरूरत है ? डॉ० साहब के विचार से तो मैं ठीक ही हूं।" यही पहली बार अमृता बोली थी। उसे यों ही लेटे रहना अच्छा नहीं लगता था। वह न तो कभी लेटी थी, न इसकी जरूरत ही पड़ी थी। इसी-लिए अस्वस्थ-सी बो— कर रही थी।

बीमार कभी प ड़ी नहीं, ऐसी बात नहीं। पर अधिक नहीं। बुखार रहने पर भी सब करती थी। पेट दर्द होने पर भी वही करती। पर ऐसी परिस्थिति उसके लिए सर्वथा भिन्न थी।

"हमें भी थोड़ी-सी चिन्ता तुम अपने लिए करने दो," कहकर रिण ने चुप्पी साध ली।

रात-जगी अपनी लड़की के चेहरे को देखकर अमृता देवी चुप रहीं। दोपहर की गाढ़ी नींद के बाद जब दोनों मां-बेटी जगीं तो शाम हो चुकी थी। मि० और मिसेज चौधरी के आने का समय हो गया था।

इसी प्रकार तीन-चार दिनों के बाद अमृता देवी पूर्ण स्वस्थ हो गईं। दैनिक जीवन की गाड़ी का पहिया फिर से घूमने लगा।

हां, बीच में एक भारी परिवर्तन हो गया। डॉ० नीलकंठ इस परिवार के एक खास मित्र बन गए। अवसर मिलते ही यहां चले आते। मां-बेटी दोनों ही उसकी बाट जोहतीं। लगता था इतने दिनों की दरार अब भरती जा रही है।

इस दुनिया के विधाता ने ही ऐसा नियम बना दिया है कि लड़के-लड़कियां साथ चलेंगे और चलाएंगे। दोनों ही जरूरी हैं।

कृष्ण के परलोक सिधारने के तीन वर्ष के बीच ही रनेन और बाणी विलायत गए। तब से बिना पुरुष ही इनका चलता था। अभ्यस्त सी हो गई थी। कभी सोचा भी नहीं कि इसमें तबदीली की आवश्यकता है।

परन्तु नील के अचानक सान्निध्य से अमृता देवी को अनजाने ही इसका आभास मिला। नील काफी अपना जैसा हो गया है। कभी सोचतीं

क्या यह ठीक हो रहा है? दूर का पराया लड़का, अचानक खिसक जाएगा। अपने ही चले गए दूर, काफी दूर। एक बार फिर कर भी नहीं देखा।

कमरे में घुसते ही नील ने अमृता को दूसरी तरह पाया। लगा, यद्यपि वे सामने ही बैठी हैं, फिर भी काफी दूर चली गई हैं।

"आपको हो क्या गया ? मुझे बताइए।"

"कुछ भी नहीं। कभी-कभी सोचती हूं इतनी माया बढ़ाना उचित नहीं है, अन्यथा दुबारा धक्का खाना पड़ेगा।"

"मतलब ?"

"तुम पराए हो। दूर चले जाओगे।"

"आपने ऐसा सोचा क्यों ? मैं तो कलकत्ता में ही रहूंगा। यही मेरा कर्मस्थल है। आपका भी। छोड़-छाड़ का तो कोई कारण नहीं।"

एक दिन डॉ० चटर्जी ने कहा—"मुझे नील कहकर ही पुकारें। मेरे सगे-संबंधी मुझे इसी नाम से पुकारते हैं। आप लोगों के लिए भी मैं वही बनना चाहता हूं।"

यह बात उन्हें अच्छी लगी थी। चिल्लाकर रिण को बुलाया और कहा, "आकर सुनो, यह कितनी अच्छी बातें सुना रहा है।"

"क्या हुआ अम्मी ?" केश संवारते हुए रिण ने कमरे में प्रवेश किया।

"अब से यह हम लोगों के लिए नील है, केवल नील। इसके आगे पीछे कुछ नहीं जुड़ेगा।"

अमृता देवी तृप्ति की हंसी, हंसी थी।

"मैं भी उसी नाम से पुकारूंगा। बड़ा अच्छा नाम है. आपका !"

"अच्छी बात है।"

नील कहना चाहता था—मैं "तुम" भी हो सकता हूं····।

मगर वह साहस नहीं कर सका। इसीलिए इस दौरान मौन साथ गया।

यों अमृता देवी ने 'तुम' का सम्बोधन आरम्भ कर दिया था। रोजाना रात का भोजन वे प्रायः एक साथ खाते। एक आध दिन इसमें व्यवधान पड़ता।

अमृता को देखकर उसे अपनी चाची की बात याद आती। नील जब

बच्चा था तभी उसके चाचा परलोक सिधारे थे। थोड़े दिन बाद ही चाची ने भी उसी पथ का अनुसरण किया। बहुत हद तक अमृता देवी की तरह निर्लिप्त थीं। मां से बढ़कर वह चाची को मानता था। यह बहुत पुरानी बात है।

यह सोचकर दंग रह जाता कि दो व्यक्तियों की भाव-भंगिमा चिन्ता-धारा में एक रूपता कैसे हो सकती है। यह भी तकदीर का खेल है, जब दोनों में पारस्परिक कोई संबंध न हो।

इस दुनिया में सब संभव है। यह भी तकदीर का खेल है जिसने नील को अमृता देवी के निकट इतनी आसानी से ला खड़ा किया।

दिन भर के बाद रात को ही डाक्टरों की छुट्टी मिलती है। इसीलिए रात्रि शो में सिनेमा, थियेटर या संगीत सुनने जाने लगे।

अमृता देवी के जीवन में यह नवीन अध्याय आरम्भ हुआ। अब तक उन्होंने यथासंभव अपने आपको इन सबसे अलग रखा था।

रिण अपनी सहेलियों के साथ बाहर जाती। उन्होंने कभी बाधा नहीं डाली। खुद अच्छा नही लगता, अतएव बहुत कम जाती। अब नील के अनुरोध को टाल नही सकती। तीनों के जाने पर अच्छा ही लगता।

इस प्रकार धीरे-धीरे रिण और नील के बीच 'आप' शब्द का व्यवधान दूर हो गया। इधर कुछ महीने बाद ही संगीता के बड़े भैया आएंगे। सभी अंगुलियों पर दिन गिना करते। उसके बाद संगीता की शादी होगी।

परन्तु सब मिट्टी में मिल गया। आदमी सोचता कुछ है, पर होता कुछ और है। कितने ख्याली घोड़े दौड़ाए गए थे। पर काफी दिनों के मन-पुलाव को क्षण भर मे खाक में मिला देने में विधाता को शायद बड़ा मजा मिलता है। कौन उसे आनन्दमय कहता है? किसने उसे यह नाम दिया था?

चौधरी परिवार जब आनन्दोत्सव के बीच था तभी कागज के एक छोटे से टुकड़े ने रंग में भंग डाल दिया।

चौधरी वंश के बड़े लड़के ने, जिसके आने पर संगीता की शादी का दिन निर्भर था, अचानक जताया कि उसने स्वयं वहां एक मेम साहिबा से

शादी कर ली है और उनके लिए अति शीघ्र आना संभव नहीं होगा। हां, मां-बाप के आशीर्वाद और भाई बहन के स्नेह की याचना उसने अवश्य की थी।

मि० और मिसेज चौधरी को जीवन में इस तरह का आघात कभी नहीं लगा था। मां-बाप समय पर ही परलोक सिधारे थे। उनके खोने का गम जागतिक नियम है। अतएव वह दुख, अगर असमय का न हो तो, सहनीय होता है।

अतएव अब दोनों मन मार कर बैठ गए हैं। दोनों के सामने अब पूरा अंधकार था। लड़का इतना बड़ा आघात देगा, यह उन्हें स्वप्न में भी आशा नहीं थी।

अब उम्र हो चुकी है। लड़का बुढ़ापे की लकड़ी का सहारा बनेगा। काफी मदद मिलेगी। बहू आएगी। जिस प्रकार मिसेज चौधरी ने अपनी सास से घर का भार संभाला था, उसी प्रकार वह भी सास के हाथ से घर का भार संभालेगी। पर सब मिट्टी में मिल गया।

जोड़-घटाव में गलती हो गई। दो और दो जोड़कर उन्होंने चार किया था, पर हो गया तीन।

संगीता ने दौड़कर फोन किया—"रिण, मौसी को साथ लेकर जल्दी आ जाओ। मां और पिताजी बड़े बेहाल हैं।"

"क्या कहा? डॉक्टर को बताया है? डॉ० चटर्जी को साथ ले आऊं?"

"नहीं, नहीं। डॉक्टर की कोई जरूरत नहीं। जितनी जल्दी हो सकें तुम दोनों चली आओ। अनुज बोधि को बुलाने गया है।"

"कुछ समझ नहीं सकी।"

उसी समय रिण के कानों में संगीता के रोने और उस ओर फोन रख देने की आवाज आई।

अमृता देवी रसोई घर में व्यस्त थी। आज रात बाहर न जाकर तीनों, अर्थात् नील समेत, घर में खाना खाएंगे, बातचीत करेंगे—यही प्लान था।

कुछ समझ न पाने के कारण रिण चिल्लाई, "अम्मी! तुम अपनी

रसोई छोड़ो। शीघ्र आओ।"

"क्यों, क्या हुआ ? पागल की तरह चिल्लाई क्यों ?" दिल भीतर तक धड़कने लगा।

"मालूम नही क्यों, सू रो रही है। मौसा-मौसी न जाने कैसा कर रहे हैं।" ऐसा कहते समय रिण की आंखें भर आईं।

अमृता देवी ने समझा कि थोड़ी देर पहले जो फोन आया था, शायद उसी से यह खबर आई है।

"इस प्रकार खड़ी रहने से चलेगा ? तुम कमरे बन्द करो, मैं गैस बद कर आती हूं।" थोड़ी देर बाद दोनों संगीता के मकान के दरवाजे के बाहर खड़ी हुईं। रास्ते भर मां-बेटी में कोई बातचीत नही हुई। अब अकस्मात दोनों ने एक असमर्थता-भाव अनुभव किया। न मालूम भीतर क्या देखने को मिले।

अमृता देवी ही आगे बढ़ी। मि० चौधरी आंखें बन्द किए लेटे थे। मिसेज मुंह ढक कर बैठी हैं। संगीता पिता के सिर पर हाथ फेर रही थी। ऐसा लगता था मानो रुलाई जबरदस्ती भीतर अटकाई गई हो।

आवाज सुनकर मि० चौधरी ने आंखें खोली। मुह मे न कोई बात थी और न थे आंखों में आंसू। कुछ घन्टों के बीच ही मानो उम्र काफी बढ़ गई थी। चुस्त और तर्रार बैरिस्टर का कोई विशेष चिह्न उनमें नही मिल रहा था। ऐसा क्या हो सकता है ?

अमृता देवी को तार थमा दिया।

आखें फिराकर रिण को पढ़ने दिया। धीरे-धीरे जाकर मिसेज चौधरी से जा चिपकी—"बहन, मुझे देखते हुए मन को स्थिर करो। मेरे अपने ऐसी जगह चले गए हैं,जहां से फिर वापस नही आ सकते। मेरे जाने पर ही मुलाकात होगी। वही मैं पैर जमा सकी हूं। गुजर कर रही हूं। सब कुछ किया और कर रही हूं। जिस अभाव-अनुभव से आपका दिल पस्त हो रहा है, संभव है भविष्य में उतना न हो।" थोड़ी देर मौन रहकर फिर बोली, "अभी वे वही रह जाने की बात सोचते हैं। पर उनका मन बदल सकता है ? इसके अलावा आपके लिए संगीता है, अनुज है। उनके प्रति और स्वयं अपने प्रति फर्ज निभाना है। और मैं भी हूं, मेरी बेटी भी है।"

यही प्रथम बार अमृता देवी ने मि० चौधरी को पैर छूकर प्रणाम किया और बोली, "भैया, इस छोटी बहन को देखकर तसल्ली कीजिए।" यह कहकर अमृता देवी मौन रही।

उनकी वाणी मे और चेहरे पर एक अनूठा भाव था। मि० चौधरी उठ बैठे और बोले —"बहन, तुमने जो कुछ कहा, सब समझता हूं। लेकिन मन नहीं मानता। जिसके बगल में आकर खड़े होने का दिन गिनता हूं…"

वे हठात् रुके। लगा वे खुद को संयत करने का प्रयत्न कर रहे हैं।

"मेरी तरह आप लोग तो बदनसीब नहीं हैं। मां को सहारा मानकर गुजर कर रही थी। मैं अपने पैर पर खड़ी हो सकूं, उससे पहले ही वे चल बसी। उसके बाद एक-एक कर"" सब कुछ तो जानते हैं। इस संसार में हम परीक्षा देने आए हैं। हमें हर परीक्षा मे उत्तीर्ण होना है, बहन! हम औरों की तरह तो हैं नही। हम उनकी प्रिय सन्तान है। मैं मानती हूं, विश्वास करती हू।"

रिण आखें फाड़कर मा की बातें सुन रही थी और सोच रही थी कि म ाज का दिया हुआ 'अमृता' नाम सार्थक है।

ऐसा प्रतीत होता था मानों मा की बातें बहुत दूर से तैरती हुई आ रही हैं। यह नित्य की दुनिया नही थी।

अमृता देवी की बातो ने वास्तव में पति-पत्नी के मन में शान्ति का लेप चढा दिया। उन लोगो की अस्थिरता धीरे-धीरे थम गई। दु:खी परिवेश में भी स्थिनिशीलता आई।

आखो के इशारे से संगीता को अनुज और बोधि को बगल के कमरे में ले जाने को बोले। रिण भी उठ गई।

अमृता देवी ने चौधरी दम्पति से अपने जीवन की बातें, उस दिन कृष्ण को कितने निकट से अनुभव किया था आदि, तरह-तरह की घटनाएं, सुख-दु:ख आदि की बातें बतानी शुरू की।

दुनिया की बहुत-सी बातें, जो उन्हे मालूम है, बहुत ही कम लोगो को जानने की सुविधा मिलती है। अधिकाश लोगों को अपने ही जीवन की अभिज्ञता नही रहती है। अमृता देवी अनेक सामाजिक कामों से जुडी हैं।

इसके सिवा रामकृष्ण आश्रम के साथ बचपन से ही ओत-प्रोत हैं। अतएव मानव जीवन के दुखों को ही ज्यादातर जानने अं :देखने का मौका मि ा है।

"मालूम है अमृता, आदमी सोचता कुछ है, पर होता है कुछ और। उसी से हमें दुख होता है। वही हमें नेस्तनाबूद कर देता है।

"वही तो ठीक है। पर अभी आपात दृष्टि से जो मन को खटकता है, दुखदाई प्रतीत होता है, हो सकता है बाद में उसी से कुछ अच्छी चीजें मिल सकती हैं। फिर आपके मन का दरार इस प्रकार भर जाएगा कि आज के इस आघात का कोई निशान ही नहीं रहेगा। रहेगी केवल "एक यादगार।"

उन्नीस

बाहर से मोटर की आवाज आई।

"इस समय रात में कौन है?"

"मैं देखती हूं।" अमृता देवी ने बाहर आकर देखा कि नील उन्हें उनके यहां न पाकर सी॰ा यहां आया है। वह जानता है कि वे लोग ज्यादातर इसी घर में आते हैं।

"आप लोग अचानक यहां? सभी अच्छे तो हैं?"

"हां। तुम मेरे साथ आओ।"

रिण आदि गंभीर होकर जिस कमरे में बैठे थे, नील को वहीं बिठाकर वह दूसरे कमरे में लौट आई।

"नील आया न? तुम्हारे घर उसके खाने की बात थी। इस प्रकार हाथ-पैर मोड़कर बैठने से काम नहीं चलेगा। तुम लोगों का खाना•••।"

उन्हें बीच में ही रोककर अमृता देवी बोली—"नहीं, बहन! आपको घबराने की जरूरत नहीं। हम क्या आपके पराये हैं?"

"नहीं, यह बात नहीं है। मगर नील और बोधि यहीं हैं।"

"मैं ,रिण को नील के साथ अपने फ्लैट में भेज देती हूं। सभी रसोई बनी हुई है। अधिक मात्रा में बना ली थी। सोचा था, कल काम पर जाते

वक्त आप लोगों को देते जाऊंगी।"

उस दिन सबने एक साथ खाना खाया। तनावपूर्ण परिवेश था। आदमी का मन क्या सहज में शान्त होता है ? अन्यथा शान्ति पाता है ?

रात में नील और अपनी बेटी के साथ अमृता अपने घर लौट आई। खासकर अमृता देवी क्लान्त दिखाई पड़ती थी। अपने दुख से बढ़कर अपने स्वजनों के दुख से वे अधिक कातर हो उठती हैं। अपनी मां से उन्हें स्थिर चित्त प्राप्त हुआ है, और सैकड़ों दुखों के बावजूद जो उन्हें संचालित कर रहा है, वह चित्त तो वे किसी को नहीं दे सकती।

इसीलिए असहाय की तरह सान्त्वना देती हैं। जानती हैं, समय के सिवा वास्तविक सान्त्वना हो नहीं सकती।

"अम्मी, तुम सो जाओ! मैं सभी दरवाजे-खिड़कियां देखकर सोऊंगी। काफी परेशान मालूम पड़ती हो ?"

"ठीक कहती हो। मैं सोती हूं। पर मालूम है, नींद आसानी से नहीं आएगी।"

"तुम इतना व्याकुल क्यों होती हो ? तुम तो काफी धीर हो।"

"उनका दुःख मेरे कलेजे को सालता है।"

"मैं समझ नहीं पाती हूं, जो मां-बाप इतना अधिक करते हैं, उन्हें ये लड़के-लड़कियां दुख क्यों कर देते हैं ? ये भी किसी दिन मां-बाप बनेंगे और ऐसा दुख भोगेंगे।"

मां की बगल में सोई रिण उनका हाथ पकड़कर बहुत सारी अनर्गल बातें किए जा रही थी।

अमृता देवी छोटा-सा उत्तर देतीं। बेटी तू सो जा। सवेरे उठकर कॉलेज जाएगी। इसके अलावा ट्यूशन भी है। वे बोल आई हैं कि कुछ दिनों की छुट्टी लेंगी। कुछ दिन उनके साथ रहेंगी।

"मि० और मिसेज चौधरी के लिए कुछ परिवर्तन की आवश्यकता है।" नील ने एक दिन बताया, "मन में इस दुःखद वेदना का भार लिए एक ही परिवेश में वे लोग मन की स्वस्थता लौटा नहीं पा रहे हैं।"

सबने सहमति दी।

"बताओ, क्या किया जाय ?" चिन्तित होकर बोधि ने कहा।

इन लोगों में आपस की दूरी बहुत हद तक कम गई थी। सभी तुम पर उतर आए हैं।

"मेरे विचार से, बोधि, तुम कुछ दिनों की छुट्टी लो और इन लोगों को किसी अनदेखी जगह में ले जाओ। हाईकोर्ट बन्द हुआ ?

"नील ने ठीक ही कहा। मां और पिताजी ने भी यही लिखा है। उनके यहा'''सोचते है, जाने की बात लिखेंगे।"

"मेरे ख्याल से नवीन परिवेश अच्छा होता। तुम्हारे माता-पिता के नजदीक जाने से लड़के की आलोचना ही अधिक होगी।

काफी बहसबाजी के बाद दार्जिलिंग जाने की बात तय हुई।

गरमी के मौसम में पहाड़ या समुद्र का किनारा ही अच्छा होता है।

संगीता बोली—"पुरी जाने से सब सुविधा नही मिलेगी। काफी शान्त जगह है। लेकिन दार्जिलिंग में काफी चहल-पहल रहती है, खासकर इस समय। उन्हे मन बहलाने का मौका मिलेगा।"

"सभी मिलकर ताना-बाना बुन रहे हो, पर मेरा क्या होगा?" अनुज बोला।

"बेकार की बातें करते हो।"

"ऐसा नही है, बहन ! ठीक ही कहता हूं। पिताजी, मां और मौसी की एक जोड़ी बस। दीदी और बोधि भैया की दूसरी जोड़ी। शेष बचा मैं, मैं अकेला क्या करूंगा?"

"इतनी चिन्ता क्यो ? तुमको अपनी जोड़ी वही मिल जाएगी। दोनो आखें खुली रखना, इतना काफी है।" हंसते हुए नील बोला।

"मैं उसके लिए सिरनहीं खपाता," अनुज का गला भर आया, "देखना मैं शादी ही नही करूंगा। मा-बाप की देखभाल करूंगा।"

"जीता रह बेटा !" कहते हुए बोधि ने उसकी पीठ ठोकी।

उसके बाद रिण की बात चली। वह अतिशीघ्र फाइन आर्ट्स में चित्रकारी की एक प्रदर्शनी कराएगी। इसीलिए यह समय वह कदापि नष्ट नही कर सकती। बहुत-सी तस्वीरें बनानी बाकी है।

यही तय हुआ। रिण कलकत्ते मे ही ठहर जाएगी। अमृता देवी उनके साथ दार्जिलिंग चली गई। ऐसी परिस्थिति में चौधरी जी के साथ रहना

विशेष जरूरी था।

मकान मालिक पत्नी सहित एक तल्ले में रहते हैं। उन्होंने ही जरूरत पड़ने पर रिण की देखभाल करने की प्रतिश्रुति अमृता देवी को दी।

"मां भी गजब है। मेरी देखभाल कौन करेगा। मैं खुद ही सबकी देखभाल कर सकती हूं," रिण बोली।

रिण की बातों को नजरअन्दाज करती हुई अमृता देवी ने नील से भी यही कहा था।

एक दिन सब ट्रेन में बिठाकर रिण और नील घर वापस आए। नील अनुभव कर रहा था कि यद्यपि रिण मुझसे कुछ नहीं बोलती, फिर भी मां के चले जाने पर वह बेहाल हो गई है। लौटते वक्त बोला—"चलो, होटल से ही खाना खरीद लें। घर वापस जाने पर गरम करके खा लिया जायगा।"

छोटा-सा जवाब दिया रिण ने—"अच्छी बात है।"

अगर कहा जाय तो मां को छोड़कर वह प्रथम बार अकेली रह रही है। घर मे काफी अकेलापन महसूस कर रही थी। उस दिन बातचीत वैसी जमी नहीं। नील ने अनुभव किया, वह अकेली रहना चाहती है। अतएव दूसरे दिन रात में आने की बात बताकर चला गया।

दिन भर काम मे व्यस्त रहने के बावजूद रोज रात को वे एक साथ खाना खाते। कभी घर में, कभी बाहर। अन्तहीन बातचीत चलती।

नील के साथ बातचीत करने मे रिण को बहुत अच्छा लगता है। उनका दिन खुशी से बीतने लगा।

रिण ने गौर किया कि डाक्टर होने के बावजूद नील चित्र जगत से पूरा वाकिफ है। उसे तो यह मालूम नहीं था कि उसे सुहाने के लिए ही उसने इन विषयों का काफी अध्ययन किया है और कर भी रहा है। रिण को भी रोग और रोगी के बारे में जानने का वैसा ही आग्रह था।

एक दिन दोनों बोटानिकल उद्यान गए। रिण ने ही कहा था—"तुम किसी दिन छुट्टी नहीं ले सकते? दोनों मिलकर टहलेंगे।"

"अच्छी बात है। न होगा तो मैं अपने एक दोस्त डॉक्टर को जरूरत पड़ने पर मेरे रोगियों का भी भार लेने को कह आऊंगा। शायद इसकी

ज़रूरत तो नहीं पड़ेगी। अभी कोई सीरियस केस नही है।

काफी घूम-घामकर वे एक नामी विशाल वट वृक्ष के नीचे जा बैठे।

नील आज तय करके आया था कि उस बात को चलाएगा। रिण को वह प्यार करने लगा है। काफ़ी दिनों से हर प्रकार उसको परखा है और स्वयं की भी परीक्षा ली है। वह समझ चुका है, ऐसा अकस्मात नहीं हुआ है। वह प्रेम गहरा है।

किसी भी दिन नील लड़कियों के प्रति आग्रही नही था। उसकी मां प्रायः कहती, "आखिरकार क्या लड़का साधु हो जाएगा? डाक्टर और नर्सों के बारे में तो बहुत कुछ सुना करती हूं, पर नील को देखकर आश्चर्य होता है। बहुत उदासीन है। विलायत में भी बहुत दिनों तक रह आया है। पर कोई हेर-फेर नही।"

मा-बाप ने पूछा—"अब तो शादी करोगे?"

"नही, इच्छा नही है।"

"तुम्हे जो लड़की पसन्द आए, उससे?"

एक ही जवाब मिला—"पसन्द, ना पसन्द की कोई बात नही। इच्छा नही है।"

छोटा भाई वकालत पास कर भागलपुर के अपने पैतृक मकान में रहने हुए वहीं अपने पिता के जूनियर की हैसियत से वकालत करता है।

नील ने कहा था—"तुम लोग भानु की शादी करा दो।"

आखिरकार हुआ भी वही। छोटे भाई की शादी हो गई। एक लड़का भी हुआ। उसी आदमी का मन आज कितना बदल गया है।

रिण की अपेक्षा वह उम्र में थोड़ा बड़ा होगा। लगता है आठ-नौ वर्ष होंगे। मन में संकोच होता है। फिर सोचा, उसे आपत्ति नही भी हो सकती है। काफी दिनों तक इस बारे में सोचा, और फिर पैर मोड़ लिया है।

आज बोल ही बैठा—"रिन, एक बात कहना चाहता हूं।"

रिण का कलेजा धड़कने लगा। उसके मन की दुर्बलता का पता क्या नील को चल गया है? रिण उसे पसन्द है यह तो साफ जाहिर होता है। रोज उसके नजदीक आ जाता है। अन्य दोस्तों के पास बहुत कम जाता है। काफी दिन हो गए। महीने के बाद शायद वर्ष भी गुजरने

वाला है।

इसी के चलते संगीता कई बार मजाक कर चुकी है,—"भई, एक बार हां कह दो न, दोनो एक ही साथ बंध जाएंगे।"

"तुम दोनो की गाठ तो बध चुकी है। मैं भूलती रहना चाहती हूं।"

फिर कभी कहती—"देखो, शादी करना मेरे लिए संभव नही है। किसी दिन मौका मिलने पर तुम्हे सब बताऊंगी।"

ऐसा कहते-कहते उसके चेहरे पर दुःख की रेखा खिंच गई है। अतएव संगीता ने धीरे-धीरे मजाक करना छोड़ दिया। वह समझ नही पाती, उसकी सहेली को ऐसी कौन-सी बात कहना है, जिसका समय अभी नही आया है।

नील की बात सुनकर उसका मन चंचल हो उठा। अब क्या होगा? यह दोस्ती टूट जाने पर उन दोनों को, अर्थात् उसे और मां दोनो को, काफी कष्ट होगा।

पर कोई चारा नही। उसे कठोर होना ही होगा। मां को वह किसी भी तरह कही से भी कोई आघात नही दे सकती।

"मैं तुमसे एक बात कहना चाहता हूं रिण! मेरी बात सुनोगी नही?"

थोड़ी देर मौन रहकर रिण बोली, "अच्छी बात है, बताओ। तुम तो बहुत-सी बातें कहते हो। आज अचानक इस प्रकार क्यों पूछते हो?"

"यह एक खास बात है।"

"फिर रहने दो। विशेष बात विशेष व्यक्ति के लिए ही सुरक्षित रहने दो। मैं अति साधारण हूं, मेरे हिस्से में साधारण बात ही रहे।"

रिण की भाव-भंगी से नील को शायद थोड़ा आघात लगा। थोड़ी देर चुप रहा, "ठीक है, किसी और दिन कहूंगा।"

रिण नि.श्वास छोड़कर बची, "चलो नील, आज हम लोग अब लौट चलें। शाम हो आई है। काफी रास्ता तय, करना है। पूरा रास्ता तुम्हें अकेले ही ड्राइव करना है। मैं भी गाड़ी चलाना सीख लूं कैसा ख्याल है?"

नील समझ गया कि रिण के मन मे जरूर कोई काटा है।

उसकी उम्र?

दूसरा और कोई है ?

उन लोगों के साथ इतने दिनों से मिलने-जुलने के बाद वह अच्छी तरह समझ गया है कि उसके जीवन मे और कोई पुरुष नहीं है। और अगर उग्र रुकावट होती है तो उसका सान्निध्य अधिक समय तक नही टिकता।

वह खूब समझता है कि रिण उसे पसन्द करती है। अगर ऐसा नही होता तो दिन पर दिन नील के साथ बातचीत कर गुजारती है। जाते वक्त कहती है—"कल फिर आना।"

दिन के अन्त में वह जिस प्रकार रिण के निकट जाने के लिए छटपटाने लगता है, शायद उसी प्रकार रिण भी उसके लिए बाट जोहती है।

इसके बाद कई दिनों तक रिण ने नील को आने के लिए मना कर दिया। नहीं रहने दो। आज मत आना नील। चित्र बनाने के लिए कई दिनों तक व्यस्त रहना पड़ेगा। शेष सभी चित्र सात दिनों में पूरा करना है। अम्मी का पत्र मिला। वे लोग सात दिनों में आ रहे हैं।"

"उनकी छुट्टियां इतनी जल्दी खत्म हो गई ?"

"नहीं। वे और भी पांच-छः दिनों तक रह सकते थे, पर मौसा वापस आना चाहते है। कोर्ट खुलने के साथ ही कुछ बड़े-बड़े केसों का अध्ययन करना होगा।"

"आनन्द के दिन बहुत जल्द गुजर जाते हैं।"

"सचमुच, हमारे दिन भी गुजरने को आए।"

"आज आने के लिए मना क्यो करती हो, रिण ?"

"कोई चारा नही है, नील। पागल की भांति पूरा दिन खटना पड़ेगा। मां के वापस आने पर इतना समय नहीं मिलेगा। मेरा कॉलेज भी खुलने वाला है, प्लीज बुरा मत मानो।"

"सावधान रहना। कल फोन करूंगा।"

नील ने फोन रख दिया, पर तब भी रिण के हाथ में रिसीवर अटका था। मना करके दिल मसोसने लगा।

चित्रांकन की बात तो बहाना मात्र थी।

यों भी उसे शाम को कुछ घंटे विश्राम की जरूरत पड़ती है। उसका

चित्रांकन तो यों पूरा होने को हो आया है।

बहुत देर तक चुपचाप बैठी रही। क्या वह डाक्टर चटर्जी को इस प्रकार अलग कर पाएगी ? उसके बिना जिन्दगी कैसी रहेगी ?

जब मां को मालूम होगा तब उसे क्या जवाब देगी ? वह खूब समझती है, उसे पाकर मां का मन काफी भर गया है। लगता है उनके जीवन मे उसकी बड़ी जरूरत है।

आज वह क्या करे ? तीन-चार दिनों तक वह नील से मुंह मोड़े रही। इस पर उसने काफी सोचा। कभी सोचती, सब बता देने से कैसा रहेगा ? अगर वह वास्तव में उसे प्यार करता है तो सब कुछ जानने के बाद भी उसे ग्रहण कर सकता है, जिस प्रकार उसके पिता ने उसकी मां को किया था।

अगर वह सचमुच प्यार करता है तो अपने प्रिय जनों के लिए वह त्याग कर सकता है। इतने दिनों तक लड़कियां जो करती आई हैं अथवा कर रही हैं, वही तो वह उसे करने को कहेगी। उससे अधिक तो और कुछ नहीं।

तब हां, नया कुछ करना चाहे तो रुकावट काफी है, क्या वह इसे समझता नहीं ? इतना होने पर भी क्या यह किसी दिन संभव नहीं हो सकता ? कोई इसे सिर झुकाकर स्वीकार नहीं करेगा ? किसी को नई राह पर पैर तो बढ़ाना ही है। इसके अलावा वह निरुपाय है। इस पथ के सिवा उसके लिए कोई पथ खुला नहीं है। अगर कोई उसका हाथ थामना चाहे तो उसे उसी की राह पर चलना पड़ेगा। कभी सोचती, नील को यह सब बताने की जरूरत ही क्या है ? उसे लड़कियों की कमी नहीं रहेगी।

हां, कुछ दिन कष्ट होगा। फिर उसके जीवन में किसी नई लड़की का आविर्भाव होगा।

वह अपने बारे में नहीं सोचती। पेरिस जाने के पहले अपनी मां से सारी बातें सुनने के बाद उसने अपने जीवन की गति निर्धारित कर ली थी। इन वर्षों में उसने अपने मन को दूसरी ही तरह से गढ़ लिया है।

विदेशों मे काफी लोग उसके अति निकट आना चाहते थे, आग्रह सहित, प्यार के जरिये, आन्तरिकता के साथ। पर वह अटल, अडिग रही।

वह नील को अस्वीकार कर सकेगी ? इतना आत्मबल उसमें है ? यों व्यथा वह ज़रूर पाएगी, फिर उस पर विजय भी पाएगी। जीवन में उसे बहुत कुछ करना है।

गृहस्थ जीवन को इस प्रकार अपनाये बिना भी मनुष्य अच्छी तरह चल सकता है तथा देश और देशवासियों को अनेक महत् चीज़ें दे जाता है—ऐसा ही उदाहरण वह विदेशो मे देख आई है। शादी किये बगैर भी खुशी से जीता है।

मगर अम्मी ?

जीवन से उसे काफी लगाव हो गया है। उसके सामने एक नई दिशा खुल गई है। उल्लास सहित वह उसके साथ बहुत-सी जगहों में जाती है। अम्मी के चेहरे पर हंसी विराजती है। लगता है वह आयेगा, मां इसी प्रतीक्षा मे रहती है।

नील को बिलगा देने पर, अथवा नील यदि खुद बिलग जाए तो मां को भी काफी व्यथा होगी। वे दोनों कमसिन हैं। वे दोनों जितना सह सकेंगे, मां के लिए इस बढ़ती उम्र मे नये तौर से किसी आघात को सहना क्या संभव हो सकेगा ?

उसकी आंखों के सामने अंधेरा छा गया। किधर जाए ? क्या करे ?

"हे भगवान, बताओ, तुमने मुझे इस समस्या मे क्यों फंसाया ? इसमें दया-माया नाम की कोई चीज़ है ही नहीं ?"

मां-बेटी के दिन खुशी से गुज़र रहे थे। बीच में नील को ला पटकने की क्या ज़रूरत थी ? वह शादीशुदा भी हो सकता था। वह अन्य दस डॉक्टरों की तरह भी हो सकता था। उनके बीच केवल रोगी और डॉक्टर का ही रिश्ता रहता।

फिर सुख का, आनन्द का, जीवन में नये स्वाद का वह एक वर्ष उनकी ज़िन्दगी मे कदापि नही आता।

बीस

नाना चिन्ताओं से उसका सिर ठनकने लगा। कब सो गई कुछ पता नहीं चला। टेलीफोन की आवाज से उसकी नींद खुली।

"हलो, क्या कर रही थी? कहां थी? तुम्हारा गला भारी क्यों लगता है? तबीयत ठीक तो है?

"ठहरो। इतने सारे प्रश्नों का जवाब एक साथ कैसे दूं? पहला—सो गई थी। दूसरा—इसीलिए फोन रिसीव करने में देर हुई। तीसरा—इसीलिए हाल बेहाल है। चौथा—तबीयत काफी अच्छी है।"

"यही तुम्हारी चित्रकारी चल रही है? इधर मैं सज्जन की भांति चुपचाप दिन गुज़ार रहा हूं। रिण चित्र बना रही है, रिण की प्रदर्शनी है। कुछ भी हो, मैं *आज शाम, अर्थात् डॉक्टरों की शाम को* जरूर आ रहा हूं।"

फोन में ही हहा कर रिण की हंसी गूंज उठी।

"इसमें इतने हंसने की क्या बात है?"

"हुआ नहीं? क्या बताया डॉक्टर की शाम न? एक नयी बात का *आविष्कार हुआ।"*

रिण की हंसी भरी आवाज से डॉक्टर का मन बढ़ा।

"फिर यही ठीक रहा। अब फोन रख दो। न मालूम कब मन बदल जाए। कलाकार की बात ठहरी।"

"तुमने ठीक नहीं कहा। मैंने सहमति कब दी, जिसे बदलनी पड़ेगी?"

"यह क्या? आने को मना करती हो?"

आवाज भारी सुनाई पड़ी। लगा, गला भर आया है। रिण को आघात-सा लगा। वह उसके दिल को दुखाना नहीं चाहती है।

शीघ्र बोली—"प्लीज, फोन मत रखना। नाराज हो गए?"

"नहीं सोच रहा था—तुम्हारी मां के रहते ऐसा नहीं होता।"

मां की चर्चा चलाते ही रिण घबड़ा गई। वास्तव में उसकी मां नील को बहुत स्नेह करती है। मां को इस प्रकार आघात देने का उसे अधिकार ही क्या है?

"ठीक है। आना। पर मालूम है नील, बहुत थक गई हूं। जल्दी सो जाऊंगी। खाना बाहर ही खा लिया जाएगा। कोई गम्भीर आलोचना एकदम नहीं।"

डॉक्टर चटर्जी की मानसिक अवस्था दरअसल असुविधाजनक थी? कई दिनों से रिण को न देखने, उसकी बातचीत न सुनने के कारण वह अपने को और रोक नहीं पा रहा था। अतएव उसने जो कुछ कहा वही मान गया। कम से कम नजरों से देख तो पाएगा।

उस दिन की शाम हंसी-खुशी से बीती। इतने दिनों के बाद मुलाकात होने के कारण दोनों की बातचीत मे प्रफुल्लता और दोनों के भाव में ताजगी थी।

रिण का मन हलका था—कोई बात नहीं उठेगी। नील उसकी बात के खिलाफ नहीं जाएगा।

"कितना सुन्दर चित्र बनाती हो तुम? पेरिस जाकर तुम्हारा सीखना सार्थक हुआ।"

"मैं ठीक ऐसा नहीं सोचती, नील! वहां जाकर मैंने काफी देखा है, सीखा है। केवल चित्रकारी नहीं, आज मैं जो कुछ हूं वैसा बन सकी हूं। पर सही राह मुझे अपने देश ने दिखाया है। इस रस-रंग पूर्ण देश मे जो सुन्दरता फैली हुई है, वह अन्यत्र मैं कहां पाऊंगी? लेकिन आखों को खोलने का श्रेय विदेश और विदेशी शिक्षा का ही है।"

"तुमने ठीक कहा, रिण। अजन्ता की चित्रकारी हज़ार वर्ष पहले की है। वह हमें याद दिलाती है कि इस विद्या में हम अग्रणी थे, इसमे कोई संदेह नहीं। रहने दो ये बड़ी-बड़ी बातें। मैं अपना वादा तोड़ूंगा नहीं। इन दिनों क्या बनाई हो, वही दिखाओ।"

"वाह, मैं वह क्यों दिखाऊं? उसी खास दिन सब एक साथ देख लेना।"

"कह सकती थी, उसी खास दिन सबके साथ धक्कम-धुक्की करके

देखना। तुम कौन होते हो जो सबसे पहले देखोगे ?"

सुनकर रिण हंसी—मैंने इस रूप में नहीं कहा। सभी कलाकार अपनी कला को पूर्ण रूप में दिखाना चाहते हैं। यहां तक कि आधा ऑपरेशन करके कोई डॉक्टर किसी को दिखा सकता है ? सब कुछ पूरा कर लेने के बाद तृप्त मन से कहता है—कोई चिन्ता नहीं, सब करीने से हुआ है।

"अरे, वाह ! हमारा ऑपरेशन और अपनी चित्रकारी दोनों को एक पलड़े पर रख दिया। हजार सिर धुनने पर भी मेरे दिमाग में ऐसी तुलना नहीं आती। लो, चुप्पी लगा लेता हूं।"

उसकी बातचीत के ढंग से काफी दिनों के बाद रिण दिल खोलकर हंसी थी। दोनों एक होटल में जा घुसे। चीनी होटल में।

"वे जल्दी वापस आ रहे हैं न ?"

"अम्मी ने तो यही लिखा है। और कुछ दिनों तक रहने से अच्छा रहता। मौसा-मौसी दोनों काफी स्वस्थ हो चुके हैं। लगता है मुझे छोड़कर अम्मी को भी रहना अच्छा नहीं लगता है। उनके आने में ही कुशल है। मुझे भी अकेला अच्छा नहीं लगता। न मालूम कौन कब माया तुड़ाकर चला जाए। इस समय जितना संभव हो सके सान्निध्य संचय कर लूं।"

नील को रिण के चेहरे पर विषाद की छाया दिखाई पड़ी।

वह तुरन्त बोला—"ऐसा क्यों सोचती हो ? उनकी उम्र ही कितनी है ?"

"पिताजी की ही क्या उम्र थी ? बता सकते हो जीवन भर अम्मी को एक के बाद दूसरा दुख क्यों उठाना पड़ा ? देवी कैसी होती हैं मालूम नहीं। वे लोग मेरी मा से भी अच्छी हो सकती है ?"

"तुम इतनी चिन्ता क्यों करती हो रिण ? मैं कहता हू, वे बहुत दिन तक तुम्हारी बगल में रहेंगी और तुम हमेशा के लिए रिन-रिन कर उनके मन में आनन्द का संचार करोगी।"

रिण अपलक दृष्टि से उसकी ओर निहारती रही।

उसका हाथ हिलाते हुए नील बोला—"तुम्हें हो क्या गया ? इस तरह

निहार कर क्या देखती हो ?"

"मैं सोचती हूं, तुम किस प्रकार पिताजी की बात दुहरा गए ?"

"क्यों ?"

"मेरे पिताजी ने ही मेरा नाम रखा था, और यही बात बोले थे। लेकिन, उनके जीवन में यह नहीं घटा। मा के जीवन मे मैं वास्तव में वैसा कर सकूं, यही मेरी एकमात्र कामना है। अपने पिता की इच्छा पूरी करनी होगी। दौलत नहीं, मान नहीं, मैं केवल यही चाहती हूं।"

"वही होगा, देखना" नील ने कहा।

तब तक जोर-शोर से गाना-बजाना आरम्भ हो चुका था।

"इस शोरगुल में बैठा नहीं जा सकता। चलो, घर चलें।"

"अच्छा चलो।"

दोनों रिण के फ्लैट मे पहुंचे। इसके बाद रिण दो दिनों तक निर्विघ्न चित्र बनाती रही। सोचा था इन दो दिनों में पूरा कर लेगी। फिर भी हाथ मे एक महीना रहेगा। वह सिर्फ फिनिशिंग टच के लिए रहेगा।

एक तल्ले पर ही खाना खा आई। सब काम पूरा कर लेने के बाद रात में मन हलका लग रहा था। तय किया था रात को खाने के बाद आराम से सोएगी। कई दिनों तक रात में जागकर चित्र बनाया था। खाना खाने के बाद जल्दी आकर सो पड़ी।

पर आश्चर्य। नींद कहा ?

रात भर वह एक पल भी सो नही सकी। तरह-तरह की चिन्ताएं उसके दिमाग मे आकर भीड़ करने लगी।

जिस बहाने उसने नील को दूर रखा था, उसके मुंह को बद किया था आखिरकार वह शेष हुआ। अब उसे नील की उसी खास बात का सामना करना पड़ेगा।

उस खास बात को वह काफी अच्छी तरह जानती है। फिर सोचा, अम्मी के लौट आने तक अगर वह किसी बहाने इस बात को टालती रहे तो कैसा रहे ? फिर ख्याल आया, इस प्रकार कितने दिनो तक टाला जा सकता है ? ऐसा करने से खुद को तकलीफ होती है, और उधर नील तो कष्ट पाता ही है। जो होना है, वह हो ले।

कष्ट ही पाना है तो पा लेगी।

यह ठीक है कि नील को इस प्रकार पकड़कर रखा नही जा सकता। सभी जानकारी के बाद अगर नील खिसक जाए तो वह भी ठीक रहेगा। फिर भी उसके निकट लौट आने का पथ शायद हमेशा के लिए खुला रहेगा।

नील उसके दिमाग मे गहरी रेखापात कर रहा है। यह किसी दिन मिट भी सकता है, ऐसा प्रतीत नही होता। जब तक जिन्दा रहेगी तब तक उसके मन का स्रोत उसी तरफ चक्कर खाता रहेगा। एकाएक उसने सीने मे दर्द का अनुभव किया। सीना दबा कर वह लेटी रही और इधर आखो से आसू की धारा बह चली। न मालूम वह कब शान्त होकर सो गई।

अस्पताल पहुचकर नील ने फोन किया। जैसे भी हो आज मुलाकात ज़रूर करेगा। फोन की घंटी बजती रही। कोई जवाब नहीं। दो-तीन बार कोशिश करने पर भी जब जवाब नही मिला तो वह अपने को स्थिर नहीं रख सका। अपने एक सहयोगी से तबीयत खराब रहने का बहाना बनाकर रिण के यहा चल पडा।

भीतर से दरवाजा बन्द था, अर्थात् बाहर नही गई है। जाने की बात भी नही थी।

कई बार जोर-जोर से घंटी बजाने के पश्चात् रिण ने अलसाई आंखों से दरवाजा खोला। रात के कपड़े पहने थी। केश बिखरे हुए थे। साफ जाहिर होता था कि अभी तुरन्त खाट से उठकर आई है।

"यह क्या रिण, अब तक तुम सो रही थी? तुम्हारी तबीयत ठीक तो है?" कहते हुए डॉ० चटर्जी कमरे मे घुसे और रिण के सिर पर हाथ रखा।

"नही, बुखार तो नहीं। तुम्हारा चेहरा इतना उतरा हुआ क्यों है?"

उस वक्त रिण स्वप्न देख रही थी—नील मुह फुलाकर चला जा रहा है। उसके लिए वैसा करना उचित नही होगा। ठीक उसी वक्त नील को सामने पाकर हकबका गई थी।

"क्या हुआ? इस तरह देख क्यों रही हो, रिण? मुझे बताओ?"

"तुम गए तो नही?"

"वाह री, मैं तो यही आया। अस्पताल से बार-बार फोन करने पर भी जब कोई जवाब नही मिला तब सीधा यही चला आया। मेहनत करते-करते तुम्हारा सिर गर्म हो गया है, कुछ दिनो तक तुम्हें कुछ करने नही दूगा।"

तब तक रिण प्रकृतिस्थ हो चुकी थी। अब बोध हुआ उसने स्वप्न देखा था।

"जाओ, रिण ! हाथ-मुह धो डालो। तब तक कॉफी और अडा तैयार करता हूं। खूब भूख लगी है शायद ? अब तक कुछ खाया नही !"

नील रसोईघर मे चला गया।

कॉफी की चुस्की लेते हुए नील बोला—"रिण, तुम लेटी-लेटी किताब पढ़ो, तुम्हारी फ्रिज मे मैने हिलसा मछली का टुकड़ा देखा है। एक चुस्त बुद्धि दिमाग में आई है। मैं चटपट खिचड़ी और हिलसा मछली की भाजी बना लेता हू। बोल आया हू,दिन भर काम करने नही जाऊगा। अगर कोई विशेष अर्जण्ट काम पडा तो इस घर का फोन नम्बर दे आया हू। क्या यह अकल का काम नही हुआ ?"

अब त. रिण स्वाभाविक हो चुकी थी, नील को अपने निकट पाकर उसका मन आनन्द विभोर हो उठा था। सोचती है नील के बिना दिन कैसे कटेंगे ? फिर ख्याल आता नील तो सभी बातें मान भी ले सकता है।

"मेरी बात पसन्द नही आई ?"

"खूब अच्छी बात नही है। पर मैं जरा भी नही हिलूंगी। बहुत सुस्त अनुभव करती हू। लगता है भूख भी काफी लगेगी।"

"तुम्हे एक काम करना पड़ेगा।"

"नही भई, मुझसे कुछ नही होगा।"

"नीचे जाकर कह आओ कि आज तुम खाने नही जाओगी।"

"धत्तेरे की, मैं भल ही गई थी।"

दौड़ती हुई रिण नीचे उतर गई। रसोई घर में एक बार भाक आई और आकर लम्बी तान ली। थकावट अनुभव कर रही है। रात भर नींद नही आई थी।

इसके अलावा उसके दिल को कोई गवाही दे रहा था कि आज समस्त

चिन्ताएं मिट जाएंगी।

"मेम साहिबा, उठिए। मेज पर खाना सजा है।"

आंखें खोलकर रिण मुस्कराई।

"अपने गुलाम का सलाम लें, हुजूर!" कहते हुए नील ने सिर झुकाकर एक लम्बा सलाम लगाया।

रसोई घर मे पहुंचकर रिण दंग रह गई। खाने की चीजों से मेज भरी थी—मछली, मांस, मिठाई, चटनी, तरकारी सभी मौजूद थी। इसके अलावा खिचड़ी, मछली की भाजी और आलूदम भी था।

"माजरा क्या है? पर फ्रिज में मांस तो नहीं था। और न ऐसी मछली ही थी।"

"जादू की छड़ी से एक से अनेक हो गए।"

"अपनी बकवास बन्द करो।"

"दरअसल बात यह है कि मैं आया हूं और रसोई बना रहा हूं—यह जानकर नीचे तल्ले की मौसी ने हम दोनों के लिए खाना बनाकर भेज दिया है।"

"मैं तो मना कर आई थी।"

"मन नहीं माना होगा। सोचा इतने बड़े डॉक्टर का सम्मान तो रखना ही पड़ेगा। इस लड़की को तो इतनी भी बुद्धि नहीं है या होती तो और बात थी।" रुक कर फिर बोला—"यह क्या, इतना सुनने के बावजूद चुप हो। लक्षण तो अच्छे नहीं दीखते।"

"मुझे कैसा लग रहा है।"

"लगने की कोई बात नहीं। मैंने सब प्लान ठीक कर लिया है। नीचे की मछली, मांस, तरकारी सब रात के लिए फ्रिज मे डाल देता हूं। और एक मिठाई भी। इस वक्त मेरी रसोई चलेगी। साथ में चटनी और मिठाई भी रहेगी।"

"खा-पीकर दोनों सोने के कमरे में आए।"

"कल सभी आ रहे है। मेरी बात आज तुम्हें सुननी ही पड़ेगी रिण!"

इक्कीस

रिण इसी की प्रतीक्षा कर रही थी। उसे लगा, शायद इसी प्रश्न के लिए वह हर घड़ी गिन रही थी। आज इसी वक्त वह नील को सब बताएगी।

उसके जीवन का कांटा आज अपने समय के अन्तिम पल पर खड़ा है। नजर उठाकर देखा, नील एकटक उसकी ओर निहार रहा है। उसके चेहरे पर भी चिन्ता की रेखा मौजूद थी।

क्या होगा? अच्छा या बुरा? सुखमय अथवा दुखमय? कुछ भी मालूम नहीं। अपनी समस्त द्विधा दूर हटाकर नीलकंठ बोल उठा—"रिण, मैं चाहता हूं तुम मेरी बनो। मैं तुमसे शादी करना चाहता हूं, काफी दिनों से कहने को सोच रहा हूं, पर कह नहीं पाता था।"

रिण कुछ कहने जा रही थी।

पर उसे रोककर नील बोला—"पहले मुझे सब कह लेने का मौका दो। शादी की बात मैंने कभी नहीं सोची। लड़कियों के प्रति मुझे कभी आकर्षण नहीं था। सभी इसे अस्वाभाविक बताते। हो भी सकता है मैं वही था। यहां से डॉक्टरी पास कर मैं विशेषज्ञ बनने के लिए विदेश गया। वहां के परिवेश से भी मेरे मन में कोई चंचलता नहीं आई। देश वापस आने पर मेरे माता-पिता ने पकड़ा, यद्यपि वे मेरा मनोभाव जानते थे। जो कुछ भी हो, छोटे भाई की शादी कर देने को कहा। मेरी आशा त्यागकर उन्होंने भानु की शादी कर दी। मेरे छोटे भाई के दो नन्हें-मुन्ने बेटे हैं। उस ओर से माता-पिता को शान्ति मिली है। फिर भी मेरे लिए चिन्ता करते हैं। कहते हैं—जो पसन्द हो, उसी से शादी कर लो। याद रखना, सबमें हमारी सहमति है। मैं बता चुका हूं कि अगर जीवन में कभी यह घटा तो आपको जरूर बताऊंगा। इतने दिनों के बाद वही दिन आया है। तुम मेरे जीवन में आओ।" नील रुका।

निश्चल भाव से रिण को बैठा देखकर नील के चेहरे पर विषाद की

छाया पड़ी।

"बताओ रिण। मेरी उम्र अधिक है न?"

नहीं, रिण चिल्लाई। "ऐसा मत कहो, मैं तुमसे प्रेम करती हूं—नील! जीवन से भी अधिक। कभी किसी को इतना प्यार नहीं किया, पर'''ऐसा तो होने को नहीं।"

आवेग में नील ने उसका हाथ थाम लिया "मेरे सीने से पत्थर लुढ़का। हम दोनों एक दूसरे को प्यार करते हैं। अब तो कोई अड़चन नहीं रहनी चाहिए, तुम्हारी मा मुझे स्नेह करती हैं, यह मैं समझता हूं। मेरे माता-पिता सादर तुम्हें अपनाएंगे। फिर अड़चन ही क्या है?"

"बहुत-सी बातें हैं। मालूम होने पर समझोगे—ऐसा होता नहीं; हो नहीं सकता। इसीलिए मैं किसी दिन शादी नहीं करूंगी—यही मेरी प्रतिज्ञा है, तुम्हें मालूम नहीं,नील! तुम्हें अपने से अलग करने में मेरा दिल फट रहा है, फिर भी मजबूर होकर मुझे ऐसा करना पड़ रहा है। भविष्य में तुम जरूर अपने जीवन में किसी को पाओगे,जो तुम्हें शान्ति देगी। तुम्हें आनन्द देकर सराबोर कर देगी।"

"बिल्कुल नहीं, रिण! तुम्हारे सिवाय मेरा कोई दूसरा चारा नहीं है। तुम इसे गांठ बांध लो, मैं जब तक जिन्दा रहूंगा। तुम लोगों का ही होकर रहूंगा, इसमें मुझे वंचित मत करो।"

"अच्छी बात है, अब तुम यह बोले तो मैं तुमसे सब खोलकर बताती हूं, जिसे तुम कभी किसी से नहीं बताओगे।"

"मैं वादा करता हू।"

"मेरी मा, का जन्म जिनकी कोई तुलना नहीं, रहस्यावृत है।"

"मतलब"

"अधीर नहीं बनो। मैं आज तुमसे सब बताऊंगी। मद्रास के रामकृष्ण आश्रम के स्वामी जी को राह की धूल में पड़ी सात राज्यों की निधि एक माणिक मिला। मेरी दादी शारदा देवी ने उसका लालन-पालन किया। उनकी सभी बातें तुम्हें मालूम हैं।"

"उनके देवर की बेटी।"

"ऐसी बात नहीं। दुनिया की बदनामी से बचाने के लिए सबको

ऐसा ही बताया गया था। मेरी मां को भी यही मालूम था। मेरी मां जब एम० ए० में पढती थी तभी मेरी दादी का स्वर्गवास हुआ। उस समय भी मा को सच नहीं बताया गया। जब मेरे पिता शादी करने को तैयार हुए तब महाराज ने मा से सच बताया। यह जान लेने के बाद मेरी मा ने गृहस्थाश्रम से दूर रहकर जीवन-यापन करने का निश्चय किया। मेरे पिता की राह से वे अलग हो गई। हा, एक बात बताना भूल गई—महाराज ने मेरी मां को अमृत-पुत्री रूप में देखा था। इसीलिए नाम रखा था अमृता। यह सब जानते हुए भी मेरे पिता ने मेरी मा को सिर आंखो से लगा लिया था।

रिण की आंखें भर आईं।

"दोनो बड़ी शान्ति से थे। लेकिन वह सुख का संसार बिखर गया। पिताजी हमें छोडकर उस लोक को सिधारे जहा से वे कभी वापस नही आएंगे। उसके बाद की सभी घटनाएं तुम जानते ही हो।"

नील थोड़ी देर चुप रहा। उसके बाद धीरे-धीरे रिण के नजदीक खिसक आया। अपना हाथ उसके हाथ पर रखा।

"सुनो, रिण! जब तुम्हारे पिताजी ने शादी की थी तब उन्होने एक महान कार्य किया था। अधिक न सही फिर भी दिन तो कुछ बदरा ही है। और भी अग्रसर होगा। उस समय जो हुआ वह आज क्यों नहीं हो सकता? मैं सचमुच तुमसे प्यार करता हूं। तुम्हारी अवस्था अगर तुम्हारी मा की-सी होती, फिर भी तुम मेरे लिए पारसमणि होती। तुम्हारे पिता की तरह मुझे उच्चासन पर बैठने का सुयोग कहां? तुम्हारे माता-पिता दोनों ही सर्वसाधारण से काफी ऊर्ध्व मे है। इतने दिनों तक मा को देखा। ऐसा और कहीं देखने को नही मिला। शायद देखने को भी नही मिलेगा।"

रिण का मन आनन्दविभोर हो गया। सब जानने के बाद भी उसकी मां को स्नेह और श्रद्धा जताता है।

"सच, सब जानने के बावजूद मेरी मां से स्नेह करते हो? मुझे बहुत अच्छा लग रहा है।"

आनन्दातिरेक मे वह एकाएक एक कांड कर बैठी। आवेग में उसने नील को सीने से चिपका लिया।

नील धीरे-धीरे रिण का सिर सहलाने लगा।

इस छोटी-सी लड़की के मन की गंभीरता उसके मन को छू गई। उसके दिल मे इतनी वेदना छिपी है यह ऊपर से परख में नही आती।

सचमुच छिपी है।

हसोड़ और चचल लडकी। दोनो आखो से खुशी की लहर फूट पड़ती है। बातो से फुलझडी छूटती है। जीवन की आनन्दधारा-सी प्रतीत होती है। लगता है उस तरह के आघात ने इसे कभी स्पर्श ही नही किया। हा, प्रथम दिन मा के लिए व्याकुलता से पता चलता था लड़की सहज, सरल और नरम दिल की है। प्यार करने की शक्ति उसमे है। तभी तो मा को इस हद तक प्यार कर सकी है।

इसी ने पहले-पहल डॉक्टर चटर्जी को आकर्षित किया था। आज की दुनिया मे इस चीज का बहुत अभाव है। सभी अपने आप में ही स्वयं सपूर्ण है।

"मैं भी क्या कर बैठी।" लज्जित होकर कहती हुई नील को छोड़कर रिण दूर जाकर खडी हुई।

काफी देर से दोनो खिडकी के सामने खडे-खडे बातचीत कर रहे थे।

"आओ रिण, हम बैठे। काफी दिनो का अनिश्चित भाव दूर हुआ। मेरी आकांक्षा पूरी होने को है।"

रिण का दिल दहल गया। इस व्यक्ति से वह कैसे कहे—झमेला का यह अन्त नही, बल्कि शुरुआत है। उसकी बहुत-सी बातें अभी भी बाकी हैं। अभी भी बहुत-सी गलिया पार करनी हैं।

अब वह जो कुछ भी कहने जा रही है वह और भी कठिन है। एक नई राह, नई बात।

उसका हाथ थामे नील उस पथ पर अपने पैर बढा सकेगा ? उसने अपने मन मे जो कुछ तय कर लिया है, उससे वह विलग नही हो सकेगी। कारण, कई वर्षों के सोच-विचार के बाद वह इस सिद्धान्त पर पहुची है। वह जानती है, इसके लिए उसे काफी त्याग करना पडेगा। समाज की पहाड़ रूपी इस कठिन रुकावट का अतिक्रमण करना होगा। किसी भी महान परिवर्तन के लिए जो कोई भी व्यक्ति अग्रसर होता है, वह शायद इस

पाषाण कारा के इधर ही सिर तुड़ा कर शेष हो जाता है।

इस प्रकार बहुतों की शहादत के बाद दो पग आगे बढ़ने की संकरी राह दिखाई पड़ती है। उसी सुरंग पथ से जो थोड़ा बहुत प्रकाश छिटकता है, वही प्रकाश सैकड़ों व्यक्तियों का पथ-प्रदर्शन कर उन्हें आगे ले जाता है।

"क्या हुआ, रिण ! बात नहीं करती हो ?

"क्या कहूं, नील ! कहने को बहुत बाकी है। इसीलिए तो कहती थी, तुम मेरी आशा छोड़ दो। मरीचिका के पीछे दौड़ते हुए अपना जीवन दुःखमय मत बनाओ। सोच लो, मैं और लड़कियों की भांति नहीं हूं। जो हुआ नहीं, कब होगा उसका भी ठीक नहीं, मैं उसी के पीछे पड़ी हूं। उन बातों को सुनने से क्या लाभ ? उससे बेहतर है हम दोस्त ही बने रहें। तुम अपनी राह पकड़ो। याद रखो, मैं जब तक जिन्दा हूं, तुम्हें प्यार किया और तुम्हें ही प्यार करूंगी। इससे आगे बढ़ना संभव नहीं।"

नील चुपचाप उसकी ओर देखता रहा। फिर क्या हुआ ? जो कुछ कहना था, वह तो कह चुकी। अब आगा-पीछा क्यों ? आगे बढ़कर भी यह बार-बार पीछे क्यों खिसक जाती है ? यह क्यों नहीं समझती है कि उसे देने के लिए मेरे पास अदेय कुछ नहीं है ? उसके लिए वह सब कुछ कर सकता है। वह यकीन क्यों नहीं करती ?

"रिण, तुम इसे क्यों नहीं समझती हो कि मैं राह पर रहूं अथवा घर में, नजरों के सामने रहूं अथवा नजरों से ओझल, तुम चिरकाल के लिए मेरी संगिनी रहोगी। जन्म-जन्मान्तर की संगिनी। मेरे दिल की ये बातें क्या तुम्हारे दिल में नहीं गूंजती ? मेरे हृदय की व्याकुल वाणी क्या तुम्हारे कानों में नहीं पहुंचती रिण, बताओ न। तुमने कहा मुझे प्यार करती हो। मेरे लिए यही परम तृप्ति की बात है। मेरा प्यार व्यर्थ नहीं गया। मुझे इसी में संतोष है। फिर बार-बार कहता हूं —तुम अपनी बातें मुझे जानने दो, अपनी व्यथा मुझे समझने दो। बताओगी नहीं, रिण ?"

नील की बातें सुनकर रिण अपने को और रोक नहीं सकी।

"मैं बताऊंगी। तुमसे सब बताऊंगी। तुम्हारे बिलगाने के बावजूद सब कुछ बताकर मैं मुक्त होना चाहती हूं।"

"अबला लड़कियां पूर्ण रूप से अपनी सत्ता त्यागने के बाद ही लड़कों

का हाथ पकड़ सकी हैं। जहां उनका जन्म हुआ, जिन्होंने पाल-पोसकर बड़ा किया, उनके लिए वे कुछ भी नहीं रखती हैं। उनका अस्तित्व भी मिट जाता है। नवीन परिचय से परिचित होती है। पर क्यों? हमेशा यह क्यों होगा? अपनी प्रेमिका के लिए लड़के बीच-बीच में त्याग क्यों नहीं करेंगे?"

कुछ देर चुप रहकर रिण फिर बोली, "जानती हूं, पहले इसका एक बड़ा कारण था। लड़कियां शिक्षा में पिछड़ी थीं, नौकरी का दरवाजा उनके लिए बन्द था। पारिवारिक जीवन में वह सबसे बड़ा पाथेय है। पर अब? उस तरह की लायक लड़कियां अपने मां-बाप का नाम अक्षय क्यों नहीं रख सकेंगी? ऐसी अवस्था में लड़की होने पर भी किसी का मुंह स्याह नहीं होगा। लड़के-लड़कियां जब हर क्षेत्र में आगे बढ़ने की कोशिश कर रहे हैं, तो फिर सामाजिकता की ओर ही क्यों नहीं करें?"

फिर थोड़ी देर मौन रहकर रिण ने कहना शुरू किया—"खैर, बहुत कुछ एक साथ मैंने कह सुनाया। मेरा मन हल्का हुआ। अब तुम समझोगे, मेरे लिए शादी करना असम्भव क्यों है। मैं जब तक जिन्दा रहूंगी, अपने मां-बाप का नाम रोशन करती रहूंगी। जब नहीं रहूंगी, तब की बात मैं नहीं सोचती। अगर मेरा कोई भाई रहता तो शायद इतना नहीं सोचती।"

रिण रुकी। लगा, वर्तमान आबोहवा में वह काफी दूर चली गई है। क्या वह मां के निकट पहुंच गई? हो सकता है, पिता का सान्निध्य पाने की कोशिश कर रही है। सम्भव है पिता के कानों में फुस-फुसाकर कह रही है—तुम्हारी रिणरिण तुम लोगों का नाम रोशन कर रही हैरत करेगी।"

नील काफी देर तक चुप बैठा रहा।

रिण ने जो कुछ कहा, वह सर्वथा युक्तिहीन नहीं है। वास्तव में वैसा क्यों नहीं हो सकता? यह समाज पुरुष शासित है, अतः कभी लड़कियों की चिन्ता नहीं की गई। यह एक अमोघ अस्त्र है, जिसके बल पर लड़कियों को दबाए रखना सम्भव है। इसीलिए ऐसी अवस्था है। कुछ दिन पहले जर्मनी में एक कानून पास हुआ है। पदवी सर्वोपरि नहीं है। अतएव जो शादी करेंगे, वे शादी के वक्त अपनी इच्छानुसार पदवी रख सकेंगे। यहां तक कि दो पदवियां एक साथ रख सकेंगे। उसमें कुछ नहीं आता-जाता।

क्या पश्चिम ही हर काम पहले करेगा ? उसके बहुत वर्ष बाद हम उसका अनुसरण करें ? कुछ बातों में क्यों नहीं हम अग्रणी बनें ? कदम बढ़ाने पर हर ओर बढ़ाना । इसके सिवा रिण इकलौती संतान है। वह किस प्रकार अपने मा-बाप का नाम मिटा दे ? तब तो वह उपयुक्त संतान नहीं हुई।

दो रहने पर कोई बात थी। मां-बाप के लिए तो भानु है। सिर्फ यही नहीं, उसके दो लड़के भी हुए हैं। उनको आपत्ति करना अथवा मन में व्यथा पाना अन्याय होगा। उसे यह भी यकीन है कि जो कुछ ठीक है, वे उसे मान लेंगे। उसने हमेशा यही देखा है।

फिर वह रिण से सहमत क्यों न हो ? अमृता मा का तो वही एकमात्र पुत्र होगा, जिस प्रकार अमृता एकमात्र बेटी है।

रिण मन ही मन समझ रही थी, नील के लिए इन सब बातों पर राजी होना संभव नहीं होगा। पहली बात सुनकर उसके लिए राजी होना जितना आसान है, इसमें तो वैसी बात नहीं। उसमें उसे दृढ़ होना होगा। अब तक समाज में जो घटा नहीं, वही काम सबके समक्ष खुलेआम करना होगा। अप्रत्यक्ष अथवा चुपके-चुपके नहीं।

मगर रिण को तो सीधे पथ पर अडिग रहना है। उसका मन टूट जाने पर भी उसके लिए यही रास्ता है। इसी राह पर वह चलेगी।

अचानक नील की गंभीर आवाज सुनकर रिण ने चौंककर उसकी ओर देखा।

"सुनो, रिण ! तुम्हारी सभी बातें सुनकर अब तक मैं सोच रहा था। चारों ओर गौर करने के बाद मैंने अपना फर्ज तय कर लिया है।"

रिण केवल चुपचाप उसकी ओर देखती रही।

नील बोला—"पहले मन में हुआ, रिण उल्टी गंगा क्यों बहाना चाहती है ? सोचकर देखा यही ठीक है। यही उचित भी है, जिस दिन दोनों का अधिकार समान माना जाएगा, उसी दिन होगा सच्चा प्यार। उसी सत्पथ पर मैं तुम्हारे साथ चलना चाहता हूं। इस नई राह पर चलने में हम एक दूसरे की मदद करेंगे।"

पश्चिम क्षितिज मे अस्त होने के पूर्व सूर्य एकाएक चमक उठा। गुलाबी रंग ने दोनों को रग दिया। मानो प्रसन्न चित्त कहता गया—"लड़कियों की छिपी वेदना तुम लोगों ने अनुभव की है—तुम्हारी जय हो, तुम्हारी जय हो।"

●●